रत्नसागर

तुलसी साहब (हाथरस वाले) का,

जीवन चरित्र सहित

जिसमेँ

कुल रचना का भेद, बेद और शास्त्रौँ का निरूपन, युगौँ का प्रभाव, चार खानि और चौरासी लक्ष योनी का हाल, कर्मौँ का हिसाब, जीव का फँसाव उसके उबार की युक्ति, संत शरन और सतसंग की महिमा, भेषौँ की दशा इत्यादि, पूरी भाँति से दिखाया है

इलाहाबाद

बेलवेडियर स्टीम प्रिंटिंग वर्क्स में प्रकाशित हुआ

सन् १९१९

दूसरी बार] दाम ।।।ः

॥ संतबानी ॥

संतबानी पुस्तक-माला के छापने का अभिप्राय जक्त-प्रसिद्ध महात्माओं की बानी और उपदेश को जिन का लोप होता जाता है बचा लेने का है जितनी बानियाँ हमने छापी हैं उन में से बिशेष तो पहिले छपी ही नहीं थीं और जो छपी थीं सो प्रायः ऐसे छिन्न भिन्न और बेजोड़ रूप में या छेपक और त्रुटि से भरी हुई कि उन से पूरा लाभ नहीं उठ सकता था।

हमने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ हस्तलिखित दुर्लभ ग्रंथ या फुटकल शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नक़ल कराके मँगवाये। भर सक तो पूरे ग्रंथ छापे गये हैं और फुटकल शब्दों की हालत में सर्ब-साधारन के उपकारक पद चुन लिये हैं, प्रायः कोई पुस्तक बिना दो लिपियों का मुक़ाबला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी गई है और कठिन और अनूठे शब्दों के अर्थ और संकेत फुट-नोट में दे दिये हैं। जिन महात्मा की बानी है उन का जीवन-चरित्र भी साथ ही छापा गया है और जिन भक्तों और महापुरुषों के नाम किसी बानी में आये हैं उन के बृत्तांत और कौतुक संछेप से फुट-नोट में लिख दिये गये हैं।

दो अंतिम पुस्तकें इस पुस्तक-माला की अर्थात संतबानी संग्रह भाग १ [साखी] और भाग २ [शब्द] छप चुकीं जिन का नमूना देख कर महामहोपाध्याय श्री पंडित सुधाकर द्विवेदी बैकुंठ-बासी ने गद्गद होकर कहा था—"न भूतो न भविष्यति"।

एक अनूठी और अद्वितीय पुस्तक महात्माओं और बुद्धिमानों के बचनों की "लोक परलोक हितकारी" नाम की गद्य में सन् १९१९ में छपी है जिसके बिषय में श्रीमान महाराजा काशी नरेश ने लिखा है—"वह उपकारी शिक्षाओं का अचरजी संग्रह है जो सोने के तोल सस्ता है"।

पाठक महाशयों की सेवा में प्रार्थना है कि इस पुस्तक-माला के जो दोष उन की दृष्टि में आवें उन्हें हम को कृपा करके लिख भेजें जिस से वह दूसरे छापे में दूर कर दिये जावें।

प्रोप्रैटर, बेलवेडियर छापाख़ाना,

मई सन् १९१९ ई०

इलाहाबाद।

यह अनमोल ग्रंथ "रत्नसागर" हम को कृपा करके लाला सुदर्शन सिंह सेठ साहब ने हस्त-लिखित गुटका के रूप मैँ दिया। हम इस पुस्तक को खोजी और प्रेमी जनोँ के सामने छापा मैँ रख कर सेठ साहब को अनेक धन्यबाद देते हैँ जिन्होँ ने इस अनमोल और दुर्लभ रत्न को परम पुरुष पूरन धनी स्वामीजी महाराज, राधास्वामी मत के प्रकाशक के पाठ की पुस्तकोँ मैँ से निकाल कर हम को उस के छापने की इजाज़त दी।

बेलवेडियर प्रेस,

मई १९१९ इलाहाबाद।

॥ सूची पत्र ॥

तुलसी साहिब का जीवन-चरित्र

तुलसी साहिब जिनको लोग साहबजी भी कहते थे जाति के ब्राह्मण बहुत अच्छे कुल के थे। बाल अवस्था ही में इनको ऐसा तीव्र बैराग और प्रचंड भक्ति प्राप्त हुई कि घर बार छोड़ कर भेष ले लिया और अलीगढ़ ज़िला के हाथरस शहर में आकर रहे और वहीं शरीर त्याग किया। इनको गुप्त हुए साठ बरस के अनुमान हुए और देहान्त के समय उनकी अवस्था साठ बरस के क़रीब थी, इस हिसाब से उनका जन्म बिक्रमी संबत १८४५ मुताबिक़ ईसवी सन् १७८८ और देहान्त बिक्रमी संबत १९०५ मुताबिक़ ईसवी सन १८४८ में या दो एक बरस आगे पीछे ठहरता है। हाथरस में उनकी समाधि मौजूद है और बहुत से लोग वहाँ दर्शन को जाते हैं।

तुलसी साहबका कोई गुरू न था और इस बात के प्रमाण में यह कड़ी उनकी दिखलाई जाती है—

"मिलै कोइ संत फिरौं तेहि लारे"

इस में कोई संदेह नहीं कि तुलसी साहब स्वयं-संत थे जिनको गुरू धारन करने की ज़रूरत न थी लेकिन मर्जादा के लिये चाहे किसी को नाम मात्र को गुरू बना लिया हो।

तुलसी साहब अकसर हाथरस के बाहर एक कम्मल ओढ़े और हाथ में डंडा लिये दूर २ शहरों में चले जाया करते थे। जोगिया नाम के गाँव में जो हाथरस से एक मील पर है अपना सतसंग जारी किया और बहुतों को उपदेश दिया।

इन की हालत अकसर खिंचाव की रहा करती थी और ऐसे आवेश की दशा में धारा की तरह ऊँचे घाट की बानी उनके मुख से निकलती। जो कोई निकट-वर्ती सेवक उस समय पास रहा उसने जो सुना समझा लिख लिया नहीं तो वह बानी हाथ से निकल गई। इस प्रकार के अनेक शब्द उनकी शब्दावली में हैं।

तुलसी साहब के अनुयायी अब तक हज़ारों आदमी हिन्दुस्तान के शहरों में मौजूद हैं। उनके प्रसिद्ध ग्रंथ घट-रामायण, शब्दावली और रत्न सागर हैं। तुलसी साहब की घट-रामायण उनके मत के आचार्ज देवी साहब छाप चुके हैं, शब्दावली और रत्न-सागर पहिली बार बेलवेडीयर प्रेस इलाहाबाद में छपी हैं।

तुलसी साहब ने घट-रामायण में लिखा है कि आप ही गुसाईं तुलसीदास जी रामायण के ग्रंथ-करता के चोले में (अनुमान ढाई सौ बरस पहले) थे और उन्हों ने पहले घट-रामायण का ग्रंथ रचा जिस में घट का भेद दिया है और निर्गुण लखाया है परन्तु फिर ब्राह्मणों के झगड़ा करने पर उस ग्रंथ को उठा

रक्खा और समय के अनुसार दूसरी रामायण सर्गुण के रूपक में लिख डाली जो आजकल इतनी प्रचलित है ।

तुलसी साहब ने अपनी बानी में कहीं कहीं बेद कतेब कुरान पुरान राम रहीम और प्रचलित मतों का खोल कर खंडन किया है जिस से लोग उन्हें निन्दक और द्रोही समझते हैं पर यह उन की अनसमझता की बात है। तुलसी साहब के पदों के अर्थ पर ध्यान देने से स्पष्ट जान पड़ता है कि उन्हों ने किसी मत को झूठा नहीं ठहराया है बरन जहाँ तक जिस की गति है उस को साफ़ तौर पर बतला दिया है । उनका अभिप्राय केवल यह है कि इष्ट सब से ऊँचे और समस्त पिंड और ब्रह्मांड के धनियों के धनी का बाँधना चाहिये और उसी की सेवा करनी चाहिये, निर्मल चैतन्य देश के नीचे के लोकों के धनियों की भक्ति करने से परिश्रम तो उतनाही पड़ेगा और लाभ पूरा न उठेगा, अर्थात भक्त का काम अधूरा रह जायगा और वह आवागवन से न छूटेगा, देर सवेर जन्म मरन का चक्कर लगा रहेगा, क्योंकि यह लोक माया के घेर में है चाहे वह कितनी ही सूक्ष्म माया हो ।

तुलसी साहब के बिषय में कहते हैं कि जब आप सतसंग कराते थे एक गरेड़िया रामकिशुन नामी चुपके से नीचे आ बैठता था एक दिन आप को मालूम हो गया पूछा कि तुम क्यों आते हो जवाब मिला कि मुझ को आप की बानी बड़ी प्यारी लगती है इस पर तुलसी साहब ने दया करके उस को एक पुस्तक अपनी दी और कहा कि पढ़ो उसने जवाब दिया कि मैं अनपढ़ हूँ लेकिन आप के फिर आज्ञा करने पर उसने जो पुस्तक की ओर देखा तो धड़ाके से पढ़ने लगा । इसी तरह प्रसिद्ध है कि आप के गुरुमुख (शिष्य) सूरस्वामी थे जो निपट अनपढ़ और जन्म के अंधे थे उन को भी एक दिन आज्ञा की कि ग्रंथ पढ़ो और उनके उज़्र करने पर डाँटा तो सूरस्वामी की आँखों में जोति आगई और वह पढ़ने लगे ।

एक बार आप घूमते हुए किसी स्थान पर पहुँचे । वहाँ के एक धनी ने आप का बहुत आदर सत्कार किया और भोजन सामने धर कर प्रार्थना की कि मुझे दया से एक पुत्र बख़्शा जाय । तुलसी साहब ने अपना सोंटा उठाया और यह कह चलते हुए कि लड़का अपने सर्गुन इष्ट से माँग संतों की दया तो यह है कि अगर उन के दास के औलाद मौजूद भी हो तो उसे उठा लें और अपने दास को निर्बंध करें ।

यह रत्न-सागर ग्रंथ कुल रचना के भेद का एक अनमोल भंडार है और जीव के उबार का सहज जतन बतलाता है। यह दुर्लभ ग्रंथ सचमुच "रत्न-सागर" है, रत्न-खानि नहीं कि जिस में से बड़े परिश्रम के साथ खोद कर रत्न निकालना पड़ता है--इस में तो जल की धारा की नाईं रत्न बह रहे हैं जिन्हें बड़भागी सहज में पा सकते हैं ॥

॥ रत्न सागर ॥

(तुलसी साहब कृत)

——:o:——

॥ सोरठा ॥

हिरदे अरज कबूल स्वामी से कछु पूछिहैं ।
कहौ रचना निज मूल भूल भरम कब से भई ॥
जब नहिं अंड अकार सार सुरति रत कहँ हती ।
जब का कहौ बिचार पार प्रिये पद पुरुष का ॥

॥ छंद ॥

प्रथम पदम[१] प्रनाम धुर गुर, आदि की रचना कहौ ॥
कस कुरम सेस अकार अँड खँड नौ, निरंजन कस रह्यौ ॥
सब चंद्र सूर जहूर पृथवी, कस भार सिर अपने लह्यौ ॥
सब तत्त अगिन अकास पवना, कौनि बिधि उतपत भयो ॥
जल बुंद पाँच पचीस बस, कस आप तन बंधन सह्यौ ॥
गुन गाँठ कस बैराट रचि, जिव जगत दृढ़ कैसे गह्यौ ॥
निराकार ब्रह्म अकार, कस घर भूल जग जिव होइ रह्यौ ॥
कस आप अपन बिसार पौ कोउ, नौ को नित बंधन सह्यौ ॥
तिरलोक सोक सिहारि[२] सब कोउ, उलटि घर कोउ ना गयौ ॥
सुधि बुधि बिसारी आदि अपनी, करम के बसि बँधि रह्यौ ॥
भटके भवन मन मूल कैसे, भूल कस बादै बह्यौ ॥
सब आदि अंत हवाल तुलसी, बरन हिरदे को कहौ ॥

---

(१) [चरन] कमल । (२) सम्हारना, पकड़ना ।

रचना का मूल

(तुलसीदास बाच)

॥ दोहा ॥

जतन रतन सागर सुनो, रचना को बिस्तार ।
बिस्व बिदित बैराट के, सब जग उदर[1] मँझार ॥
होय बैराट प्रलै सभी, रबि चंदा बिस्तार ।
अंड खंड ब्रह्मंड लौं, बिनसत बारम्बार ॥
आतम अंस अकास में, भास भवन परकास ।
सनन सनन स्वाँसा चलै, जहँ मन करत निवास ॥

॥ चौपाई ॥

सुन हिरदे कहै तुलसी दासा । आतम सब में ब्रह्म निवासा ॥
आतम नाद आदि से आई । सिंध बुंद तन रह्यौ समाई ॥
धरती पवन अगिनजल चारी । नीर बुंद जग सृष्टि सँवारी ॥
ता में चेतन बास अनूपा । पंचम तत्त अकास सरूपा ॥
जड़ चेतन मन मूल बिसारा । अंतर गाँठ बहै नौ धारा ॥
नैन नासिका मुख अरु काना । इंद्री गुदा गुनन में साना ॥
बदन बास तन तत्त रहाई । इंद्री रुचि सुख भोग सोहाई ॥
यह रस बस बहु फाँस फँसानी । उपजि मरै चौरासी खानी ॥

॥ दोहा ॥

उतपति परलै यौं भई, गही न सतगुरु बाहिँ ।
संत चरन बिन बाद[2] यौं, बहे भर्म के माहिँ ॥

॥ चौपाई ॥

अब सुनु आदि अकास अचीन्हा । बूझै साध हरष लौ लीना ॥
प्रथम पुरुष बिदेह बिन काया । जासे भई निरंजन माया ॥
माया पाँच तत्त उपजाया । यौं रचि अस बैराट बनाया ॥

---

(१) पेट । (२) वृथा ।

चेतन अंस आतमा सोई। भास अकास प्रकासिक जोई॥
याको नाम निरंजन कहिया। भूमी बास अकास समइया॥
सहस कँवल दल अंदर बासा। दस नौ द्वार पार परकासा॥
दस नौ वार धार चल आई। चेतन जड़ योँ गाँठि बँधाई॥
निराकार आकार समाया। इच्छा रूप भई यक माया॥

मन की उत्पत्ति

॥ सोरठा ॥

निज तन बासी ब्रह्म, निराकार यह मन भयौ।
इच्छा अंग बिलास, आस अधर की तजि रह्यौ॥

॥ चौपाई ॥

इच्छा मन मिलि बिस्व बनाया। योँ रचि कीन्ह तत्तसे काया॥
इंद्री सुर देवन कर बासा। निज नभ कँवल गुनन की आसा॥
रज सत तम तन तीन बसाये। ब्रह्मा बिस्नु महेस कहाये॥

बेद कैसे रचे गये

स्वाँसा संग बेद जो भइया। सुछम[1] बेद अस नाम कहइया॥
अच्छर छर बैराटी बानी। भये बेद ब्रह्मा पहिचानी॥
नाद भये पर बेद बनाया। जा पाछे जग को समझाया॥
करम कांड करनी बिस्तारी। अरु उपासना कांड सँवारी॥
ज्ञानकांडकीन्हामनबोधा। नहिँकोइसंधिसमझकरसोधा॥

॥ दोहा ॥

ज्ञान ध्यान जोगी जती, नहिँ कोइ पावे भेद।
खेद कर्म सुभ असुभ के, फल करनी कहे बेद॥

॥ चौपाई ॥

बेद मथन बेदांती कीना। ब्रह्म ज्ञान वहि मेँ से लीना॥
बेद नाद से पीछे भइया। नेत नेत कह कर गोहरइया॥

---

(१) सूक्ष्म।

षट शास्त्र का बर्णन

षट सास्तर की सुनिये साखा। षट षट बाक बोलकर भाखा॥
कर्म मिमांसा बरन बतावे। पातंजली जोग ठहरावे॥
बरनि बिसेषिकसमयसुनावे। निच्त अनिच्तसांखसमझावे॥
न्याय नीति भाखे करतारा। षट करनी में जीव बिचारा॥
सासतर नहीं सार समझावे। कस कस जीव अपनपौ पावे॥
षट का कहा करे परमाना। जा में न कोई सार पिछाना॥
जो कोइ इनकी साख सुनावे। मन हिरदे तुलसी नहिं आवे॥

॥ सोरठा ॥

यह षट करम बिकार, सार भेद संतन लयो॥
सुरति सुन्न आधार, पार पदम पट भवन में॥

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह आदि कहानी। भानु किरन भूमी पर आनी॥
परथम निरगुन गुन से न्यारा। सरगुन काज कीन्ह बिस्तारा॥
सरगुन की माया मतवारी। भट्ठी भर्म चुवावनहारी॥
मद पियाय के कीन्ह बेहाला। यों बाँधे जग में जम जाला॥
काम क्रोध मद लोभ बिकारा। जानो यह उनका ब्योहारा॥
और अनेक फंद उन डारा। उरझा जक्त पार नहिं वारा॥
सब रचना बंधन बस राखी। कीन्हे बेद देन को साखी॥
षट[1] कर बोध पुरान अठारा। पीछे ब्यास कीन्ह बिस्तारा॥

॥ दोहा ॥

हरि कृत लीला ज्ञान, भानु किरन बंधन भई।
गही न गुरु की आन, जान जुगत ऐसे रही॥

अवतार का भेद

॥ चौपाई ॥

सरगुन ब्रह्म भया औतारा। जिनजग माहिं निसाचर मारा॥

---

(१) छः शास्त्र।

जगत भक्ति कीन्हा ब्योहारा। यह पुरान की रीति बिचारा ॥
ब्यास ब्रह्म सरगुन अवतारी। कीन्हे उन पुरान अधिकारी ॥
ज्ञान बैराग जोग अधिकाई। यह बरनन उन भाख सुनाई ॥

मूर्त्ति पूजन

सरगुन भक्ति कही संसारा। बूझैं साध समझ निरवारा ॥
काठ पषान जान जिन पूजा। अंदर मैं आतम नहिं सूझा ॥
ब्यास भागवत में यों भाखा। सूझै न जगत अंध की आँखा ॥
पढ़ि पढ़ि के पंडित बौराने। ब्यास बचन को नहिं पहिचाने ॥

॥ सोरठा ॥

अंदर आतम ज्ञान, ध्यान करन सूरत कही।
गई किरन रबि भानु, आप अपनपौ परखिया ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे इक संसय लाई। स्वामी भर्म उठा मन माहीं ॥
ब्यास बचन कीन्हे परमाना। मन मोरे ने बोध न आना ॥
रचि पुरान जो कीन्ह अठारा। करनी का कीन्हा बिसतारा ॥
पुरान पुरान कहा करतारा। बचन ब्यास यों भाखि सँवारा ॥
करता तो सब एक बतावैं। यह अठरा[१] कस कस ठहरावैं ॥
जो पुरान देख्यौं मैं जाई। करता वहि पुरान बतलाई ॥
ऐसे अठरा निरख निहारा। कहे न्यारे न्यारे करतारा ॥
सिव पुरान सिव रचना कीन्हा। बिस्नु पुरान बिस्नु रचि लीन्हा ॥

॥ सोरठा ॥

दुरगा देख पुरान, सब रचना दुरगा करी।
करता आप बखान, यों पुरान सब सब कहै ॥

॥ चौपाई ॥

मूल भागवत ब्यास बखाना। नारद का उपदेस समाना ॥

---

(१) अट्ठारह ।

इतनी कथन कही तुम सारी। मूल मर्म मति नाहिँ निहारी।
तब आरंभ भागवत कीन्हा । नारद ने उपदेस जो दीन्हा ।
नारद गुरू ज्ञान के भइया। तुम ब्रम्ह ब्यास कौन बिधि कहिया।
नारद हरि के दास कहाये। उन कस कस उपदेस सुनाये ।
चौबिस[1] में सब सृष्टि बतावे। यह मम कह न दृष्टि नाहिँ आवे ॥
मैँ सेवक मोरि बुद्धि मलीना । अस स्वामी से पूछन कीना ॥
ग्रंथ भागवत के अस माहीँ । परीछत को सुकदेव सुनाई ॥
सुकदेव पुत्र ब्यास के पाछे। कस लिखि बचन सुनाये साँचे॥

॥ दोहा ॥

ब्यास कथन आगे कही, बचन राय सुकदेव ।
ग्रंथ लिखित सुकराय के, कस कहे उत्तर भेव ॥

कर्म धर्म, मूल मर्म

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह अंतर बानी । जोगी आतम ज्ञान बखानी ॥
प्रानायाम पवन को साधा । इँगल पिँगल सुखमन औराधा॥
घट मेँ देखा सकल पसारा । सुकदेवराय ब्यास बिस्तारा॥
ब्यास बचन अंदर मेँ भाखा । इन पढ़ि बूझि जगत मेँ राखा॥
करैँ अरथ मन बुधि के मैले। जाने न ब्यास बचन को खेले॥
ब्यास बचन ग्रंथन मेँ गाये । संतन की गति अगम सुनाये॥
सो पंडित कहा जानेँ बिचारे। ज्ञान बुद्धि मन मान सँवारे ॥
उन कही और और इन बूझा । ऐसे इन की आँख न सूझा ॥

॥ दोहा ॥

सुनु हिरदे उत्तर बचन, समझि लखौ मन माहिँ ।
ब्यास राय सुकदेव को, घट मेँ कह्यो बनाय ॥

---

(१) चौबीस औतार ।

॥ चौपाई ॥

ब्राह्मन भरम जक्त में डारा । यों जुग जुग भरमा संसारा॥
सार तत्त को दीन्ह छिपाई । सुनु हिरदे अस अस भरमाई॥
जीव अनादि काल से बूड़ा । संतन से कटे बंध अगूढ़ा ॥
जग उनको कोउ चीन्हत नाहीं । भरमत फिरे जीव जड़ताई ॥
तीरथ बरत नेम निरधारा । भाख्यौ जीव कर्म करतारा ॥
भय भव भार अचार अनीता । कर्म काल सँग पाल्यौ प्रीता ॥
यह अस भाँति भुलायउ भाई । इच्छा अमृत बिषय पियाई ॥

॥ सोरठा ॥

हिरदे अस बर्तमान, भर्म भूल जग जिव रह्यौ ।
मन करता बिस्तार, भ्रमत भ्रमत जुग जुग भयो ॥

चौरासीलक्ष जोनि

॥ चौपाई ॥

कर्म प्रधान बुद्धि उपजाई । रह सुभ असुभ कर्म के माहीं ॥
जस जस कर्म कीन्ह अधिकारा । जो जस जोनि बंद में डारा॥
जो जस बनिज किया बैपारी । दुखसुखहानिलाभसँगचारी॥
जो आसा बस बनिज बिचारा । बहा भवसिंध चौरासी धारा॥
खान खान करनी से काया । फैली प्रगट सृस्टि में माया ॥
उपजे मरे धरे फिर देही । जो जस करनी के फल लेही॥
लख चौरासी रह्यो अचेता । नर तन में बिरला कोइ चेता॥
सतगुरुसाखसमभकोइबूझी । अंजनतिमरआँखजब सूझी॥

॥ सोरठा ॥

बिन सतगुरु उपदेस, सुर नर मुनि नहिं निस्तरे ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस, श्रौर सभन की को गिने ॥

॥ छंद ॥

सतगुरु बिना भव माहिं भटके, अटक नहिं गुरु की गही ॥
भृंगी भवन नहिं कीट पावे, उलटि भृंगी ना भई ॥

गुरु सब्द में चित नाहिँ दीन्हा, कौन करनी में रहो
जिन सब्द सोध सिहार[१] सोचे, अलल[२] अंड उलटे सहो
जिन जगत मोह मिलाप कीन्हा, अंत को छूटे नहीं
कोइ लाख लाख उपाय करिके, भर्म में बादहिँ बहो ।
करि करि थके सब सोधि काया, मान मद ममता रही ।
तुलसी दया गुरु दीन दिल, यों समझ हिरदे ने लई ॥

॥ सोरठा ॥

सतगुरु सूरत ध्यान, ज्ञान उदय छिन भानु में ।
मंदिर मगन मिलाप, गगन गिरा गुंजत रही ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

हिरदे बिनय बचन कर बोला । स्वामी मन बेअंत अतोला ॥
छिन छिन मन यह तरँग उठावे । जैसे सिंध लहर लहरावे ॥
बिषधर[३] डसे लहर चढ़ि आवे । मन सुधि बुधि सब ज्ञान हिरावे ॥
यह अस समझ परा सब लेखा । स्वामी कहन दृष्टि से देखा ॥
जो कोइ कहे भाखि मन जीता । भूलिन मानूँ बात अनीता ॥
ज्ञानी गुनी कहे कोइ जोगी । नहिँ मानूँ कहे लाख बियोगी ॥
नट की कला खेल मन केरी । डारै पकरि पाँव में बेरी ॥
ज्यों सुपने में देख तमासा । यों बाँधे मन झूठी आसा ॥

॥ दोहा ॥

इंद्री के बस में रहे, गहे न सतगुरु टेक ।
भेष जतन करि करि मरें, धरि धरि जन्म अनेक ॥

॥ चौपाई ॥

संतन के बस बरन सुनावे । तौ हिरदे के मन में आवे ॥
सूरति डगर डोर पद माहीं । उनकी अगम रीति अरथाई ॥

---

(१) सम्हालना । (२) अललपच्छ या सारदूल जो आकाश में इतने ऊँचे पर अंडा देता है कि वह पृथ्वी पर पहुँचने के पहिले फूट कर बच्चा उड़ जाता है । (३) साँप ।

उनका अंत संत कोइ पावे। अबिनासीगतिअगमलखावे॥
सुर नर मुनि गंधर्प और देवा। उनका अंत न पावे भेवा॥
अगम अतीत तोत[1] से न्यारे। संतन की गति संत बिचारे॥
तुम्हरी कृपा समझ अस आई। दयासिंधु चरनन सरनाई॥
मैं मतिहीन दीन हूँ दासा। बारबारचरननकीआसा॥
तुम दयाल मोहिं दृष्टिलखाई। जबमोरी बुधि ज्ञानमें आई॥

॥ सोरठा ॥

हिरदे हरष बयान, स्वामी से बरनन करूँ।
आगे का बर्तमान, बरन भिन्न मो को कहौ॥

मन की चाल घात

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

मन का कूत भूत से भारी। इच्छा संग घुमावनहारी॥
जो सतगुरु की सरना आये। सुरति डोर चरनन पर लाये॥
संत चरन का भेद बताऊँ। सुन हिरदे तोको दरसाऊँ॥
स्याम सेत के घाट निसानी। सुन हिरदे भाखूँ सहदानी[2]॥
संत चरन सूरत हुइ बासा। दृस्टि लाय नित करे निवासा॥
जैसे महल चौक तिदुवारी। सैल करन को बैठक न्यारी॥
जो नित नेम रखे वहि ठाँईं। मन इच्छा की नाहिं बसाई॥
जल ओला गोला बँध गयऊ। घुल पानी वहि पानी भयऊ॥

॥ दोहा ॥

जल ओला गोला भयो, फिर घुल पानी होय।
संत चरन गुरु ध्यान से, मन घुल जावे सोय॥

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह मन दुखदाई। या बिधि जहर उतारे भाई॥
और बात सँग हाथ न आवे। सतगुरु संत चरन लौ लावे॥

---

(१) माया। (२) पहिचान।

करतब करि करि मुए अनेका। कोइ न पाया मन का ठेका॥
मन थिर होय न एको बाता। जबपतियायसुरतिरँगराता॥
रिखी मुनी सब खाय नचाये। जोई बचे जेहिँ संत बचाये॥
सिंगीरिषि[1] पारासर[2] जोगी। महादेव[3] भये ज्ञान बियोगी॥

(१) श्रृंगी ऋषि अकेले बन में रहते थे पवन का आहार करते थे और एक बार दरख़्त पर ज़बान मारते थे। राजा दशरथ के औलाद नहीं होती थी, बशिष्ट जी जोकि उनके कुल के उपरोहित थे उन्होंने कहा कि बिधि पूर्वक जज्ञ किया और होम होगा तब बेटा होने की उम्मेद हो सकती है और ऐसी क्रिया सिवाय श्रृंगी ऋषि के और कोई नहीं करा सकता है। राजा दशरथ का हुक्म हुआ कि जो कोई श्रृंगी ऋषि को यहाँ लावेगा उसको हीरे जवाहिर का थाल भर कर मिलेगा। एक बेश्या ने कहा म ले आती हूँ वह वहाँ गई देखा कि ऋषिजी बड़ी समाधि में बैठे हैं, जिस दरख़्त पर कि ज़बान लगाते थे वहाँ एक उँगली गुड़ की लगादी ऋषि जी ने जब ज़बान लगाई चाट लग गई पहिले एक दफ़ा ज़बान मारते थे उस रोज़ दो दफ़ा मारी दूसरे रोज़ तीन बार मारी इसी तरह रस बढ़ता गया और ताक़त आने लगी। वह बेश्या जो छिप के बैठी थी उसने हलुवा पेश किया तब थोड़ा थोड़ा हलुवा खाने लगे बदन जो दुबला था वह पुष्ट होने लगा ताक़त आई बेश्या पास थी सब कार्रवाई जारी होगई, दो तीन लड़के हुए। किसी बहाने श्रृंगीजी से बेश्या ने कहा चलो राज दरबार में यहाँ जंगल में लड़के भूखे मरते हैं बिचारे उसके साथ हो लिये। दो लड़कों को दोनों कंधों पर उठाया और एक का हाथ पकड़ा पीछे वह बेश्या चली। इस दशा में राजा दशरथ के दरबार में पहुँचे और वहाँ क्रिया होम वग़ैरह की कराई। जब वहाँ किसी ने ताना मारा तब होश आया एक दम लड़कों को वहीं पटक के भागे और जाना कि माया ने लूट लिया।

(२) पाराशर ऋषि ने मछोदरी से नाव में भोग किया (यह स्त्री उन्हीं के बीज से मछली के पेट से पैदा हुई थी जो बीज गंगा में नहाते वक़्त ऋषि जी का किसी समय में गिर गया था और एक मछली ने खा लिया था) उस मछोदरी ने कहा अभी दिन है लोग देखते हैं तब ऋषि ने अपनी सिद्धि शक्ति से अँधेरा कर दिया आकाश में बादल आ गये। फिर स्त्री ने कहा मेरे बदन से मछली की बदबू आती है ऋषि ने बदबू को बदल के ख़ुशबू कर दिया। नतीजा इस संगम का यह हुआ कि व्यास जी उस मछोदरी से पैदा हुए।

(३) शिवजी जिनके पारबती ऐसी सुन्दर स्त्री थी उनको छोड़ के मोहनी स्वरूप माया को देख कर उसके पीछे दौड़े और जोश में बीज बाहर गिर गया (इसी बीज से पारा पैदा हुआ) जब देखा माया का चरित्र है तब अपने इष्टदेव

मोहनी छले ध्यान में जाई। संकर की बुधि काम जगाई॥
पारासर पुत्री सँग भोगा। कामबानबसकरनबियोगा॥
वाके गरभ ब्यास सुतभइया।जिनकीमातमछोदरिकहिया॥
सिंगी रिषि बन माँहि रहाई। मन उदबेग करा योँ जाई॥

॥ दोहा ॥

अन पानी की को कहे, लेत बृच्छ को चाट।
माया प्रबल प्रचंड ने, आन बँधाई गाँठ॥

॥ चौपाई ॥

और जगत की कहा सुनाऊँ। पसु पंछी नर नारि सुभाऊ॥
सब को करे काम बेहाला। मन दारुन यह काल कराला॥
औरकुसलकोइभाँतिनपावे। संत चरन मन में दृढ़ लावे॥
वे दयाल जब दया बिचारैं। सुरति जहाज से पार उतारैं॥
और उपाय करे बहुतेरा। नाहिँ कोइ पावे मन का डेरा॥
भरम चक्र चित चंचल घेरे। मारे बान आन मन फेरे॥
बुधिमलीनसुधिएकनआवे। संका भाव अनेक उठावे॥
नैन सुरख चित भंग रहाई। छावे आय अंग के माहीँ॥

॥ दोहा ॥

घटी बढ़ी कुछ नजर मेँ, आवे न ज्ञान बिचार।
जब तरंग उसको उठे, ज्योँ सलिता[1] धधकार॥

॥ चौपाई ॥

मोह अपर्बल जग मेँ भारी। ज्ञान बान लै लौ से मारी॥
क्रोध पलीत[2] प्रचंड कहाई। यह तो मारे छिमा के माहीँ॥
कुमतिनारिमोहकीपटरानी। पाखँड पुत्र बड़े अभिमानी॥
कपट वजीर मान मतवारे। डिंभी मंत्र जुझावन हारे॥

को श्राप दिया कि जैसे हम स्त्री के पीछे दौड़े हैँ वसे ही तुम भी दौड़ोगे—इसी से त्रेताजुग मेँ राम औतार हुआ, सीता के पीछे बन बन दौड़ना पड़ा।

(१) नदी। (२) प्रेत।

इनके संग लड़न को जोई । बिन गुरु बाँह हटे नहिं कोई ॥
आसा त्रिस्ना पुत्री दोई । अंतर बान चलावैं सोई ॥
आसातजिनिरआस कहावे। तब इन से कोइ छूटन पावे ॥
यह उमराव फौज मनसाथा। कहो क्योँकर आवे यह हाथा ॥
राय बिबेक साज दल आवे। तो कदाचि[१] उन से हट जावे ॥
ज्ञाननिसान घुरे घट माहीं । सत की कला रहे उर छाई ॥

॥ दोहा ॥

बान बिचारे जुद्ध को, मन मनसा रनभुम्म ।
सब्द सिरोही[२] गुरुन की, ले फोड़ै घट कुंभ ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

यह तो मन का मर्म बताया । हिरदे के मन में सब आया ॥
संत बिना कोइ पार न पाई ।यह अस मोर समझ में आई ॥
अब आगे भाखो बिरतन्ता। अंडा रचन कहो अर्थन्ता ॥
जो गति अगम संत अर्थाई। सो सब बरनि सुनाओ गाई ॥
प्रथम अकास कहाँसेआया। जासे अंड रचानी माया ॥
कहो कैसे महि पवन बनाया । आगे अंत कहाँ से आया ॥
जलऔअगिनकौनिबिधिकीना।याकाभाखोआदिअकीना[३]
को है पुरुष कौन यह काजा। हिरदे को कहो कहाँ बिराजा ॥

॥ सोरठा ॥

यह सब बरन बयान, हिरदे के कारज कहो ।
जेहि बिधि भयो उपाय, पूरब[४] से उत्तर[५] गयो ॥

आकाश की उत्पत्ति

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

धुंधूकार रहे सुन माहीं । कइ जुग ऐसे बीति सिराई ॥

(१) शायद । (२) तलवार । (३) निश्चय । (४) सवाल । (५) जवाब ।

उठिइकसुन्नमाहिंधधकारा। कड़काकुंभपुरुषअधिकारा ॥
सब्द बिदेह लोक बिन काया। जब नहिं हते निरंजन माया ॥
कुरम[1] सेस नहिं अंड अकारा। जब का भाखि सुनाऊँ सारा॥
गोलाकार रहे जल माहीं। कहूँ जेहि के आगे समझाई ॥
सब्द तेज से भयो अकासा। जस मेघा बादल में बासा ॥
घुमरे मेघ नजर में आवे। खुलमेघा वह वहीं बिलावे ॥
ऐसे सब्द अकास उपाई। ज्यौं जलकजी[2] उपज हुई छाई[3]॥

॥ दोहा ॥

धुंधूकार सुन में हता, सब्द अंड अधिकार।
सब रचना पीछे भई, बीज बृछ बिस्तार ॥

(हिरदे बाच)

॥ चैापाई ॥

हे दयाल यह समझ सुनावो। हिरदेको कहि कर अरथावो॥
हे स्वामी यह अकथ अदेखा। कहा जानूँ मैं यहि कर लेखा॥
जुग जुग में रहुँ सरन तुम्हारे। आन मिले बड़भाग हमारे ॥
करनीकैानकीन अधिकारी। कृपा चरन पर मैं बलिहारी॥
आदि अकास सब्द से आया। ऐसे तुमने भाख सुनाया ॥
गोलाकार कुंभ की बाता। सो समझायकहोबिख्याता॥
याकीकहनसमझनहिं आई। सोसतगुरुमोहिंकहैाबुझाई ॥
यह कोइ बात भेद कहँ पावे। संत बिना कहो को दरसावे ॥

॥ दोहा ॥

गोलाकार अकास का, भाख्यौ कुंभ बखान।
तिन बयान बर्नन करो, हिरदे की मन जान ॥

(तुलसीदास बाच)

॥ चैापाई ॥

कहे तुलसी तेरे हृदे न आई। यह तो कहन कहन में नाहीं॥

(१) कछुवा। (२) काई। (३) नाश हुई।

मन का अंत मिले नहिं भाई। संत अंत गति क्योंकर पाई ॥
यह तोरे कारन कर गाऊँ। जाका रूप रेख नहिं ठाऊँ ॥
नाम न ठाम गाम नहिं काया। है अदेख की बात अकाया ॥
ब्रह्मा बिस्नु महेस न जाना। बेद पुरान नहीं पहिचाना ॥
दस अवतार भेद नहिं पावे। जग अँधरे को कौन सुनावे ॥
अब सुन याको भेद बखाना। संत चरन से महुँ पुनि जाना ॥
यह अतोल को तोल सुनाऊँ। जहँ नहिं बोल बचन अरथाऊँ ॥

॥ दोहा ॥

अगम पुरुष बेअंत का, संत सुनावैं बैन।
कहन कहूँ समझाय के, हिरदे को सुख चैन ॥

रचना का भेद

॥ चौपाई ॥

जब नहिं सब्द ख्याल और स्वाँसा। जब का भेद कहूँ परकासा ॥
धुंध अनैन सब्द इक हूआ। ज्योँ अगिनी अंदर से धूआँ ॥
धूआँ का डम्मर बँध गइया। अस अकास सब्द से भइया ॥
मधि अकास से स्वाँसा आई। धम्मन[1] ज्योँ लोहार की नाईं ॥
जैसे चाम उठै कर माहीं। निकसे पवन उसी की राही ॥
योँ अकास से पवन पिछाना। सूरतवंत लखे धरि ध्याना ॥
यह सब सता[2] सुरत की जानी। पूरब से उत्तर सहदानी ॥
सूरति तन मन माहिँ समानी। जड़ चेतन सृस्टी ले आनी ॥

॥ दोहा ॥

धुन्धकार सुन सब्द यह, सुरत किया बिस्तार।
यह अकास योँ सुरत से, स्वाँसा निकर निहार ॥

॥ चौपाई ॥

षोड़स कला सुरति से भयऊ। तामेँ एक निरंजन कहेऊ ॥
सूरति नाम आतमा सोई। सो अंदर हेरा नहिं कोई ॥

(१) धौंकना। (२) कुदरत।

कला एक से कुम्भ कहाया । एक कला गोला उपजाया ॥
गोलाकार भया इक अंडा । सूरत मद्ध भास ब्रह्मंडा ॥
जड़ अकास जब चेतन भयऊ । चेतन तन मैं पवन चलयऊ ॥
पवन अकास मिले जब भाई । यह दोनोँ अगिनी उपजाई ॥
कुंभ प्रसेव[1] कीन्ह समझाऊँ । उपजा योँ जल तत्त प्रभाऊ ॥
दूध तपे जस पड़े मलाई । योँ पानी पर पृथवी छाई ॥

॥ दोहा ॥

गोलाकार अकार मैं, पाँचो तत्त समान ।
सब रचना ऐसे भई, योँ यह अंड बिधान ॥

॥ चौपाई ॥

सूरति आतम सूर्ज कहाई । सो प्रतिबिंब पड़ा घट माहीं ॥
जैसे घड़ा नीर से भरिया । सूरज का प्रतिबिंब जो परिया ॥
ऐसे आतम देह समाना । अंदर में कोइ देख न जाना ॥
बाहर कीन्हा भास प्रकासा । सो करे मन इंद्री में बासा ॥
नाद बिंद कीन्हा बिस्तारा । ऐसे रचि संसार सँवारा ॥
चर अरु अचर चराचर खाना । गुन अरु मन मिलि पसु पंछि नसाना
योँ बिस्तार भई जग माया । बंधन भये जन्म जिव काया ॥
कोइ नहिं भेद उधर का पाया । बार बार भव में उरझाया ॥

॥ सोरठा ॥

सुनु हिरदे यह भेद, रचना की बिधि योँ भई ।
जुग जुग रही अचेत, सुरत बिसारी आदि की ॥

॥ छंद ॥

हिरदे अतंत अतोल की गति, खोल कर तोसे कही ।
जो जो अगम गति संत ने, लखि देख कर भाखे सही ॥
कोइ हंस होय बिचारि बानी, बिमल पद पंकज गही ।
दृढ़ सुरत डोर अपोढ़ पुर धुर, आदि गुरु चरनन रही ॥

(१) पसीज ।

कहुँ क्या कँवल दल पार प्रीतम, परसि पद पारस भई।
जहँ कोटि भानु प्रकास पद हद, हेरि जद जुगती लई॥
जुग जुग अमरपुर बास बस अस, पुरुष ने बाचा दई।
तुलसी दयानिधि पुरुष बिन मैं, और को मानूँ नहीं॥

॥ दोहा ॥

जगमग अंदर मैं हिया, दिया न बाती तेल।
परम प्रकासिक पुरुष को, कहा बताऊँ खेल॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी मोहिं अगम सुनाई। आदि अनादि नजर मैं आई॥
बरनन एक और समझावो। कर्म कला मोहिं भाखि सुनावो॥
कैसे जीव कर्म बस डारा। जाका कहो मोहिं निरवारा॥
कर्म को आदि अंत दरसावो। जीव बँधा जस मोहिं समझावो॥
जीव केहि घर बासा कीन्हा। कर्म कांड कैसे चित दीन्हा॥
कहो किन कौन बँधाई आसा। कस कस जीव कर्म मैं फाँसा॥
कर्म भूमि का कौन ठिकाना। क्योंकर यह यहि में लपटाना॥
आदि अनादि भेद कस भूला। यह परबस होइ करस हे सूला॥

॥ सोरठा ॥

रचि रह्यौ कर्म करूर[1], मूर दियो बिसराय के।
भटक भटक भरमाय, जाय नहीं घर आपने॥

कर्मों का हिसाब

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

तब तुलसी बोले यहि भाँती। रचना के सँग कर्म सनाती[2]॥
कर्म बिना जिव रहन न पावे। रचना में यों कर कर आवे॥
परथम अंस पुरुष से आया। यह यहि संग लगाई माया॥

(१) दुखदाई, दारुन। (२) सदा से।

माया पर-बस भया अधीना। यासेआपअपननहिँचीन्हा॥
सतगुरु का इन भेद न पाया। बार बार भव मेँ भरमाया॥
संतन की बानी नहिँ चीन्हा। जा से जग मेँ रहे अधीना॥
अंस आदि से निरमल आया। ज्यौं धोये कपड़े की छाया॥
निरमल रहि जग रहन न पावे। मल के संग सहज उरझावे॥

॥ दोहा ॥

उजला आया वतन[१] से, जतन किया कर काल।
चाल भुलानो आपनी, यों भयो बंधन जाल॥

॥ चौपाई ॥

धोया तो घर मेँ से आया। बेद बाँधि कर्मन मेँ लाया॥
तपऔरजोगभोगबतलाया। यह कारन मेँ जीव लगाया॥
तप के फल राजेसुर भोगो। जोगज्ञानमनगुनभयोरोगी॥
और उपासना नेम निहारा। या बिधि से जिव बाजी हारा॥
करनी ने जिव को बौराया। कर्म कांड करके उरझाया॥
अबनिकसनकीगलीनपावे। जन्म जन्म जिव भटका खावे॥
सतसँग भाग मिलै कहुँ आई। तो मन साँच न आवे भाई॥
जो कोइ कर्म कांड बतलावे। जाकी साँच समझ मन लावे॥

॥ दोहा ॥

लाख बात करके कहे, नहिँ माने गुरु बैन।
चैन कहो कहँ से मिले, समझे न सतसँग कहन॥

॥ चौपाई ॥

रिषी मुनी तप कारन कीन्हा। यहसबज्ञानकर्मकोचीन्हा॥
तप करके सब राजस पाये। राज भोगकर नरक सिधाये॥
औ यह राम रहे अवतारा। कर्मकांडमनउनहुँबिचारा॥
इन की यह रामायन माहीं। सुनुहिरदेतोहिसाखसुनाई॥
राम सिया कह कानन[२] जोगू। कर्म प्रधान सत्त कहे लोगू॥

---

(१) घर। (२) बन।

अस बोले रघुबंस कुमारा[१]। बिध[२] का लिखा को मेटन हारा॥
कर्म प्रधान बिस्व[३] रच राखा। जो जस किया सोई फल चाखा॥
ऐसे साख पुकारे बानी। पढ़कर के कोइ नहिँ पहिचानी॥

॥ सोरठा ॥

हिरदे कर्म बिषाद[४], बाद जन्म ऐसे गयो।
रह्यौ जुगन मैँ साथ, हाथ पकरि आवे नहीँ॥

॥ चौपाई ॥

कौन कौन से कर्म बताई। हिरदे जिव चौरासी माहीँ॥
अंडज पिंडज उष्मज खाना। सब पर भयो कर्म परधाना॥
नर नारी की कौन चलाई। यह बँध रहे खबर नहिँ पाई॥
यहि कर्मन ने बंधन कीन्हा। जल बिन रहे तड़प जस मीना[५]॥
जल छूटे पर प्रान गँवाई। यह अस दसा रही उर छाई॥
जो कोइ ज्ञान समझ बतलावे। सो हिरदै मैँ नेक न लावे॥
जेहिँ चरचा सुख को समझावे। निज देही मैँ नींद सतावे॥
आलस कर आसा ने मारा। कैसे होय जीव निरवारा॥

॥ दोहा ॥

हिरदे सतसँग मैँ रहे, ऊँघे सुन कर कान।
हानि लाभ चीन्हा नहीँ, कहा जाने परमान॥

॥ चौपाई ॥

निद्रा आलस कर परभाऊ। यह पूरबले कर्म सुभाऊ॥
जेहि बिधि अमलदार जग माहीँ। उठि गया अमल उदासी छाई
ऐसे पूरब जोग की रीती। अमल उठे कर्म करे अनीती॥
आलस नींद सुभाव उठावा। और तरह कछु चले न दाँवा॥
मन मैँ नेक बसन नहिँ पावे। जासे मन उदबेग उठावे॥
और उपाय लगे नाहिँ कोई। तो यह बुद्धि अनेक बिगोई[६]॥

(१) राम। (२) ब्रह्मा। (३) संसार। (४) दुखदाई। (५) मछली। (६) बहका देना।

मन को भर्म उचाट उठावे । मनछिनएकटिकननहिँपावे॥
ज्ञान बैराग कहै बहुतेरा । तौ मन नहिँ आवै वहि केरा ॥

॥ दोहा ॥

कर्म भाव बिष ब्याध की, सुनै समझ सुख पाय ।
हाथ कधी आवे नहीँ, क्योँकर संग समाय ॥

॥ चौपाई ॥

रस की लहर बसै मन साँचे । और लहर मन कधी न राचे॥
अपनीबुधिमतज्ञान बिचारे । सतसँगसमझकधीनहिँधारे॥
सतसँगकारसपियन न पावे । परखप्रमानऔरबिधिलावे॥
जिनकोइभटकभावदरसाया। नाँगे पाँव फिरे मन धाया ॥
यह बंधन का करे बिबेका । कस कस पावे मन का ठेका॥
जोकोइ लाख कहे उपकारी । आवे न मन मेँ बात करारी ॥
मन सतसँग से उचटा चावे। बुधि जद यह बिपरीत उठावे॥
लाभ घटी बूझे नहिँ भाई । यहसबपुरबजोगअधिकाई ॥

॥ दोहा ॥

सतसँग मेँ मन ना बसे, फँसे कर्म के माहिँ ।
खाय बिषय बिस्वास यह, नहिँ कोइ पियत अघाय ॥

॥ चौपाई ॥

मन तन रसको पलपलधावे। इंद्री के रस को सुख चावे॥
फीकीनीकिचिक्कनकडुवाई। षटरसभोजन माहिँ मिठाई ॥
इंद्री भोजन भोग बिलासा । यह मन मेँ उपजे बिस्वासा ॥
राग रंग नित सुने बिलासा । आवे न नीँद रात भर पासा ॥
कोउ सतसंग भाग से पावे । तौ सईसाँझ नीँद भर आवे ॥
भोजन करे पेट भर भाई। तौ घर नीँद कौन के जाई ॥
यहरहसबमनजीवभुलाना। निसदिनरहे गहे नहिँ काना ॥
भर्म उठे नहिँ कैसे भाई । इंद्री मन मिलि मौज बसाई ॥

॥ दोहा ॥

इंद्री सुख रस रीति मेँ, बिलसत जनम सिराय ।
कहा कहूँ अज्ञान की, नेक न मन सरमाय ॥

॥ छंद ॥

मन बिषम यह बिष बाद के बस, समझ कर थिर ना रहे ।
रस भोग सोग सुनाय कहि कोइ, तुरत उदमद[1] मेँ बहे ॥
कोइ नीक फीक बिचारि बंधन, यह समझ सुध ना लहे ।
पल पल परख रस रीति सुख यह, दुख समझ निस दिन दहे ॥
सतगुरु दया निज बिमल बातैँ, समझ सुधि बुधि ना गहे ।
कर्म कांड बेद बिचार बानी, समझ के साँची कहे ॥
नर को बदन बिस्वास करिके, बेद संग बादै बहे ।
सतसँग बिना नहिँ साँच पावे, कर्म के बंधन सहे ॥
हिरदे अपर्बल बात मन की, ठान जो अपनी ठहे ।
तुलसी तरक[2] कोइ साध के सँग, रँग लगे तब ना डहे ॥

॥ सोरठा ॥

हिरदे मन की रीति, चित्त न सोचे आपने ।
भव भर्मन की प्रीति, कोई कहन माने नहीँ ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

स्वामी यह सब बरनि सुनाई । आगेकीकहोसमझबताई ॥
यहमनकोबिषरस बस कीना । यासेभया भँवर मति हीना ॥
पोहप बास मन रहत समाई । जासेसुधिअपनीनहिँपाई ॥
बिषय बासना मेँ मन राता । जासेपकरि न आवे हाथा ॥
यहसबसमझिसमझिलखलीन्हा । आगेकोकहोकैसेकीन्हा ॥
चार लाख चौरासी धारा । कौन कौन कस कर्म सिहारा ॥
खानि खानि का न्यारा भेदा । सोभिन भिन करिकहोनिषेदा
करनी कौन कर्म मन काया । कहोकोकोकेहिखानिसमाया ॥

(१) मस्ती । (२) बहस मुबाहसा ।

॥ दोहा ॥

कौन कौन करनी करी, फल तन पाया आय।
जो जो जस बंधन बँधे, भिन भिन कहो अर्थाय ॥

जन्म मरन की पीड़ा

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे मैं कहा बताऊँ। जीवबिपतितोकोसमझाऊँ॥
चार खान जीवन की होई। जामैं सुखी न देखा कोई ॥
जन्म मरन क्या कहूँ अलेखी। पूछै कही जाय नहिं एकी॥
जन्मत गर्भ माहिं का लेखा। जरते जठर[1] अगिन मैं देखा॥
ज्यौं कीड़े मोरी के माहीं। तड़पत जेठ तपन मैं भाई॥
छटपट करै तपत रहे पानी। येही दसा गर्भ मैं जानी॥
जन्मत जीव जबर दुख भारी।बाहरकोकहूँबिपतिबिचारी॥
जोनी संकट की सुनु भाई। रहे नौ मास नरक के माहीं॥
उलटे गर्भ रहा लटकाना। औंधे मुख मल मुत्र समाना॥

॥ सोरठा ॥

मुख उलटे लटका रहे, गर्भ बास के माहिं।
कहा कहूँ दुख अंत को, जाने भोग समान ॥

॥ चौपाई ॥

जन्मत बालपना दुखदाई। सुधिबुधिज्ञानसमझनहिंपाई॥
तरुन रहे तरुनी सँग भोगा। बृद्ध भये तब बाढ़े रोगा॥
ऐसे यह तीनौं पन बीता। नेक न जानी साहब रीता॥
अब मरने का सुनो सँदेसा। प्रान गये पर किया अँदेसा॥
अब क्या होवे बात बिचारे। नर बाजी जूवा में हारे॥
घर बाहर से काढ़े डेरा। फिर नहिंआनाकियानरफेरा॥

---

(१) पेट।

कर्म जोग जोनी भरमाये । कर्म किया सोई फल पाये ॥
जब नहिँ चेते मूढ़ गँवारा । बिगरे पै क्या करे बिचारा ॥

॥ दोहा ॥

अब समझे से का भयो, चिड़िया चुग गईं खेत ।
चेत किया नहिँ आप में, रहे कुटुंब के हेत ॥

सतगुरु और सतसंग बिना छुटकारा नहीं हो सकता

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे बोले यह बैना । दुखसुखभोगकर्मकाकहना ॥
या बिधि जीव रहे जड़ताई । बिन सतसंग राह नहिँ पाई ॥
यहमोहिँसमझपड़ीसहदानी । स्वामी के कहने से जानी ॥
यह भवसिंधु पार नहिँ पावैं । सतगुरु मिलैं तो पार लगावैं ॥
बिन गुरुज्ञानभया मतिहीना । क्योंकर परे आप घर चीन्हा ॥
सतगुरु मिलैं न सतसँग पावे । क्योंकर बात हाथ में आवे ॥
जग की रीति लगे मन मीठी । अंजनबिनाआँखनहिँडीठी ॥
जब कोइ खोज करे मन लाई । संतन की संगत में पाई ॥

(तुलसीदास बाच)

॥ सोरठा ॥

वे गुरु दीनदयाल, करैं निहाल जो दीन होय ।
जग बस बंधन काल, भाल[1] लिखन मेटैं सही ॥

॥ चौपाई ॥

हे हिरदे अस हृदय बिचारे । जो तैं कही समझ सोइ धारे ॥
संत चरन में सूरति राखे । सतगुरु सब्द कहन अस भाखे ॥
जो सब्दन में करे बिबेका । तो सतगुरु का पावे ठेका ॥

---

(१) माथा ।

छलतजिप्रीतिजोकरेहमेसा। तो वे काटैं काल कलेसा ॥
अंतर साँच रहे मुख बैना। सतगुरु संतबचनक्याकहना॥
या बिधि से सत सुरति लगावे। भवजलपारउतर के जावे॥
कोई बिषाद[1] न रोके भाई। आद अरु अंत साध समझाई॥
या बिधि समझ करे निरवारा। कोइ न उसका रोकनहारा॥

॥ दोहा ॥

तन मन से साँचा रहे, गहे जो सतगुरु बाँहि।
काल कधी रोके नहीं, देवे राह बताइ ॥

॥ चौपाई ॥

जैसे नाव नदी के पारी। केवट[2] वा को देत उतारी ॥
जैसे जहाज समुंदर माहीं। वार पार सहजै उतराई ॥
सतगुरु केवट मिलैं दयाला। रोके न काल जबर जम जाला ॥
मन होय लीन दीनता पावे। मरजीवा[3] मोती ले आवे ॥
पैठे माहिं समुंदर केरे। जो सतगुरु चरनन को हेरे ॥
जाने जोई संत गति प्रीती। हिरदय मैं नहिं रहे अनीती ॥
सुरति सिरोमन चरन लगावे। जब संतन की गति को पावे॥
जैसे बनिज करे बैपारी। मूर रहे पर नफा बिचारी ॥

॥ सोरठा ॥

सौदागर का ज्ञान, माल दिसावर से भरे।
करे नफा से भाव, घटी जानि बेचे नहीं ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी अस अस कोइ कहिया। सतसँग कर हम कछू न पइया॥
सतसँग करत बहुत दिन बीते। देखा न नजर नैन से प्रीते॥
यह सतसँग कसकस गोहरावा। वाके तो कछु हाथ न आवा॥

---

(१) कष्ट, विघ्न। (२) मल्लाह। (३) समुद्र मैं डुबकी लगाकर मोती निकालने वाला।

याका भर्म भया मन माहीं । यह संसै स्वामी समझाई ॥
कैसे मन ने मन को रोका । याकासमझमिटावोधोखा ॥
सतसँगकीमहिमाकहँ भारी ।कहोजोसमझपरैअधिकारी॥
कहोजोकहाकौनउनकीन्हा । सतसँगसेउनलाभनलीन्हा ॥
क्योंकरके सतसंग न पाया। कैसे वाको बोध न आया ॥

॥ दोहा ॥

कौन बात कीन्हा नहीं, कैसे न बोध समान ।
ज्ञान रतन कहो कौन सा, सो न परा पहिचान ॥

॥ छंद ॥

हिरदे कहे गुर ज्ञान स्वामी, कस न वोहि हियमँ भयो ।
अस कौन बात बिबेक तन मन, आप मँ खाली रह्यो ॥
कोइ समझ सोध न बोध कीन्हा, गुरु भटक मन से गयो ।
कोइ भाँति बरन बिचार कारन, बूझ बिन लै ना लयो ॥
कहो कौनि बिधि बिस्वास मन से, दिल बिकल ह्वै
नहिं सह्यौ ।
कोइ कहन मेँ नहि कान दीन्हा, यह कहो कैसे भयो ॥
याको कहो बरतंत मोसे, संग मेँ मन ना दियो ।
तुलसी तरक[1] मन माहिं अचरज, कौन बिधि मोटो कह्यो ॥

॥ सोरठा ॥

हिरदे कहत सुनाय, स्वामी यह मो से कहो ।
कर्मन के बर्त्तमान, की कोइ और उपाय से ॥

सतसंग से लाभ कितनों ही को क्यों नहीं होता

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

तुलसीदास कहे सुनु भाई । तोको बचन कहूँ समझाई ॥

---

(१) संसय ।

जीव अनादि काल से आया। जन्मजन्मकर्मकीट[1]लगाया॥
लोहा को काई खा जावे। कीड़ा लगे काठ घुनि जावे॥
जैसे असल सिरोही[2] होई। लगे मोरचे माहिँ बिगोई॥
जस ओला घुल पानी होई। असजिवआपअपनपौखोई॥
कर्म कराल बड़ा अधिकारी। सूरत पर मन करे सवारी॥
बिष बंधन मन करे बिहारा। गाँठ बाँध चेतन जड़ डारा॥
मनमलीनसुधिबुद्धिहिरानी। कहु वह सतसँगकोकाजानी॥

॥ सोरठा ॥

जैसे अपढ़ अज्ञान जो, पढ़े जो पोथी जाय।
अच्छर की सुधि बुधि नहीँ, नहिँ उस अरथ प्रभाव॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे उन सतसंगत कीन्हा। भोजनलोभमाहिँमनदीन्हा॥
जबलगस्वादमिलामनमाहीँ। तब लग संग करा उन जाई॥
राह रकाना एक न बूझै। कहो कैसे आँखो से सूझै॥
भरे पेट जो खाय अघाई। सोवे सईसाँझ से जाई॥
बैठे गाल फटाका मारे। मनमौजी को नाहिँ सम्हारे॥
जन्म जन्म का उरझा सूता[3]। को सुरझाय सके मजबूता॥
करनी करे आप की सोई। की सतगुरु के सरनै होई॥

॥ दोहा ॥

की अपनी करनी करे, की गुरु सरन उबार।
दोनोँ मेँ कोइ एक नाहिँ, नाहक फिरत लबार॥

॥ चौपाई ॥

डाँवाँडोल बोल मन केरा। सो क्या पावे जीव निबेरा॥
संत चरन पर प्रीति बढ़ावे। तो उन से उपकारी पावे॥
दीन देखि के करैँ निबेरा। जो कोइ साँचे मन से हेरा॥

(१) मैल की काई। (२) तलवार। (३) सूत।

संतन को चीन्हब बड़ि बाता। छल बल दाँव चलावैं हाथा ॥
जो करनी में देखन चावे। भटकत जन्म नजर नहिं आवे॥
उनके रीति रकाने भारी। तैं का जाने चीन्हि अनारी ॥
बेद नेत उनको गोहरावे। अवतारी कोइ भेद न पावे ॥
तिरदेवा नहिं पावैं अंता। परखि न परें लखन में संता॥

॥ दोहा ॥

कोइ सतसँग करके लखे, सज्जन सुमन बिचार।
दीन गरीबी रहनि जो, मन से बैठे हार ॥

॥ चौपाई ॥

हे हिरदय मन के जो ऐसे। सो लख पावें संत सदेसे[1] ॥
रहनी और करनी में नाहीं। जो खोजे सो रहे भुलाई ॥
कधी इक करें अज्ञानी काजा। कधी सभा में ज्ञान बिराजा॥
कधी इक बड़े ज्ञान के राजा। कधी मूरख अज्ञान समाजा ॥
कहो को उनको परखे भाई। पारख परख लखन में नाहीं ॥
यह क्या परखे जीव बिचारा। सतसँग के बिन सार असारा ॥
जोई कदाचित भाग से पावे। तो अपने मन साँच न लावे ॥
कई तकरीरें कहन उठावे। या बिधि उनका भेद न पावे ॥

॥ दोहा ॥

जो उपाय छल सें करे, मिले न उनका भेद।
फेर जुगन जुग में सहे, उनगति अगम अभेद॥

॥ चौपाई ॥

जो कोइ कहे संत को चीन्हा। तुलसी हाथ कान पर दीन्हा॥
कोइ कोइ सज्जन हैं बड़भागी। जिनकी सुरति चरन में लागी॥
वे परखें गति अगम सनेही। जो मिथ्या जग जानें देही॥
नर पसुवत जग माहिं घनेरे। सो का जानें जम के चेरे ॥

---

(१) जल्द।

हिरदे मोसे कही न जाई । यह जिव कुटिल बड़ा अन्याई॥
जो याकी करनी दरसाऊँ । तो जग कागज स्याही न पाऊँ॥
इन अपनी सुधि कबहुँ न पाई । आद अरु अंत रह्यौ भर्माई॥
खोटे जन्म कर्म कर बीता । ऐसइ रहा हाथ से रीता ॥

॥ दोहा ॥

यह अज्ञानी जीव की, क्यौं कर कहूँ बखान ।
अपनी बुद्धि बिकार की, करे न मन पहिचान ॥

॥ चौपाई ॥

इतनी नजर कहाँ से आवे । बाहर भीतर को कस पावे ॥
सतगुरु को कहो कहा पिछाने । कहो यह बुद्धि कहाँ से आने॥
जग धंधे में जन्म बिताया । साँझ पड़े घर अपने आया॥
भोजन करिके खाट बिछाई । पौंढ़े पाँव पसारे जाई ॥
ऐसे जन्म गयो सब बीती । कस आवे सतसँग की रीती ॥
जक्त भेष दोउ आहिं अनारी । यह बँधे माया मोह की जारी[1]॥
सुपने सतसँग कबहुँ न पावे । इनको कहो कौन समझावे॥
हिरदे कौन जिकर मन लागे । इनको देख दूर मन भागे ॥

॥ दोहा ॥

यह जग जीव अनादि से, भटकत फिरे निकाम ।
काम बान[2] मन में बसे, जुग जुग से भरमान ॥

॥ चौपाई ॥

कइ मति के बहु भाँति बिकारा । लोक न बने परलोक बिगारा॥
केहि केहि भाँति पड़ा जम घेरा । अरु दूजे यह चले अनेरा ॥
कौन भाँति कहूँ याकी रीती । अपने बस नहिं चूके अनीती॥
सतसँग में कैसा होइ जावे । कैसी बिरह बात समझावे॥
ज्यौं ठग ठगन करे ठगियाई। मारे माल लेन के ताँई ॥
ज्यौं बेपारी माल खरीदे । सौदा लोभ माहिं मन बीधे॥

---

(१) जाल। (२) एक लिपि में "बान" है दूसरी में "बाम", बान=तीर; बाम=स्त्री ।

रोकड़ बाँधि कमर के माहीं । चौकस करि के माल बिसाही[१]॥
उथलपथल कर कीन्हा सौदा । अपनी नजर देख मन बोधा॥

॥ दोहा ॥

या बिधि सतसँग में करे, रोकड़ कम्मर बाँध ।
चाँद सुरज जहँ लगि रहे, कभी न आवे हाथ ॥

॥ चौपाई ॥

माँगे माल संत से आँधे । जैसे कम्मर रोकड़ बाँधे ॥
खिजमत नहिं कछु खरचे दामा। सहज संत का माल निकामा ॥
सभी महात्मा कठिन बतावैं । यह जाने अस माँगे आवे ॥
यौं बुधिहीन करे लड़िकाई । यह तो मिले मेहर के माहीं ॥
ज्यौं जल भरा सिंधु के माहीं । तोला चाहे तोल मैं नाहीं ॥
गगरी जो अपनी भरि लावे । या बिधि पानी प्यास बुझावे॥
अस संतन मति तुले न भाई । है अतोल तोलन मैं नाहीं ॥
जो गगरी जल जीव बिचारे । संत कृपा से कारज सारे ॥

॥ दोहा ॥

सिंधु अथाह न थाह कहिं, मिले न वाका अंत ।
भटक भटक भव पचि मरे, को गति पावे संत ॥

॥ छंद ॥

सिंधु अगम अथाह जल को, अकल कर तोले तुही ॥
ऐसे अगम गति संत की, आगे नहीं ऐसी हुई ॥
कोइ कहे परख पिछान मैं, सोइ गिरि पड़े माहीं भुँई[२]॥
खोटे करम मन भोग करि, जस बस्त्र को सीवे सुई ॥
जो संत से आधीन होय, जब कर्म की आसा मुई ॥
जिव काज कारज की कहूँ, नर जाय जो ममता धुई ॥
भव सिंधु से केहि भाँति कढ़ जिव, जक्त यह औंधी कुई ॥
तुलसी तरक मन तोल के, जब छूटि हैं गाँठैं गुई[३] ॥

(१) मोल ले। (२) धरती। (३) गूढ़।

॥ दोहा ॥

संतन से माँगे नहीं, घट घट जाननहार।
जीव दया हिरदय बसे, नाहक करत बिचार ॥

॥ चौपाई ॥

मन सूरत चरनन मेँ लागी। वे हैँ हिरदे संत अनुरागी ॥
उनका बार बंक[१] नहिँ होवे। वे नित पाँव पसारे सोवैँ ॥
जैसे साँड़ दगे जग माहीँ। उनको जग कोइ पूछे नाहीँ॥
मोहर छापकागजपरलागी। रुके न जीव सुरत बड़भागी॥
जो कोइ संत सरन के दागी। जिनसे काल दूर होइ भागी॥
जमकीजालनिकटनहिँआवे। मारगछाँड़िअलगहोइजावे॥
साँचे मन आवे बिस्वासा। संत चरन नहिँ दूजीआसा॥
जिनकेभर्म निकट नहिँ आवे। एक आस विस्वास समावे॥

॥ दोहा ॥

संतन की साखी सभी, देत जुगन जुग ज्ञान।
सतसँग करिके बूझि ले, करत सभी परमान ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

कह हिरदे यह सच कर भाखी।कहे अस सुनीसबनकीसाखी॥
अब वह कथा कहो बिस्तारी। चार खानि में जीव दुखारी॥
जस जस कर्म जीव ने कीन्हा। सुनकर आवै हृदय अकीना॥
कर्म जक्त मैँ बहु परकारा। जसजिनकीकरनीबिस्तारा॥
जो जिन कर्म किये हैँ जैसे। सो तिन ने फल पाये कैसे॥
यह भवसिंधु बड़ा दुखदाई। कौन कर्म केहि खानसमाई॥
इच्छा सँग दुख देवनहारी। रहे नाहिँ ढिंग ज्ञान करारी॥
तन धर के दुख सहे अनेका। जो जस कहो खानि का ठेका॥

---

(१) टेढ़ा।

॥ दोहा ॥

कौन कर्म किन ने किये, करनी के परभाय ।
जौन जीव जेहिँ खानि मेँ, पड़े कहो समझाय ॥

सज्जन और असज्जन का भेद

(तुलसीदास वाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे भवसिंधु अपारा । याका नहीँ वार अरु पारा॥
ज्योँ दरियाव माहिँ है सोई । मोती संख सीप सब होई॥
ऐसे जग जिव को पहिचानो मोती संख सीप सम जानो॥
कोइ मरजीवा मोती पावे । कोइकोइहाथसंखचढ़िजावे॥
कोइ सनीप सीप ही पावा। अस अस न्यारे जीव प्रभावा॥
मोती की कीमत है भारी । संख सीप की कहूँ बिचारी॥
सुभ के कर्म संख सम जाना । जोई असुभ हैँ सीप समाना॥
नहिँ नर जग मेँ एक समाना। मोती संख सीप योँ जाना॥

॥ दोहा ॥

मोती सज्जन को कहैँ, संख असज्जन जान ।
ज्योँ कनिष्ट[१] सीपी भई, ऐसे परख पिछान ॥

॥ चौपाई ॥

सज्जन की सूरत मतवारी । उनकी रीति जक्त से न्यारी॥
सज्जन सतसँग संत सुहावे । सूरत उनकी अंत न जावे॥
जो कोइ जीव जक्त मेँ ऐसा । कधी न पावे कर्म कलेसा॥
संतन की बानी अस बोले । जो कोइजीवसमझमेँ तोले॥
सुनो असज्जन का ब्योहारा। करनी बुद्धि कहूँ अनुसारा॥
साँच झूँठ नहिँ परखे बैना । अपनीबुद्धिसमझकाकहना॥

---

(१) छोटी।



उलटै बात बचनै नहिँ बूझै । सो अज्ञान ज्ञान नहिँ सूझै॥
अपनीबुद्धि अधिक करिजाने। सतसँग का विस्वास न माने॥

॥ दोहा ॥

कुटिल बचन बोले सदा, कधी न माने हार ।
धार बहो बहु फिरत है, कर्म कुमति अनुसार ॥

॥ चौपाई ॥

और असज्जन का सुनु बैना । फूहरबचनबाकमुखकहना ॥
कहे अनीती अधम अनारी । गुन के हीन जक्त संसारी॥
जो कहुँ जाति पाँति में जावे । अड़बंगी इक बात चलावे॥
बचन उलटि के अपनी ठाने ।हलुकी गरू[1] नाहिँ पहिचाने॥
सभा माहिँ मसकरी[2] चलावे ।ज्याँ मद पिये खुमारी आवे॥
चाल चले छाती उचकाये । टेढ़ी पाग छोर लटकाये ॥
एड़ी बेड़ी कहे बनाई । कुल मरजाद ऊँच ठहराई ॥
घाटि[3] करन के चूकत नाहीँ। घट में घाटि बसे मन माहीँ॥

॥ दोहा ॥

कूड़ कुमति में गरक[4] है, फरक न माने एक ।
जो कोइ अक्किल की कहे, उरझे उलट परेत ॥

॥ चौपाई ॥

अच्छी सुन कूकर सम भूँके । खोटी कहत नेक नहिँ चूके॥
अच्छी में लज्जा ले आवे । छोड़े लाज बुरी को धावे॥
जो कहुँ जाय बजारे भाई । हाट हाट पर हाँसी लाई॥
फिरते फिरे चिकनियाजैसा । सेखी बड़ी गाँठि नहिँ पैसा॥
जो पैसा होय हिर्स बढ़ावे । मैली बात समझ मन लावे॥
नहिँ नगीच नीके के जावै । फोक फरेब[5] करन को चाहै॥
माल पराये को दिल दौड़े । घूमे कुफर बात में बौरे॥
ऐसे मलिछ बिषय के मूरा । बाँधे सदा धूर के पूरा ॥

(१) भारी । (२) ठठोली । (३) घात । (४) डूबा हुआ । (५) दग़ा ।

असज्जन अंडज खानि में उतर जाते हैं

॥ दोहा ॥

अपकीरति जग में बढ़ी, सब सिर डारे धूर ।
लाज कधी आवे नहीं, साँचो कहे न मूर ॥

॥ चौपाई ॥

यह तो ऊपर जग ब्योहारा । मन अंदर का सुनो बिचारा॥
मन इच्छा सँग साथ चलावे । इच्छा मन सँग तरँग उठावे॥
जहँ मन लगे तहाँ तन जावे । मनमनमिलेमिलापकहावे॥
जैसे नदी लहर की लहरी । जैसी बास चले मन केरी॥
यह जग जीव लहर में माता । दुनियानामपड़ोयहिभाँता॥
मन की कला अनेकन होई । मन इच्छासँगबादबिगोई॥
मदिरा को कलवार बनावे । पीवे दाम देइ दुख पावे ॥
मन भट्ठी कलवार चढ़ावे । कलवारिन पी पीव छकावे॥

॥ सोरठा ॥

मन है मुकर[1] कलार, कलवारिन इच्छा भई ।
बिष रस बिषम बिकार, रात दिवस करते रहैं ॥

॥ चौपाई ॥

जाग्रत में मन लागे जोई । पहुँचे सुपने में तहँ सोई॥
छल बल करे रीति दरसावे । जाग्रत सो सुपने में पावे॥
लहर उठे जो मन के माहीं । सो तदरूप देख दरसाई ॥
या मन मन इच्छा जिव बाँधे । कर्म करूर ताहि में फाँदे॥
जैसे माल भरे बैपारी । जाय दिसंतर बेचे भारी ॥
ऐसे कर्म खरीदो लेखा । चौरासी के भोग अलेखा॥
जो हिसाब कागज में होई । धर्मराय भुगतावे सोई ॥
नरक स्वर्ग दोउ बने करूरा । या में से कोइ बाचे पूरा ॥

---

(१) आईना, दर्पण ।

॥ सोरठा ॥

अंड असज्जन रीति, जन्म जन्म जोनी पड़े ।
अंडज में बिसराम, तीन[1] तत्त तन मन धरे ॥

॥ छंद ॥

अब यह असज्जन रीति की, करनी करम गति यों भई ।
मर के अंडज की खानि में, तन पाय के भुगते सही ॥
अप* काय बाई† तेज‡ तत बस, बास में काया कही ।
सागर कलप के बाद[2] फिर फिर जोनि में आवे वही ॥
कोइ कर्म के अनुसार करि, चर[3] खान में उतपति रही ।
जुग जुग वतन[4] करिके रहे, नर की जोनी पावे नहीं ॥
जस बाट में कोइ बृच्छ फल, पड़ पड़ पके गिर के भुईं ।
कोइ संत आय उठाय मुख, जब खाय नर जोनी भई ॥
दइ[5] जोग से संजोग अस कोइ, आनि के बरते सही ।
करनी करे नहिं पार पावे, संत की किरपा भई ॥

॥ सोरठा ॥

अस जड़ खानि सुभाव, निकसन का रस्ता नहीं ।
संत सँवारैं आय, नर तन पावे मुक्ति मन ॥

॥ चौपाई ॥

अंडज से जो नर तन पावे । जाका भाखूँ सकल सुभावे ॥
खानि लच्छ मैं कहूँ समझाई । अंडज से नर देही पाई ॥
खानि जुगन जुग रहे अनेका । उनकाल खपहिचान परेखा[6] ॥
मन की बसन बसे परतीता । वह उपजावे वैसी रीता ॥
जस जस रहे खानि रस माहीं । जस जस बुधि उपजावे भाई ॥
जैसी रहनि चाल नित चाले । लच्छ अलच्छ दोई प्रतिपाले ॥

---

(१) अंडज जीव (पक्षियों) में तीन ही तत्व अर्थात तत्व-सम्बन्धी गुण होते हैं—* जल, † वायु और ‡ अग्नि । (२) पीछे । (३) चार । (४) घर मान कर । (५) दैव । (६) परख ।

जोइ रस में मन रहा निदाना। सोइरसदरसेपरखपिछाना॥
रहनि रहे सब आसक रीती। सो आसक होइ परसे प्रीती॥

॥ सोरठा ॥

अंडज खानि सुभाव, धरा जो नर तन आइ के।
लच्छन के बर्तमान, जोनि जन्म जुग जुग रहे॥

॥ चौपाई ॥

आलस नींद नैन भरि सोवे। काम क्रोध दालिद्दर होवे॥
चंचल चोर चुगल चतुराई। माया मोह ममत अधिकाई॥
गुरु के चरन चित्त नहिं लावे। संतन की संगति नहिं भावे॥
भूत पिसाच रु पूजे देवा। देवी दरस और नहिं सेवा॥
तीरथ बरत बहुत मन लावे। ठाकुर प्रीति भाव चित चावे॥
बेद पुरान कहन बहु भावे। सिवलिंगपरसिपूजिलौलावे॥
बन बाहर घर आगि लगावे। रोवत माहिं हँसी उठि आवे॥
छिन सुर तान अलाप सुनावे। दुख सुख पीर पराई न आवे॥
कोइकछुकहेगुस्साभरिआवे। जिद्द पड़े मारन को धावे॥

॥ सोरठा ॥

या बिधि उद्मद ज्ञान, अज्ञानी भव भटक में।
अटक न माने काहु, पूरब करनी करम फल॥

॥ चौपाई ॥

कोइ कोइ को देखत कछु देवे। मन मलीन मैला करि लेवे॥
मन में झुरे आप दुख पावे। अंदर माहिं बहुतपछितावे॥
जिकरबिबादबहुतमनभावे। ज्ञानध्यानसुधिबुधिबिसरावे॥
सुरख नैन रतनारी[1] रेखैं[2]। भौं टेढ़ी दिरगन से देखे॥
मुख में लार बहे दिन राती। बहु बिधि हेत जुवारी साथी॥
नीचा आप ऊँच मन राखे। मन का मोट मधुरता भाखे॥
हम समान दूसर नहिं कोई। या बिधि बसे हिये में सोई॥

(१) लाल। (२) आँख के डोरे।

कुबरी पीठ पेट हलुकाई । सुनेकोइ बात तुरत कहेजाई॥
बाँकी धरन मूड़ टेढ़ाई । यह लच्छन बहु भाँतिरहाई॥

॥ सोरठा ॥

यहि बिधि बरनन बाक, भाख कहूँ प्रकृती सभी ।
कभी न चूके भाव, जो लच्छन यहि में कहे ॥

॥ चौपाई ॥

जामें कुटुँब काज यों धावे । ज्यों कूकर पिल्ले को चावे ॥
लेत एँड़ाई तन को तोड़े । सभा बैठि के मूछ मरोड़े ॥
मीठे भोजन अधिक सुहाई । फल फलहार खाय बहु भाई ॥
जाने न जाति आपनी छोटी। बातें करे बड़न से मोटी ॥
चाल चले तीतर की नाईं । काग सुभाव रहे मन माहीं ॥
लंपट बात करे बरियाई[1] । अंदर सदा कपट रहे छाई ॥
अंडज जो जोइ खानकहावे । तत्तहीन भव भटका खावे ॥
कोइ संजोग पड़े अस भाई । नर की देँहि धरे तब आई॥

॥ दोहा ॥

तीन[2] तत्त अंडज कह्यौ, अह्मादिक सब कोय ।
नर अंडज से जो भया, यह सुभाव प्रति होय ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे इक संसय लाई । स्वामी मोहिँ कहो समझाई॥
अंडज से जिन नर तन पाऊ । जाका भाखो सकल सुभाऊ॥
तीन तत्त अंडज में कहिया । उन नर तन कहोकैसे पइया॥
नर तन में तत पाँच बतावे । तीन तत्त कस नर तन पावे॥
यह संसय मोरि दूर बहावो । हिरदे चित संसय समझावो ॥
तत्त हीन यह क्योंकर भयऊ। सोस्वामीमोहिँबरनिसुनयऊ॥

(१) शेखी । (२) देखो नोट पृष्ठ ३३ में ।

याकी बिधी कहो बरतंता । कस कस भाख सुनाये संता।।
यह अचरज मोरे मन आवा। सो स्वामी पूछूँ परभावा ।।

॥ सोरठा ॥

नर तन धर ततहीन कस, कस अंडज में जाय ।
सो मोहिं बरन सुनाइये, जोनि खानि परभाव ॥

कर्म फल से खानों में उतार

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह बात अतंता । सूरतवंत कहे सब संता ।।
जस जस देखा अंड पसारा । सो तोसे भाखूँ अनुसारा ।।
परथम नर बैराट बनाया । तीनलोक याहि उदर समाया।।
प्रभुता आप आपनी भूला । किरियाकरमकरेतज मूला।।
कर्म कलंदर[1] ने भटकाया । पिंडज चार तत्त में आया।।
चार तत्त जड़ रहे अचेता । तीन तत्त अंडज में रहता।।
कर्म होय अधिकारी भाई । टूटे तत्त एक जब जाई ।।
तब नर से पिंडज में आवे । पिंडज चार तत्त तन पावे।।

॥ दोहा ॥

नर देही ततहीन से, पिंडज माहिं पसार ।
सार भुलानो आपनो, खानइ खानि खुवार[2] ॥

चार खानों का भेद

अबपिंडज से अंडज माहीं । पसुवत देह बने कछु नाहीं।।
जड़ता तन निरज्ञान कहावे । कर्मभोगि फिरभव में आवे।।
भव के भार तत्त नस जावे । तीन तत्त अंडज तन पावे।।
असअस्थावर[3]उष्मज[4]लेखा। सुरतवंत कोइ करे बिबेका ।।
हिरदे नर तत पाँच कहाई । पिंडज पसू चार के माहीं।।

---

(१) बैरागी का भेष। (२) ख़राब। (३) जड़ सृष्टि जैसे पेड़ वग़ैरह।
(४) गरमी से पैदा हुई सृष्टि।

तीन तत्त अंडज तन पावे । दो तत उष्मज खानिकहावे॥
अस्थावर तत एक रहाई । योँ ततहीन गुनन के माहीं॥
पिंडज चार तीन तत आया । योँ अंडजकी खानि कहाया॥

॥ दोहा ॥

कर्म करे बरियार से, तत्त छीन होइ जाय ।
तत्त घटे घट खानि में, दुख सुख माँहि बिलाय ॥

॥ सोरठा ॥

कही असज्जन रीति की, उतपति कर्म सुभाव ।
अंडज की करनी करे, योँ तत तीन समाय ॥

॥ दोहा ॥

सागर मेँ जो संख है, रंक[1] जीव कृत भाव ।
हिरदे यह गति योँ भई, संख असज्जन राव[2] ॥

(हिरदे बाच)

॥ चैापाई ॥

जब हिरदे बोले अस बाता ।स्वामीसमझिलीन्हबिख्याता॥
जो स्वामी भाखैँ मुख बानी। सोसब हिरदे सुनि मन आनी॥
कहा असज्जनकापरभावा ।सो सब मोरि समझ मेँ आवा॥
अबवहबरनिकहोसहदानी। नर उष्मज तन क्याैँकरजानी॥
याका भेद कहो समझाई । नर तन तजि उष्मज को पाई॥
उष्मज के लच्छन दरसावो । नरतनतजिउष्मजसमझावो॥
सो बिरतंत[3]कहो अरथाई । लच्छन गुन कहो भेद बताई॥
कौन कर्म नर तन में कीन्हा। जासे उष्मज खान अधीना॥

॥ सोरठा ॥

नर तन की करतूत, उष्मज में बासा किया ।
दई कर्म भ्रम भूत, मन तन में बासा लिया ॥

---

(१) दरिद्र । (२) राजा । (३) वृत्तान्त ।

॥ चैापाई ॥

उष्मज से नर तन कस पावे। भिनभिनकहोसमझमेँआवे॥
करनी कौन खानि मेँ बूड़ा। कस नर देही मिले अगूढ़ा[1]॥
नरतनमिलाभक्तिनहिँपावा। कौन कर्म के भोग प्रभावा॥
नर की देह जीव निस्तारा। सो नहिं पावे कौनि बिचारा॥
यह दुर्लभ तन सभी पुकारैँ। जिवबाजी नर तन मेँ हारे॥
नहिँकछुज्ञानबिबेकबिचारा।बहुबहि जाय सिंधु की धारा॥
सिंधु कराल बहे बहु भाँती। भँवर करूर[2] उठे दिन राती॥
यह संसार भँवर बड़ भारी। जो उबरे जन रहे करारी॥

॥ दोहा ॥

नर तन तो पावे नहीँ, पसु पंछिन मेँ जाय।
अस्थावर उष्मज रहे, नर तन बाद गँवाय॥

अज्ञानता और भोग विलास मेँ आशक्ती का फल

(तुलसीदास बाच)

॥ चैापाई ॥

सुनु हिरदे नर बड़ा अयाना। सतगुरुसोधिचरननहिँजाना॥
सतगुरुबिननरफिरतभुलाना। ज्योँ केहरि[3] भेड़न मेँ आना॥
जग भेड़न की चाल चलाई। सतगुरु बिना रह्यो उरझाई॥
जुगजुगभटकिभूलिदुखपाया। मन इंद्री गुन माहिँ चलाया॥
लच्छ अलच्छ कहूँ का भाई। के हिरदे कहे कथा बढ़ाई॥
इक इक बात कहूँ बिस्तारा। तोनहिँकहनउमरनिरवारा॥
बन बन खेले जीव सिकारा। मारिजीवपुनिकरतअहारा॥
दयाहीन मुख स्वाद सँवारा। जिह्वा का बंधन बिस्तारा॥

(१) निर्मल। (२) बिकराल। (३) शेर।

॥ सोरठा ॥

जीवत मारे जीव, कधी दर्द आवे नहीं ।
तलफत जीव नसाय, बेदर्दी बूझै नहीं ॥

॥ छंद ॥

हिरदे अधम नर रीति की, बरनन कहा कहँ लग कहूँ ।
जग रीति को रहे जीति जिन से, मैं पुनो हारे रहूँ ॥
कोइ खोट नीक बिचार की अस, कहन मैं सब की सहूँ ।
जग को निरखि निज नैन से, सुख चैन हित चित क्यों बहूँ ॥
खोटी कुभंडी चाल जग से, भाग कर गुरु को गहूँ ।
अस कुटिल काँट करील[1] जग लखि, लोग से भाग्यों महूँ[2] ॥
जग जीव के यह कर्म अघ, बेफायदे नाहक लहूँ ।
तुलसी अधम संसार की गति, हारि के हिरदे कहूँ ॥

॥ सोरठा ॥

अकरम करम बिचार, जीव हतत हारे नहीं ।
आतम होत बिनास, आस अवस पावे यही ॥

॥ चौपाई ॥

बाक बिलावल[3] मैं समझाऊँ । जग अचेत की आस सुनाऊँ ॥
कहुँ कहा रीति भाँति बहुतेरी । कर्म कुटिल से प्रीति न फेरी ॥
जग को तोल तरक कर हारा । कहा बिलावल मैं अनुसारा ॥

॥ बिलावल ॥

हिरदे जग तरक तोल, बोल हेरि हारा ॥टेक ॥
देखो दृग काल साल, माँगे स्वर्ग बास हाल ।
लिये मोह भर्म जाल, खयाल खोज पारा ॥
बूझै नहिं साध संत, खोजे नहिं आदि अंत ।
पावे कस पिया पंथ, बूड़े भव धारा ॥

(१) एक काँटेदार झाड़ । (२) मैं भी । (३) एक राग का नाम ।

ऐसा भव भर्म माहिँ, काम क्रोध लारा ॥ १ ॥
राम प्रिये परन ठानि,मन से सुत त्रिये मानि ।
माया बस पड़त खानि, बूझ खोज पारा ॥
यहि बिधि अज्ञान बास, बूझै मृत अंत नास ।
प्रीति मुक्ति कहे अकास, स्वाँस नास न्यारा ॥
ऐसी बुधिहीन चीन्हि, बूझि ले गँवारा ॥ २ ॥
चाहत पद राम बास, रामही पूरन प्रकास ।
उन के बस काल फाँस, आस मौत मारा ॥
वासे कोउ करो न हेत, बूझो नर अंध अचेत ।
सूरति छबि नाम लेत, चौथे पद पारा ॥
याही बिधि बान ठान, संत पंथ न्यारा ॥ ३ ॥
देखो कृत कर्म काग, यासे पुनि निकसि भाग ।
साधो सत सुरति लाग, लख अकास पारा ॥
ऐसी लख मान सीख, नाहीं भव खानि नीक ।
ऐसी अज अमर लीक, हिरदे तन छारा ॥
याही घट खोज रोज, चौज मौज मारा ॥ ४ ॥
भाखा सत मत पसार, ताका भव भिन अपार ।
चाखा पद मूर सार, जाहिर जग सारा ॥
पावे सत मत्त सार, देखे अगमन बिचार ।
उतरे भव सिंधु पार, नौका भव वारा ॥
हिरदे घनघोर सोर, निरतो चित चारा ॥ ५ ॥
हिरदे तन माहिँ पैठि, छाँड़ो नर सकल टेक ।
आदि और अंत देखि, टेक एक सारा ॥
कहनी मन मेँ बिचार, तेरा कोउ ना निहार ।
निरखो निज नैन पार, वाहि को अधारा ॥
हिरदे यह खूब अजूब, पावे मन मारा ॥ ६ ॥

मोको सब जक्त कहत, तुलसी के राम टेक।
जाना निज एक अलेख, संतन की लारा[1] ॥
जाके नहिं रूप रेख, देखा जाइ जो अदेख।
ऐसा पद पार पेख, पंकज[2] गुरु चेरा ॥
हिरदे तत कर बिचार, राम रमत हेरा ॥ ७ ॥
हिरदे सतगुरु की दृष्टि, ता से निरखा अदृष्ट।
सत्तलोक पुरुष इष्ट, वे दयाल न्यारा ॥
मोरी लौ चरन लार, छिन छिन निरखत निहार।
कीन्हा पद पूर पार, काल जाल मारा ॥
हिरदे यह जक्त भ्रष्ट, देखा दीदारा ॥ ८ ॥
हिरदे यह अंड खंड, निरखा सगरा ब्रह्मंड।
मारा मन काल डंड, छाँड छूँड न्यारा ॥
धरती और चंद सूर, निरखा सगरा जहूर।
लीन्हा रन खेत सूर, सतगुरु मत सारा ॥
हिरदे दीदा निहार, भागे बट पारा ॥ ९ ॥

॥ सोरठा ॥

हिरदे हेर बयान, हरख हृदय प्यारा लिया।
जड़ जिव जग अज्ञान, कहा जाने यह भेद मत ॥

॥ दोहा ॥

जड़ जूड़ी त्रय ताप, जुगन जुगन तपता रहे।
गहे न गुरु गम बास, आस अथिरता की गहे ॥

॥ चौपाई ॥

दुनिया माहिं दुरंगी रीती। नहिं कनिष्ट[3] नर निज घर प्रीती ॥
सिंधु माहिं सीपी जिमि होई। यों कनिष्ट जिव जक्त बिगोई ॥
अब सुनु आगे नर बिस्तारा। यह मन अधम नेक नहिं हारा ॥

---

(१) साथ। (२) कँवल। (३) छोटा, यहाँ "नीच" के मानी हैं।

परथम नर बैराटी काया । कर्म भोग पसु पिंडज पाया॥
तत्तहीन पिंडज मैं भाई । अंडज तन तत बास कराई॥
अंडज मैं करनी से हारा । उष्मजखानिभयासिरभारा॥
चूक पड़ी करनी मैं भाई । ऊँचे चढ़ि नीचे गोहराई[1]॥
हिरदे सतगुरु बिन बौराया । आदिअपनतजिउलटाआया॥

॥ दोहा ॥

परथम नर तत पाँच मैं, पिंडज में तत चार ।
तीन तत्त अंडज रहे, उष्मज दो बिस्तार ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

उष्मज का लेखा समझावो । हिरदे को यह भेद सुनावो ॥
अबसबकथाकहोबिस्तारी ।समझ पड़ेबिधिन्यारीन्यारी॥

(तुलसीदास बाच)

तब तुलसी कहे यह नर काया ।बेद पुरान मुनिन भटकाया॥
कर्म रीति नीके समझाई । आदि अधर घर राहभुलाई॥
जग की रीति करन सबलागे । सिंधु गये तजि रहे अभागे॥
दुनियाजगदिनरातिदिवानी । ब्रह्मबंधनरभयेजिवप्रानी॥
समुँदर माहिँ सीप का लेखा । यौं कनिष्ठ नर जीवबिबेका॥
सुरत सुमन[2] तजि नीचेआई । कुमन[3] करंदे[4] से चित लाई॥

॥ दोहा ॥

पाँच पचीसो तीन मिलि, इच्छा कीन प्रचंड ।
मार मार सब कोउ करे, ज्यौं दुखिया पर डंड ॥

॥ चौपाई ॥

याबिधिउष्मजखानिसमाया।नरतनतजिउष्मजमें आया॥
परथम नर करनी बिस्तारा । तपफलराजभोगअनुसारा॥

(१) पुकारा। (२) अच्छा मन अर्थात ब्रह्मांडी मन। (३) बुरा अर्थात पिंडी मन। (४) कारिन्दा।

जुगनजुगनतपमारगलीन्हा। नर तनतजेराजसुखकीन्हा॥
जिवफलभोगिरहेबहुभाँती। ममताबढ़ीअधिकदिनराती॥
चक्रवर्त राजा होइ जाई। अंदर यों आसा उपजाई॥
कोइ संजोग पड़ा अस भाई। चहुँदिसचक्रफिरेजगमाहीं॥
चक्रवर्त होय सबबस कीन्हा। मकड़जन्म देह तजिलीन्हा॥
टूटे पाँव लँगड़ता चाले। माया ममता फिरे बिहाले॥

॥ दोहा ॥

यों नर तन तजि जीव यह, उष्मज माहिं समाय।
दुख सुख भोगे कर्म को, लख सत्ताइस माहिं॥

उष्मज जीव संत चरन से कुचल जायँ तो उद्धार हो जाता है

॥ चौपाई ॥

यह आसा उष्मज मैं लाई। लख सत्ताइस जोनि कहाई॥
कृत्रिम[1]संगमनमायाब्यापी। रोग सोग दुख सुख संतापी॥
जोजोउष्मजखानिकहाई। भुगततफिरे जुगन जुगमाहीं॥
कोइसंजोगउदय कहुँहोई। बिचरत संत मिले कहुँ कोई॥
मारगपाँवचलतकेमाहीं। चरन पड़े जिव मुक्त कहाई॥
पाँवतरेकोइजीवकुचाना। जो जिव मरे धरे नर जामा॥
यों उष्मजसे नरतनआवे। और भाँति कहुँ गेल न पावे॥
करनी करे भोग फलपावे। नर तन कोटि करे नहिंआवे॥

॥ दोहा ॥

संत चरन अति बहुत बड़, जो जिव चरन खुँदाय[2]॥
नर जामा पावे वही, संत चरन परभाव॥

---

(१) बनावरी। (२) पिस जाय।

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

स्वामी से पूछूँ इक बाता । सो मोहिं बरनि कहो बिख्याता॥
चक्रवर्त मक्कड़ तन धारा । यह कारन कहो कौन बिचारा॥

(तुलसीदास बाच)

कहे तुलसी हिरदे सुनु काना । ममता बढ़ी बढ़े अभिमाना॥
यह हिरदे सब जग बिस्तारा । चक्रवर्त कहो कौन बिचारा॥
बढ़ बढ़ गये राज मद माहीं । इंद्र पदी लेने को चाही ॥
जब ममता ने मारि गिराया । तन मक्कड़ यह यौं बिधि पाया॥
माया बड़ी चूहड़ी[1] होई । नर बस करन मोहनी सोई ॥
जो जो जोनि खानि मैं डारा । जीव ममत माया बिस्तारा॥

॥ दोहा ॥

हिरदे करम कराय के, देत पलीता बार[2] ।
अंदर आगि लगाय ज्यौं, दगन करे तन झाड़ ॥

॥ चौपाई ॥

यह ऐसे मक्कड़ तन पाया । हिरदे तो को बरनि सुनाया॥
उष्मज जीव खानि यौं आवै । यौं आसा सुख भोग समावै॥

(हिरदे बाच)

इक हिरदे संदेह उठावा । स्वामी भर्म एक मोहिं आवा॥
उष्मज से नर तन जिन पावा । संत चरन के पद परभावा॥
ऐसे बरनि कही तुम बानी । यह दरसावो भिन भिन छानी॥
नर तन मैं लच्छन दरसावो । लच्छ अलच्छ सभी समझावो॥
रहनि गहनि कौनो बिधि होई। सो स्वामी कहो बरनि बिलोई॥
उष्मज खानि लच्छ बिस्तारा । नर तन मैं किन कस कस धारा॥

॥ सोरठा ॥

खानि लच्छ परभाव, नर तन मैं कस बूझिया ।
संसै समझ उपाव, बरनि कहो सब भेद यह ॥

---

(१) भंगिन । (२) जलाना ।

असज्जन का रूप और लक्षण

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह खानि सुभाऊ । दो तत दुर्गम पाँच तत माहूँ॥
बुद्धिहीन जड़ता के माहीं । तन छूटे रस खानि सुभाई॥
जक्त माहिं बड़ भक्त कहाई । माला कंठी अधिक सुहाई॥
चंदन तिलक लगावे खोरी । झूठा ज्ञान करे बरजोरी ॥
दसन[1] बहुत बड़ बदन[2] भयाना[3]। गुरु के बचन सुने नहिं काना ॥
गुरु बानी कबहूँ नहिं माने । सुनें न कभी न हित पहिचाने ॥
गुरु को मेटि करे अधिकाई । निंदा करे गुरुन की भाई ॥
बातैं करे मूढ़ की नाईं । ज्ञानी बनि कथि ज्ञान सुनाई॥

॥ सोरठा ॥

यह अस बरन सुभाव, बर्तमान ऐसा रहे ।
गहे कर्म तन पाय, सहाय सुरत समझै नहीं ॥

॥ चौपाई ॥

बातैं कहत नाहिं सरमावे । ज्वाब स्वाल नहिं पूरा आवे॥
पाप अँदर मुख भाखे दाया । सो जिव जम के बंधन सहिया॥
नाक बड़ी सूवा की नाईं । पीरे नैन माहिं सुरखाई॥
रति[4] करने चोरी से जावे । कहे कोइ लाख सरम नहिं आवे॥
लम्बे पाँव परखिये सोई । अँगुठा से अँगुरी बड़ होई॥
कान सुने स्वारथ की बात । परस्वारथ के डगर[5] न जाते॥
हाँसी करे और की मीठी । कहते ज्वाब बँधे मुख सीठी॥
लेत पराया देत न भावे । माँगे जब लड़ने को जावे॥

॥ दोहा ॥

हिरदे यह लच्छन सुनो, गुनो गिरा के माहिं ।
तन मन भीतर और है, कहते और बनाय ॥

---

(१) दाँत । (२) चिहरा । (३) भयानक । (४) मैथुन । (५) रास्ता ।

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

यह स्वामी इक संसैआई । मोरे भर्म भया मन माहीँ॥
संत चरन मेँ जीव कुचाना । तुमने कहा भया नर जामा॥
यहबिस्मय[1]भइअंतरजामी । स्वामीकहनिपरखपहिचानी॥
संत चरन मेँ जीव खुँदाना । भयानरबरननऔरबखाना ॥
उष्मज से नर की भइ काया । उनका बरनन बरनि बताया॥
यह बिचार करिमन के माहीँ।स्वामी सन्मुख आनि सुनाई॥
यह सुन के मन भया अँदेसा । स्वामी भाखो सकल सँदेसा॥
याकीमोहिंतफसील[2]सुनावो।बिधिरबचनसमझसमझावो॥

॥ दोहा ॥

संत चरन बड़ भाग से, मिले कहँ सब संत ।
मोको सुनि संसय भई, बानी बचन बृतंत ॥

संत की अपरंपार महिमा

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

कहे तुलसी हिरदे सुनलोजे । यह संदेह कभी नहिँ कीजे॥
संतनकीगतिअगमअतोला । उनके बानी बचन अमोला॥
उनका भेद कोई नहिँ पावे । कोटिनजन्मसमाधिलगावे॥
क्या जानैँ जग जीव बिचारे । खोजत बड़े बड़े सब हारे॥
ब्रह्मा बिस्नु महेस कहावा । वह खोजतकहिँ पारनपावा॥
बेदहु नेत नेत गोहरावे । औतारी कोइ पार न पावे॥
यह का लखे जक्त जिव अंधा । मन तन जन्म काल के फंदा॥
दृष्टि पड़े देखन मैँ सोई । वे अदृष्ट गति अगम अगोई॥

(१) संदेह । (२) विस्तार ।

॥ दोहा ॥

संतन की महिमा सभी, कहते माहिँ लजाय ।
चरन आस सब कोइ करे, भागन से मिलि जाय ॥

॥ चौपाई ॥

वे हैँ सत्त पुरुष अबिनासी । हैँ सतगुरु पूरन पद बासी ॥
दृष्टि देह देखन मेँ नाहीं । हैँ अदृष्ट गति अगम अथाही ॥
उनकी गति सूछम समझाऊँ । हैँ अरूप रूप नहिँ नाऊँ ॥
सूरज तेज बड़ा जग माहीं । उनसे अधिक तेज कोइ नाहीं ॥
कोटि सूर इक रोम लजावे । संतन की महिमा अस गावे ॥
और कहाँ लगि बरनि बताऊँ । थोड़ी कहन माहिँ समझाऊँ ॥
कोटि सूर इक रोम कहाई । ऐसे रोम करोड़न भाई ॥
कहँ लग हिरदे बरनि बताऊँ । यह सुनु सौदा अगम अथाऊँ ॥

॥ दोहा ॥

यह अथाह के थाह को, कोटिन करे उपाव ।
सतसँग बिन जाने नहीं, दया दीन परभाव ॥

॥ चौपाई ॥

हिरदे सतगुरु का पद भारी । यह कहा जाने जक्त अनारी ॥
किर्म कीट उष्मज के माहीं । जड़ता ज्ञान खानि मेँ आहीं ॥
यह कहा जाने जीव अचेता । बुधि अबूझ हिरदे नहिँ हेता ॥
चेतन तन मेँ चेत न पावे । जड़ता तन की कौन चलावै ॥
जड़ तन खानि तीन बिस्तारा । चौथे नर देही निस्तारा ॥
तन अचेत सुधि अपनी नाहीं । पसुवत मेँ नहिँ ज्ञान समाई ॥
संत कृपा बिचरन परभाऊ । यह अचेत वे सहज सुभाऊ ॥
उन के मन इच्छा मेँ नाहीं । चले जातु हैँ सहज सुभाई ॥

॥ दोहा ॥

मरत जीव जो चरन से, सहज चलत के माहिँ ।
जो खुँदाय कुँच के मरे, छूवत नर तन पाय ॥

संत चरन परताप से, खानि राह रुकि जाय।
नर तन में सतगुरु मिलैं, मेटैं सकल सुभाय ॥

॥ छंद ॥

हिरदे सुनो गति संत की, बेअंत कोइ कहँ लग कहे।
तन मन सुरति धर ध्यान करिके, लै लगी चरनन रहे ॥
कहूँ और ठौर न छूट छटके, भटक भव भ्रम ना गहे।
जो चरन लीन अधीन होइ कर, चीन्ह चित से ना बहे ॥
पसु कीट किर्म कदाचि कोइ जिव, जान नर तन वे भये।
चित हित हिये में साँचि उपजे, सुरति तन मन से लये ॥
अस बचन बाक बिचार मन में, संत सब ऐसी कहे।
हिरदे समझ सब सोध खोली, बोध बोली को गहे ॥

॥ सोरठा ॥

जो जिव चरन निवास, और आस बिसराय के।
सत मत सूरत साथ, नित प्रति रहे लै लाय के ॥

॥ चौपाई ॥

जिन हिरदे यह बचन बिचारा। कबहुँ न रहे काल की जारा॥
नर तन में सतगुरु पद सेवे। संत चरन चित से लै लेवे॥
चरन छुवे छिन छिन में भाई। आठ पहर रहे लगन लगाई॥
मन में बास बसे नहिं औरी। संत दया से बंधन छोरी॥
जड़ चेतन बंधन की गाँठी। अंदर खुले भरम की टाटी॥
मैला मन साबुन से धोवे। गहि गुरु ज्ञान हिये में जोवे[1]॥
परम प्रकास भास दिन राती। दीपक ज्ञान ध्यान बहु भाँती॥
अगम अनैन नैन से न्यारा। सो जाने संतन का प्यारा॥

॥ सोरठा ॥

भक्ति पदारथ सार, यह नर जग जाने नहीं।
जग के बिषम बिकार, सो सब समझे साँच करि ॥

---

(१) ढूँढ़े।

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी इक संसय आई। हिरदेकोकहोसमझिसुनाई॥
उष्मज चरन भई नर देहा। नर तन मैं नहिँ संतसनेहा॥
यह कारन कहो कौन बिचारा। भर्मखोलिकहियेनिरबारा॥
चित संदेह जाय नर देही। उनके बचन कान नहिँ लेई॥
सच बिस्वासनहीं मन आवे। कहोस्वामीयहकौनप्रभावे॥
महिमा संत सनातन गाई। क्यौंयाकोबिस्वास न आई॥
सब अवतार भये जग आई। राम कृस्नदोउ नर तन माहीं॥
संत चरनकी महिमा गावैं। सब पुरान ऐसे गोहरावैं॥

॥ सोरठा ॥

सुनैं कथा नित कान, ब्यान बरन बूझैं नहीं।
संतन को जस जान, गायँ महातम सभो सब॥

चलनी ज्ञान और सूप ज्ञान

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह देखत भूला। ठगिठगिरचाकालतजिमूला॥
सुनि सुनिके सब बूझ बुड़ाई। खेत रहा खर नाज गोड़ाई॥
खेत रहा खर से भरि भाई। वा में नाज कौन उपजाई॥
यहिबिधिज्ञानसुनेनरलोई। नाज निकाइ[1] खरखेतीबोई॥
जैसे चलनी चून छनावे। चून सार गिरि चूकर[2] पावे॥
यहिबिधिज्ञानगहेजगसारा। तत्तबस्तुकोइनाहिँबिचारा॥
ज्ञान मान की बड़ी मोटाई। भक्ति गरीबी कोइ न पाई॥
संत चरन यासे नहिँ भावे। क्योंकर हिरदे साँच समावे॥

---

(१) उखाड़ कर। (२) चोकर।

॥ दोहा ॥

सूप ज्ञान सज्जन गहे, फूफर[1] देत निकार ।
सार हिये अंदर धरे, पल पल करत बिचार ॥

॥ चौपाई ॥

हिरदे नर यह बड़े अभागे । सार छाँड़ि चूकर में लागे॥
कहो वे फुलके[2] चहैं बनाये । चूकर के फुलके किन खाये॥
यह जग चूकर रीति समाना । संत चून फुलके पर ध्याना॥
चून चीन्ह कर करें रसोई । या बिधि जग खावेसबकोई॥
चूकर में नहिं भूख नसावे । यहि कारनकहिकरगोहरावे॥
कोइ सज्जन जन परमसनेही । माने बचन करे हित वेही॥
अगम सुधा रस अमृत बानी ।सो उनने गहेकरिपहिचानी॥
संत बचन हिरदे अभिलाषा । रस बिसेष सज्जन ने चाखा॥

॥ दोहा ॥

अमृत रूपी संत के, बचन गहे सुन कान ।
सो सज्जन सत रीति में, हित चित करत प्रमान ॥

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह खानि सुभावा । भइ नरदेहजड़ तनसे आवा॥
देह धरे छूटे जस खाना । जाका जैसे उपजे ज्ञाना ॥
नर तन पाय कहोका कीन्हा । लच्छन तो जड़वतकेलीन्हा॥
कर्म प्रभाव ज्ञान उपजावे । सतगुरुबिनकोज्ञानसुभावे ॥
जो रँग पगे वही खसबोई[3] । निकरैं तदपि तरंगैं सोई ॥
भँवर न करे चंप पर बासा । वह सुगंधि सँग रहे उदासा॥
ऐसा मन भँवरे की नाईं । नीकी तज फीकी पर जाई॥
नीमकीट[4]जसनीमपियारा । बिष को अमृत कहे गँवारा॥

---

(१) भूसी । (२) पतली रोटी । (३) खुशबू, सुगंधि । (४) नीम का कीड़ा ।

॥ दोहा ॥

बिष रँग के सँग में पगे, किया न मन को तंग ।
संग मिलै मधु मालती, जब निकसै कछु रंग ॥

॥ चौपाई ॥

मन भँवरा सतसँग जब पावे। हिरदै बिषय बास जब जावे॥
ज्योँ हलवाई करे जलेबी। अंदर खैंच पिये रस गैबी॥
अस संगति रस पियेअघाई। जब यह मनकीदुरमतिजाई॥
संगति मेँ सुनि देइ न काना। जासे नर तन में भरमाना॥
संगतिकरे रीति नहिँ जाना। कस कसछूटेमनअभिमाना॥
यह हिरदे योँ नर तन हारा। योँ मद ममता ने जग मारा॥
बिन सतगुरुनहिँकर्म नसाई। जो कदाचि करे कोटि उपाई॥
वे सूरज यह किरनि कहावे। भूमि भास तजि रबि मेँ जावे॥

॥ दोहा ॥

सूरज बसे अकास मेँ,किरनि भूमि पर बास ।
जो अकास उलटे चढ़े, सो सतगुरु के दास ॥
अललपच्छ[1] का अंड ज्योँ उलटि चले अस्मान ।
त्योँ सूरति सत सजन की, आठ पहर गुर ध्यान ॥

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह सज्जन रीती। जोई असज्जनकरेअनीती॥
सज्जन हंस मुक्ति पद पावे। बग बपुरा मछरी को चावे॥
ऐसे असज्जन सज्जन लेखा।उभय†बीचकछुकह्योबिबेका॥
यह जग अंध असज्जनजाने। संतन का मति कहा पिछाने॥
योँ भई अंध धुंध जग माहीँ। मनमत ज्ञान कहेँ गोहराई॥
साख महातम की पढ़ि गावे। फूटे हिया समझ नाहिँ लावेँ॥
कर्म कांड पर लीन्ह घटाई। जो उनकही समझनहिँपाई॥
योँ अज्ञान बसा जग माहीँ। कछु कछुखानिसुभावरहाई॥

---

(१) देखो नोट पृष्ठ ८ मेँ। †दो।

॥ दोहा ॥

यौँ हिरदे अज्ञान में, सब जग रहा भुलाय।
बिन सतगुरु उपदेस के, जुग जुग खेई[1] खाय॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

स्वामी अगमसुगमसमझाई। मन मोरे में खूब समाई॥
अंडज उष्मज के कहे बैना। स्वामी बचन सुने सुखचैना॥
अब वह कथा कहोसमझाई। अचल खानिका भेद बताई॥
नर अस्थावर[2] में तन पाया। जब बैराट प्रथम से आया॥
जब की करनी कहो बनाई। नर तन से अस्थावर माहीँ॥
तीस लाख अस्थावर जाती। उतपतिबरनमरनबहु भाँती॥
सो लेखा मोको समझावो। कस कस भयो भेद बतलावो॥
ऋषीमुनीजपतपबहुकीन्हा। वाहिसमयभयाअचरअधीना॥

॥ सोरठा ॥

ऋषी मुनी जप तप करैँ, जग कस कीन्ह बिचार।
नर तन तो तबही हता, कस चर अचर समान॥

नर को स्थावर योनि कैसे मिलती है

(तुलसीदास बाच)

॥ छंद ॥

हिरदे सुनो गुन बेद ने, जग बाँधि कर रचना करी।
मुनजन ऋषी तप जोग करि, जग बोध नर हिरदे धरी॥
कह्यो ज्ञान गुझ[3] बैराग बानी, बचन सुनि गुन में परी।
गुन गो[4] गिरा[5] बस बाँधि करिके, भर्म की आसा भरी॥
महातम कहे फल करम के, जस धरम को धारन धरी।
सुभ असुभ अंक बढ़ाय करि, जिव जन्म जग बुद्धी हरी॥

---

(१) बिष्टा। (२) जड़ सृष्टि अर्थात ऐसी सृष्टि जो चल फिर नहीँ सकती।
(३) गूढ़। (४) इंद्री। (५) बानी।

कोइ बोध सोधि न आप अस, जस नारियर भीतर गरी ।
जैसे बिधी बादाम मेवा, मद्ध में मींगी भरी ॥
कोइ संत ने यह अंत अंदर, देख कर सूरत करी ।
जग रचन के बस बास मन तन, तरँग मेँ सूरत जरी ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञान जोग बिज्ञान तप, सब मुनि कीन्ह प्रमान ।
जक्त आस बिस्वास दे, कर्म ईस परधान ॥

॥ चौपाई ॥

जैसे पुत्र सराफ सिखावे । कौड़ी से पैसा परखावे ॥
ज्योँ गुड़ियाँ लड़की लौ लावेँ । साँच पिया मिलने को चावेँ ॥
साँचे पिया मिले नहिँ भाई । झूठे काल दीन्ह उरझाई ॥
पिय तजि के दधिबेचनआईं । जब से गुजरी[1] नामकहाईं ॥
जब गोपाल गौ पालन लागे । रसदधिमोलबिक्कनजबलागे ॥
मन गोबिंद गौ इंद्री माहीं । नाद बिंद दधि बेचन आईं ॥
सो बिंद ने बिंदाबन कीन्हा । तनबैराटसमझिजिनलीन्हा ॥
यह कोइ भेदी भेद बतावे । जब रचना की बिधिकोपावे ॥

॥ दोहा ॥

योँ रचना यहि बिधि भई, छूटा मूल मुकाम ।
स्याम कंज के बीच मेँ , आय रहे निज धाम ॥

॥ चौपाई ॥

जग ब्योहार कर्म की बाजी । भूले मुल्ला पंडित काजी ॥
पढ़ि पढ़ि के सब खोज लगावेँ । पढ़ने पार भेद नहिँ पावेँ ॥
मुरसिद गुरू मिला नहिँ भाई । परखे बिना सराफी नाहीं ॥
ज्योँ सराफ रुपिया को परखे । गुरु दृष्टि हिये मेँ हरखे ॥

---

(१) गुजरी अर्थात गूजर जाति की स्त्री जो पछाँह मेँ दूध दही बेचती हैं और दूसरे उसके अर्थ "गुज़री हुई" या "पतित" के होते हैँ जिस से इस चौपाई मेँ खूबसूरती आजाती है ।

पाट कीट[1] की होत हगारा । गुरु लछ[2] से पीतंबर पारा[3]॥
अस गुरु ज्ञान मिले जब भाई । कर्म कीट से लेइ छुटाई ॥
परथमसतगुरुपद नहिंचीन्हा । जब बैराट कर्म बस कीन्हा॥
सो नर धरि आतम यह देही । छूटा गुरु पद सब्द सनेही॥

॥ दोहा ॥

सूरत भटकी भर्म मेँ, सब्द गुरू का ध्यान ।
आप अमर पद को तजा, कहँ पावे बिसराम ॥

॥ चैापाई ॥

कुंदन से सोना कर दीन्हा । सोना खोँट खार से कीन्हा॥
या बिधि जीव कर्म के खारा । क्योँकर के पावे निरबारा॥
परथम नर पिंडज की काया । फेरिपिंडपसुजोनिमेँ आया ॥
अंडज कर्म जोग अनुसारा । उष्मजजबसेआइतनधारा॥
अस्थावर तत एक रहाई । कर्म जोग करनी समझाई॥
कुंदन से अस सोन कहाया । खारकर्मजिवखोँटमिलाया॥
अब यह कथा कहूँ बिस्तारी । कुंदन सोन खोँट भया भारी॥
दीपामुनिकरेजोगअभ्यासा । जोजन एक द्वारिका पासा॥

॥ दोहा ॥

दीपा मुनि जोगी कहे, रहे द्वारिका पास ।
जोजन भरि वहि नगर से, करते तप अभ्यास ॥

॥ चौपाई ॥

यह गुजरात द्वारिका नाहीं । वह बूड़ी है जल के माहीं ॥
महातम बड़े मुनिन के माहीं । जिनसास्तरकीन्हेजगमाहीं॥
तप जप जोग भया परवेसा । यह सास्तर कीन्हे उपदेसा॥
कर्म उपासना ज्ञान दृढ़ाया । यामेँ सब जग को उरझाया॥
ज्ञान कांड मारग मत कीन्हा। फिर नर से नरदेही लीन्हा॥

(१) रेशम का कीड़ा । (२) दृष्टि । (३) बनाया ।

जिन उपासना आस बिचारी। मृग पसुवत अद्यादिक धारी
कर्म कांड जो जीव बिचारे। सो भये अचर खानि मैं सारे
जिनतपजोगकियामुनिराया। परथम तिन मुक्ती को पाया॥

॥ दोहा ॥

मुक्ति जो पूछे मुक्ति को, मेरी मुक्ति बलाय।
जो घट चीन्हे आपने, मुक्ति मुक्ति होइ जाय॥

॥ चौपाई ॥

भई प्रथम रचना मैं काया। जबका बरनन बरनिसुनाया॥
कर्म अकर्म कीन्ह जबकाया। जब नर से अस्थावर आया॥
जंगम[१] भया काठ का कीड़ा। तज जंगम अस्थावर पीड़ा॥
कुंदन अंस आतमा आई। तन संचय[२] मैं सोन कहाई॥
कर्म खार सास्तर उपजाया। याबिधि सोना खोटकहाया॥
जब न्यारीगर[३] सतगुरु पावे। सोना खार खोट अलगावे॥
तब निस्कर्म आतमा होई। गुरु किरपा से मारग जोई॥
बुंद सिंधु मिलि भया अकेला। सो कुंदन सतगुरु का चेला॥

॥ दोहा ॥

यह मारग गुरु मेहर से, चेला चीन्ह बिचार।
निराधार इक-रस रहे, कुंदन चेला सार॥

॥ चौपाई ॥

कीड़ा कीट बीज बिस्तारा। यौं उपजै अस्थावर सारा॥
वही आस अस्थावर बासा। काठ घुने कीड़ा रहै पासा॥
यह इनकी उत्पति समझाई। कीड़ा रहै काठ के माहीं॥
जो रस भास करै परकासा। अंत जहाँ जिन लीन्हाबासा॥
पूरब प्रीति काठ सँग कीटा। सोई स्वाद लागु जेहिं मीठा॥
इच्छा आसा देत घुमाई। जहँ मन लीन[४] देह तस पाई॥

(१) ऐसी सृष्टि जो चल फिर सकती है। (२) थैली। (३) सोना को साफ़ करने वाला। (४) आशक्त।

चारखानि उत्पति रस माया। चरऔरअचर चराचरखाया॥
उपजे मरे धरे फिर देही। आसा बँध बस बास सनेही॥

॥ दोहा ॥

जुगन जुगन जड़ जीव यह, बिष बिसेष रस खाय।
भँवर पुहुप गुंजार ज्यों, मायहिं माहिं बिलाय॥

स्थवार से एक दम नर तन कैसे मिल सकता है और मनुष्यों की बुद्धि की दशा

॥ चौपाई ॥

अबआगे का सुनो बिचारा। काठ कीट बंधन निरबारा॥
जिनआसाअस्थावरमाहीं। सो रहे कीट काठ में जाई॥
यों बंधन बिस्तार बताया। अब छूटन का सुनो उपाया॥
कीट छाँड़ि नर देही पावा। जोजेहिकाठकापलंगबनावा॥
बनासिंघासन आसन संता। जो वहि माहिँ कीटनरअंता॥
कीट काठ में जो रहे भाई। जो जन नर भये चरनछुवाई॥
सो सुतार तन भया बढ़इया। कीट काठ से संत कढ़इया॥
जस बुधि रही काठ के माहीं। जस लच्छन भाखूँ समझाई॥
छिनक[1] बुद्धि भरमावे कोई। तुरत भर्म ले आवे सोई॥
छिनक बुद्धिमतिहीनबिचारे। सत मत में जग रीति निहारे॥

॥ दोहा ॥

काठ बुद्धि काया धरी, कीट सुभाव निहार।
सत मत में पाया नहीं, उलटे करत बिचार॥

॥ चौपाई ॥

जोजिवअचरखानिसे आया। धरिनर देह चरन जिनपाया॥
करनीखानि माहिं कहाहोई। इक तत करनी जड़ता जोई॥

---

(१) एक छिन में।

पाँच तत्त करनी करि हारे। एक तत्त कहो कौन उबारे॥
जो कोइ संत भूमि जहँ बैठे। जीव भूमि के कर्म उलेटे[1]॥
जीव छुड़ाय जोनि से भाई। संत भूमि जहँ चरन छुवाई॥

(महादेव पारबती की कथा)

एक समय संकर और गोरा। चले जात मारग बड़ भोरा॥
संकर बड़ो डंडवत कीन्हा। पारबती मन भया मलीना॥
होइ मलीन संकर से पूछो। काहे करो डंडवत छूछो॥
देवल देव मनुस नहिं होई। कीन्ह डंडवत दीख न कोई॥
जब संकर ने बचन उचारा। बड़ी भूमि के भाग अपारा॥

॥ दोहा ॥

पारबती या भूमि का, क्या कहूँ बरनन भाग।
दस हजार के बाद[2] यहँ, संत रहे यहि जाग[3]॥
सुनु हिरदे कहुँ संत की, महिमा अगम अपार।
कर प्रनाम वहि भूमि को, संकर बारम्बार॥

॥ छंद ॥

हिरदे बड़े वहि भाग भुमि, जहँ संत के चरना पड़े।
संकर करी परनाम अति सुख, सीस भूमी पर धरे॥
बारम्बार करि डंडवत, निज नीर से नैना भरे।
गदगद पुलक सब गात कहुँ क्या, हरष हिये से ना टरे॥
संकर बिकल बेहाल हिरदे, कहत मैं छाती भरे।
रहि गै कहैं यहँ संत आगे, सहसदस बर्स के परे॥
गहे चरन भूमि पुनीत जो जिव, संत ने कारज करे।
हिरदे हरष मन तरक तोले, काज संतन से सरे॥

---

(१) पलट दिये। (२) पीछे अर्थात बीते हुए काल में। (३) जगत।

॥ दोहा ॥

संत चरन अति बहुत बड़, जानत चतुर सुजान ।
जो संतन हित ना करै, सो नर पसू समान ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

अस्थावर नर देह अलेखा । भइ कस साहब कहो बिसेखा॥
कहो करनी उन कौन बनाई । पुनि फिर कस नरदेहीपाई॥

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

अस्थावर जिव जड़ अस्थूला । कौन कौन कहुँ याकी भूला॥
जुगजुग कलपकलपकहूँलेखा । कहँ लगबरनन कहूँ बिसेखा॥
की कोइ समय जोग परभाऊ । की कोइ संत कृपा भई काहू॥
फूल पात फल पान खवाये । अस्थावर अद्यादिक आये॥
बिचरत कोई संत चलिआये । भावभोगजिनरुचिरलगाये॥
जो जो बृच्छ पान फल बीड़ा । जिनजिनपायोमनुससरीरा॥
सो जेहि के लच्छन दरसाऊँ । लच्छअलच्छदोऊसमझाऊँ॥
गुनऔगुन जसजस करतूती । भाखूँ होनहार मजबूती ॥

स्थावर से नर तन में आये हुये जीवों का लक्षण और सुभाव

॥ दोहा ॥

अस्थावर की खानि का, नर तन माहिँ सुभाय ।
दाव पेच जस जस वही, बरनि कहूँ अलगाय ॥

॥ चौपाई ॥

हाँपत चले राह के माहीं । बैठत उठे पीर अधिकाई॥
बाई रहे बतीसो[1] माहीं । बाइचारनितप्रतिहिं सताई॥

(१) बत्तीस दाँत ।

पँच हथियार सवारी चावे । घोड़ा चढ़े हँफन सी आवे॥
जामा फँटा पाग सुहावे । नित दरबार करन को चावे॥
जीव मारि मन आनँद माहीं। छौंके खाय बहुत सुख पाई॥
पूजा सेवा अधिक सुहाई । तीरथ बर्त करे मन लाई॥
और उपासना नेम बिचारै । ब्राह्मन मिलै चरन पर वारै॥
चुगली सैन करै बहु भाँती । हिरदे माहिँ बसै दिन राती॥
हानि लाभ जिनके बहु नीके । नीका निरखि करे मन फीके॥

॥ दोहा ॥

यह अस्थावर खानि के, हिरदे लच्छ सुभाव ।
और बरनि आगे कहूँ, मन के छलबल दाँव ॥

॥ चौपाई ॥

अब खाने का स्वाद सुनाई । दूध भात नीके मन लाई॥
उरद दाल फुलकी बहु भावे । माहिँ खटाई मिरच मिलावे॥
कढ़ी बरी तरकारी माहीँ । यहसबस्वादअवसकरचाही॥
मीठा मिले चोरी से खावे । देखे खाल तो हाथ छिपावे॥
जो कोइ माल पराया आवे । लेने को बहु मन ललचावे॥
कौड़ी खरचत प्रान गँवाई । वैसेइ कोइ दे आन खिलाई॥
नाच तमासा देखै जाई । मन में उमँग रहै बड़ भाई॥
हरि चर्चा में नींद जुड़ावे । जो जगवै तेहिँ मारन धावै॥

॥ सोरठा ॥

सुनु हिरदे यह भेद, कर्म सुभाव लच्छन कहूँ ।
आगे सुनो निषेद, जो जो भाखूँ बाक जस ॥

॥ चौपाई ॥

आमै सामै[१] देत लड़ाई । लबराई[२] की बात बनाई॥
जब कोइ लड़े देइ हँसि तारी । अपने अवगुन नाहिँ बिचारी॥

(१) वक़्त बेवक़्त । (२) झूठ ।

माया मोह बहुत मन लावे । कधि रोवै कधि मंगल गावे॥
जो कधि हानि होय घर केरी। तो मारे सब घर को घेरी॥
जूझ झपट करि रहे रिसाई । खाने को कहे गुसा[1] कराई॥
जो कोइ घर में बड़ा कहावे । जाकी बात नेक नहिं भावे॥
उत्तर पर प्रति-उत्तर देई । लोचन रूख[2] सनेह न जेही॥
मूल मुलाजा[3] नेक न लावे । अपनी खरी बात ठहरावे॥

॥ दोहा ॥

यह अस्थावर खानि के, अस सुभाव जड़ताय ।
अपनी अपनी कहत है, पूरब अंग प्रभाय ॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

हिरदे कहे स्वामी समझाई। सो सब कहन समझ में आई॥
अचरखानिकाकहा बिबेका । सो सब बैठा मन में लेखा॥
नर पिंडजपसुपिंडजआया । यह पसु पिंड धरी कस काया॥
यहहिसाब मोकोसमझावो । स्वामी दया दीन दरसावो॥
कौन जोग परभाव कहाया । ता से पसु पिंडज में आया॥
सो बरतंत कहो समझाई । जासे चित की संसय जाई ॥
कर्म कांड जब हता न कोई । करनी कहो कौनसी होई ॥
देव पिंड पित्तर नहिं पूजा । केहि कारन दुरमति में जूझा॥

॥ दोहा ॥

सास्तर बेद पुरान यह, कब से संग सहाय ।
होय होय बंधन पड़े, लख चौरासी माहिं ॥

नर से पशु योनि कैसे पाता है

(तुलसी दास वाच)

॥ चौपाई ॥

कहे तुलसी हिरदे सुन लीजे । कहुँ बरतंत कान मन दीजे॥
पाँचतत्त नर कीन्ह बनाई । इच्छा नारि तुरत उपजाई॥

(१) क्रोध । (२) रूखी आँखें । (३) रू रिआयत ।

जड़चेतनजब गाँठि बँधानी। इच्छा नारि भई पटरानी॥
इन अपना परिवार बसाया। सार तेज का भास नसाया॥
जब नर हुआ जगत का रासी[1]। राज करै मन इच्छा बासी॥
जो इच्छा मन उठे तरंगा। जस जस खेल करे परसंगा॥
उधर आस सब दीन्ह छुटाई। इधर तरँग मन इच्छा माहीँ॥
जब कछु रहे नाहिं बिस्तारा। नर का नर होवे करतारा॥

॥ दोहा ॥

इच्छा रानी सँग हलो, आप रहे करतार।
जो तरंग मन में उठे, वैसा करे बेवहार॥

बदोक्त करनी

(पिंडदान इत्यादि) मनुष्य को तन की आसा धराती है

॥ चौपाई ॥

ऐसे कई दिवस गये बीती। तेहि पाछे भइ ऐसी रीती॥
बूह्म सृस्टि सब जक्त कहावे। उतरे नाहिं नहिं बंधन आवे॥
जब बेद्न का किया बिचारा। ओंकार जब सब्द निकारा॥
सो भया सब्द तिरकुटी माहीँ। बेद नाद ने योँ उपजाई॥
जबजब बेद किया बिस्तारा। कर्मकांड करनी निरबारा॥
अस बेदन ने कही पुकारी। यासे सृस्टि बही चौधारी॥
बूह्म सृस्टि का तेज उड़ाई। जब नर सृस्टि भई सुनु भाई॥
जब रहि ब्रह्म सृस्टि बरहाला[2]। परमहंस मति जब से चाला॥
वही समय बेदांत बतावे। यह नर मनुष ब्रह्म ठहरावे॥
ब्रह्म तेज परथम था भाई। तेज गये नर मनुष कहाई॥
दिव्य ज्ञान हिरदै रहै बासा। जब बंधन से ब्रह्म खुलासा॥
सो बेदांत बाक बतलावै। नर बुधि ज्ञान बूह्म ठहरावै॥

(१) रसिया। (२) क़ायम।

॥ दोहा ॥

ब्रह्म सृस्टि पहिले हती, जब रहे ब्रह्म प्रमान।
नर सृस्टी जब से भई, बेद बचन उरझान॥

॥ चौपाई ॥

नर सृस्टी जब से भइ भाई। केवल कर्म बेद अधिकाई॥
नर घर अधर तजे जगमाहीं। करनी कर्म कार उपजाई॥
यासे नर तजि पिंडज बासो। पसुवत देह धरै अबिनासी॥
पसु पिंडज ऐसे उपजाया। नर तजि देह पसू में आया॥
पिंडज सब जो जात कहाई। फिरिफिरिरहेजहाँ लगिभाई॥
गिनतीका कछु अंत न छेवा[1]। यह सब संत बतावैं भेवा॥
हिरदे जग याको कहा जाने। संत काज सज्जन को छाने॥
वह बिबेक रसपिये बिचारी। छूटिभर्मरुचिकीअधिकारी॥

॥ दोहा ॥

नर पिंडज पसु पिंड में, योँ अस कियो प्रबेस।
करनो कर्म कराय के, बेद बरन जग भेस॥

॥ चौपाई ॥

षटदर्सन सनमान बढ़ाये। यह सब बेद मते में आये॥
जोगी जती सेवड़े[2] भाई। सन्यासी दुरवेस कहाई॥
और जंगम[2] इक जाति कहाई। ऐसे षट दर्सन दरसाई॥
इन से भये छानवे पीछे। सो प्रबेस पाखँड जग बीचे॥
यहि पाखँड ने जक्त भुलाया। अपनी पूजा बरनि बताया॥
याके संग सृस्टि सब लागी। भव के भूत भये अनुरागी॥
किरिया करनमरनजबलागे। बाम्हन पिंड करे जग आगे॥
पिंड सरीर आसा बँधवाई। योँ भया जीव बंध के माहीं॥

(१) हद। (२) भेषों के फ़िरकों के नाम।

॥ दोहा ॥

पिंड आस बँधवाय के, अबिनासी रहे छाय।
अपनी आदि बिसारि के, कोइ पीछे नहिं जाय॥

॥ चौपाई ॥

योँ परबेस खानि का लेखा। बूझे को जो करे बिबेका॥
योँ आसा पिंडज की काया। कर्म पिंड पिंडज में लाया॥
पिँड कर पिंड बँधाई आसा। योँ पिंडज पसु तन में बासा॥
यह सब बेद कीन्ह उपचारा[1]। बाँधे सभी सिरन पर भारा॥
यासे नर पसुवत में आया। दुर्लभ तजि जग में भर्माया॥
पसुवत ज्ञान हीन है काया। यह प्रभाव से बहुत भुलाया॥
एक रोग की औषधि नाहीं। पचिपचि मरै हकीम कहाई॥
पावे संत चरन निरबारा। और नहीं कोइ भाँतिउबारा॥

॥ दोहा ॥

पसुवत पिंडज अंग को, नहिं कछु ज्ञान समाय।
सँग अज्ञान जड़ देहि मैं, औषधि लगे न ताहि॥

पशु से नर चोला फिर कैसे मिलता है

॥ चौपाई ॥

योँ बिधि हिरदे कारज नाहीं। दया संत की जो बनिआई॥
जबकभिसंत चरनचलिआये। किरपा कीन्ह दीनदिल लाये॥
जबकबहूँ कोइ जीवजोदाया। चरन धूरि रज पावन[2]पाया॥
चारा चरत चरन पड़ि गयऊ। वहिप्रताप से नर तनभयऊ॥
उड़ी रज धूरि चरन की भाई। किनका उड़िलागै तनमाहीं॥
दधि घृत मट्ठा औरअसवारी। रज पावन नर देहि सँवारी॥

(१) करतूत। (२) पवित्र।

कहुँ मारग चलते परछाई । पड़ीजाय जिव सुफलकहाई॥
पिंडज से यह यों तन पावे । मनुस सरीरसुभगजबआवे॥

॥ दोहा ॥

संतन की यह मेहर से, जो कछु होय उपाव ।
नाहिं और तादाद की, बात बिना बरनाव ॥

॥ चौपाई ॥

यह अब पसुवत से नर आवा। जाका सुनो सकल परभावा॥
गुनलच्छनलखलीकलखाऊँ । जसजसपरबलप्रकृतसुभाऊ॥
बैरागी होइ उन्मति[1] धारी । करै ज्ञान जो बेद बिचारी॥
जग व्योहार हरख बहु माने । उजले बस्तर सुभग सुहाने॥
सौड़[2] सुपेदी पलँग बिछाई । पान सुपारी बीड़ा खाई॥
जो सन्मान करे कोइ आई । बहुत भाँति से सीस नवाई॥
बोलै बचन मीठ मधुराई । करै सनेह छाँड़ि चतुराई॥
काँचे बचन बाक नहिं काढ़ै । प्रीतिपरस्परनितप्रतिबाढ़ै॥

॥ दोहा ॥

पिंडज से जो नर भया, जाका यही सुभाव ।
औरबहुत कहँ लग कहूँ, बरनन का परभाव ॥

॥ छंद ॥

पिंड के प्रभाव पुनीत नर यह, देह पसुवत की धरे ।
बिधि बेद के मारग मते से, आप जिव बंधन पड़े ॥
जासे भई बहु खानि काया, ममत माया में मरे ।
गुरु ज्ञान बचन बिचारकहे कोउ, नेक हिरदय ना धरे ॥
बिन संत के नहिं अंत पावे, खोजि के पचि पचि मरे ।
जिन पै कृपा भइ संत की, जब अंत के कारज सरे ॥
नहिं और ठौर उपाव लागे, भाग कर्मन के भरे ।
हिरदे दया दिल संत बिन, नहिं जीव को कारज सरे ॥

---

(१) मस्ती । (२) बिछौना ।

॥ दोहा ॥

संत चरन कारज सरै, हरै सकल बिष ब्याधि ।
साध सुरति चरनन रहै, टारै सकल उपाधि ॥

(हिरदे वाच)
॥ चौपाई ॥

नर की नर धर देही पाई । सो साहब कहो बरनि सुनाई॥
सो बरतंत कहो बिधि लेखा।समझ पड़े बिधि बाक बिबेका॥
करनी कौन कीन्ह करतूता । क्योंकर कीन्हा मन मजबूता॥
की कोइ करतब के बसि पाई । की सतगुरु की दया बसाई॥
की कोइ और रंग रस भावा । सो जा से नर देही पावा॥
संतन की सब साख बिचारी । दुर्लभ सब कहैं सब्द सिहारी॥
सब सतसंग सुनावत संता । बिन सतगुरु नाहिं पावे पंथा॥
असअस बरनि कही सब बानी ।सो साहब मोहिं कहो निसानी॥

॥ दोहा ॥

नर तन से नर होत है, बहुत कहैं नहिं होत ।
यह जग में बायब[1] सुने, बिन करनी कहैं थोथ ॥

॥ चौपाई ॥

यह स्वामी अचरज की बाती । को जाने यह समझ सनाथी॥
भूत भवेस[2] बरन जिन कीना । उनकी सुरति कहाँ भइ लीना ॥
आगे कही भई वहि भाखे । सो सूरति रस कसकस चाखे॥
कहँ को गये कहा उन पाया । ऐसी कहो कहँ द्रुस्टि समाया॥
यह कहुँ कहन जक्त नहिं जाना।द्रुस्टि न पड़ी सुनी नहिं काना॥
यह बरनन भिन भिन समझावो। हिरदे के दिल को दरसावो॥
जो परबोध मोद मन आवे । हिरदे की तब सुरति जुड़ावे॥
कई दिवस का सोच समाना । सो निरबार कहो बिधि नाना॥

---

(१) अचरजी । (२) भविष्य ।

॥ दोहा ॥

कौन करसमा[1] देखि के, सब कहैं बिधी बयान ।
भिन भिन भाखे उधर की, साचा बचन प्रमान ॥

नर का पुनर्जन्म नर तन में क्योंकर होता है

(तुलसीदास वाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह बरन बयाना । भाखूँ संत बचन परमाना॥
पूछी तैं नर से नर भइया । यहप्रतिबाकबचनतैंकहिया॥
सुनु याकी बिधि कहूँ बुझाई । परथम से कहूँ बरनि सुनाई॥
बुंद सिंध से निर्मल आया । चोला पहिर धरी नर काया॥
काया के गुन ब्यापैं नाहीं । याबिधि रहै बदन के माहीं॥
आसातन बंधन नहिं भासी । रस माया से रहै उदासी॥
जग का राग त्याग बैरागा । रहे अंतर इन से मन भागा॥
नहिं संग्रह तजि त्याग कहाई। उभै बंध बस के नहिं भाई[2]॥

॥ दोहा ॥

आस बास बस ना रहे, निर्मल अंग उदोत[3] ।
पीत परख अपनी रहे, ज्यों दरियाव का सोत ॥

॥ चौपाई ॥

जैसे बादल जल भरि लाया । ज्योंअकासभुइँपरबरसाया॥
भुइँ पर बुंद पड़ा जल जेता । गया तड़ाग[4] सलिता[5] में तेता॥
जो समुद्र से बाहर बरसा । जल भूमी मिलि मैला परसा॥
जो जो बुंद पड़ी समुदर में । निरमल बुंद धसा अंदर में॥

---

(१) कौतुक, इशारा । (२) वह गृहस्थाश्रम को छोड़कर भेष नहीं लेते क्योंकि उन के मन का बंधन किसी में नहीं है । (३) प्रकाश । (४) तालाब । (५) नदी ।

यह नर तन योँ ऐसा पाया । जैसे बुंद सिंध में आया॥
जो जल भूमि पड़ा सुनु भाई । मैला नीच कींच के माहीं॥
मलअरुमुत्रपृथ्वीपरपड़िया । वे वे मिलिमन अंदरभरिया॥
जब निरमली[1] कहूँ से पावे । होइ उजला जल मैलथिरावे॥

॥ दोहा ॥

निरमल जल निर्मल करे, जल मलीन थिरियात ।
जग ढूँढ़त ढूँढ़त रहे, पड़ी संत के हाथ ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसामैला जगत दिवाना । निरमलीकानहिंखोजपिछाना॥
वह निरमली संत के पासा । मिलैमेहरजबहोइ खुलासा॥
निरमलिबिनामैलनहिं जाई । जोकोइ कोटिन करे उपाई॥
निरमलि नाम दया का होई । जो अँदर मल डारे धोई॥
दीन गरीबी भक्ति सुहावे । जब सतगुरुकिरपा से पावे॥
नहिं तलास कोइ ढूँढ़नहारा । तनमन फैलिरहा जग सारा॥
अंदर मन में साँच न आवे । मन परदे कर बचन सुनावे॥
परदे आड़े आप कराई । गुरु को देवे दोस लगाई ॥

॥ दोहा ॥

गुरू बतावैं पुरब को, चेला पच्छिम जाय ।
अंदर टाटी कपट की, मिले जो क्योंकर आय ॥
तन मन से साँचे रहे, अंदर मेल मिलाप ।
साफ सूपेदी को करे, धोबी के परताप ॥

॥ सोरठा ॥

काग पढ़ाया पींजरे, पढ़ गया चारो बेद ।
अंदर की छूटी नहीं, रहा ढेढ़[2] का ढेढ़ ॥

---

(१) एक बीज जिसे गदले पानी में डालने से वह निर्मल हो जाता है। (२) कौवा ।

॥ चौपाई ॥

योँ ऐसा मैला मन भाई । कहो क्योंकर आवे सुधताई॥
काल अपरबल बाजी लाई । यह पाजी को मालुम नाहीं॥
अब याका परसंग सुनाऊँ । काल बली का छल दरसाऊँ॥
यहि कबीर के ग्रंथन माहीं । भाखे आप कबीर गुसाईं॥
संतन की योँ साख सुनावे । बिना साख परतीत नआवे॥

(मधुमकुंद सेठ के रूप मैं काल)

मधुमकुंद इक सेठ रहाई । घर मेँ त्रिया और कोउ नाहीं॥
खुद कबीर का चेला होई । द्वादस[1] और संग मेँ सोई॥
सँग कबीर कृपा नित राजे । तन मन सूरति चरन बिराजे॥

॥ दोहा ॥

आठ पहर लागी रहे, सुरति कबीर के माहिँ ।
योँ ऐसे सब संग महिँ, काल किया छल दाँव ॥

॥ चौपाई ॥

जबही सेठ ने चोला छोड़ा । सूरति मन साहब से पोढ़ा॥
सतगुरु सब्द कबीर कहाया ।सूरति निरति मिलाप मिलाया॥
जहँ का माल जहाँ पहुँचाया। साहब कबीर ग्रंथ मेँ गाया॥
जेहि पाछे इक भया तमासा । किया काल इक खेल बिलासा॥
धर्मदास को कबीर सुनावे । अचरज का लेखा समझावे॥
सो मैं हिरदे तोहि सुनाऊँ । जैसी की तैसी समझाऊँ॥
काल पवन का रूप बनाया । तिरिया का सिर आन घुमाया॥
बोला बचन नाम गोहराई। मैं मकुंद हूँ सेठ जनाई ॥

॥ दोहा ॥

जहाँ कबीर बैठे हते, द्वादस संगी पास ।
खबर जाइ के योँ कही, त्रिया सिर सेठ घुमाय ॥

---

(१) कबीर साहब के बारह मुख्य चेले थे ।

॥ चौपाई ॥

द्वादस साथि संग में बोले । स्वामी यह तो सुनी अतोले[1]॥

(कबीर वाच)

तब कबीर बोले मुख बानी । याका भेद कहूँ सब छानी॥
बिरोधकालका हमसेपरिया । नामसेठकहेसिरपरचढ़िया॥
काल भूत होइ त्रिया घुमावे । यौं कबीर मत झूँठ कहावे॥
द्वादस साथि समझ भरमावे । तौ इनके कोइ पास नआवे॥
मुक्ति द्वार को दीन्ह खुलाई । तौ संसार रहन नहिं पाई॥
जीव अहार करूँ मैं मोरा । सो कबीर ने बंधन तोरा॥

(तुलसीदास बाच)

हे हिरदे यहि काल जनाया । कालभूततिरिया सिर आया॥

॥ दोहा ॥

सेठ गये निज धाम को, कीना काल प्रपंच ।
भूत रूप तिरिया छली, नहिं कबीर मत संच ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे काल करी छल बाजी । कोइ कबीर से रहे न राजी॥
ऐसे धरमदास से भाखी । कही कबीरग्रंथन में साखी॥
सतसँगसाँच होन नहिं पावे । यौँछलकरिकरिकालजनावे॥
हे हिरदे सतसंगत माहीं । निहचै काल उपाधि उठाही॥
जो भरमाय गये जम जाला । उनको खाय गया धर काला॥
वह उपद्र[2]केहि कारन करई । चारा मोर जीव अनुसरई॥
मोरी खुद्या[3] कौन बुझावे । यह कबीर मत मोर नसावे॥
जिनसतसंग रंग नहिं पाया । जिनके सदा काल उर छाया॥

॥ सोरठा ॥

हिरदे सुनु सम्बाद, काल दाँव ऐसा करे ।
सूरति देत घुमाय, जाय पड़े मुख काल के ॥

---

(१) अचरजी बात । (२) उपद्रव, फ़साद । (३) क्षुधा, भूख ।

सो घर वहि हंसन का बासा । करैं कुतूहल हंस हुलासा॥
निसदिन प्रेमभक्ति अनुरागी।तद्रूपिनामबिमलबड़भागी॥
आगे तोहिं परसंग सुनावा । हंसा बुंद सिंध योँ आवा॥

॥ दोहा ॥

बुंद सिंध हंसा मिले, निर्मल मुक्ति बिचार ।
नर देही की अब कहूँ, सुनु यह हिरदे सिहार ॥

॥ चैापाई ॥

सूरा होवे रन के माहीं । भव डर कंपकधी नहिं आई॥
निद्रा रैन दिवस नहिं सोवे । जब देखो तब जागत जोवे॥
कोइ बँदगी डंडवत करावे । सबके पहिले सीस नवावे॥
भूखा कोइ देखा नहिं जाई । जब कछु देवे जीव जुड़ाई॥
दया सील संतोष अपारा । भक्तिअरु ज्ञानचलेचैाधारा॥
बैठे बैठे में मरि जावे । देह छूटि फिर नर तनपावे॥
प्रान छूटि निज घरमें बासा । सुनु हिरदे यह भेद खुलासा॥
नर नर का तन ऐसे पावे । जबकहूँहिरदे लखनमेंआवे॥

॥ सोरठा ॥

नहिं मूरख पतियात, ले जराय बाती दिया ।
हिये अंदर के माहिं, देखो जोइ निहारि के ॥

॥ चैापाई ॥

सतगुरुनाम सुरति की बाती । गैबी जोति जरे दिन राती॥
हिरदे यह सज्जन की रीती । अंग असज्जन करे अनीती॥
परखि प्रकृतिका कहूँसुभाऊ । कहि लच्छन उनके दरसाऊँ॥
कूर कुभंडी लुच्चे नंगे । वे गँवार कहैं बचन बिढंगे॥
जो उनकी सोहबत सँगकरई ।नरकखानि जुगजुगलोँपरई॥
मुख बोलै नहिं बचन सँवारे । जैसे मेढक हंस बिचारे॥
हंसन की हाँसी करवावे । काग सुभाव कभी नहिंजावे॥

॥ दोहा ॥

ग्रंथ पदमसागर महीँ, कहि कबीर सम्बाद ।
धरमदास से कहत हैं, हिरदे तुलसीदास ॥

॥ चौपाई ॥

काग असज्जन की समझाई । यह तो सब मोरे मन आई॥
बाथस[१] पालिये अति अनुरागा । होय निरामिषि[२] कबहुँक[३] कागा ॥
यह रामायन मेँ चौपाई । हिरदे को दृस्टान्त सुनाई ॥
काल फाँस मेँ कागा आवे । पंछी पकरि पारधी[४] लावे॥
फंदा करि जिव घेरे आई । ज्योँ नलनी का सुवना भाई॥
जग यह योँ अस काल फँदाना। ऐसे असज्जन का सरधाना॥

(हिरदे बाच)

जब हिरदे इक पूछि प्रसंगा । स्वामी कहो हंस सतसंगा॥
रहनिगहनिकहोबूझिबिचारा। हंसन के पद का निरवारा॥

॥ दोहा ॥

हंसन की रहनी कहो, तन मन सुरति सुभाव ।
काल बली के पेच से, कस कस निकरे जाय ॥

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

हे हिरदे सज्जन गति न्यारी। करैँ भक्ति वे सुद्ध बिचारी॥
मुक्ताहल[५] मोती चुनि खावे। मानसरोवर मेँ सुख पावे॥
त्रिकुटीमाहिँ चित्रचितसारी। सो वहँ जाइके दीपक बारी॥
बिना तेल बिन बाती भाई । दीपक जरे रैन दिन माहीँ॥
चहुँदिसिफैलिरहाउँजियारा । तेज पुंज वह देस निहारा॥

(१) कौवा। (२) मांस आहार का त्यागी। (३) कभी।(४) शिकारी। (५) हंस।

(मेढक हंस सम्बाद)

याका इक दृस्टांत सुनाई। मेढक रहे कूप के माहीं॥
हंसा आय दिसंतर बाटे। बैठे जाय कूप के काठे॥

(मेढक बाच)

मेढक ने पूछा को आही। आये कहाँ कौन हो भाई॥

(हंस बाच)

हम हैं हंसा जाति गरीबा। कागा हमसे करे हरीफा[१]॥
कागा मिले आपको हारे। जीतन की नाहिं गैल सिहारे॥
हंसा हंस मिले सुख होई। बिमलबिलासकरैंमिलिदोई॥

॥ सोरठा ॥

सुन मेढक यह रहस, देस हमारा दूर है।
रहैं दरियाव के पार, हंस नाम हमरो कहैं॥

(मेढक बाच)

वह दरियाव बड़ा कहो केता। कहाँ वह देस तहाँ तैं रहता॥
चौपट चौड़ा केता पानी। सुन के समझ लेव सहदानी॥

(हंस बाच)

जब हंसा बोले अरे भाई। सिंधुअथाहकोइथाहनपाई॥
जल जोजन कहा कहूँ बताई। संख्या नाहिं असंख्या भाई॥

(मेढक बाच)

तब छलाँग मेढक इक मारी। कहो समुद्र इतना है भारी॥

(हंस बाच)

तब हंसा बोले सुनि लीजे। सिंधु अथाह थाह कहाकीजे॥

(मेढक बाच)

जब मेढक मन मैं रिसियाना। दे फलाँग दूजी अभिमाना॥
कहे मेढक इतना है भाई। जो दरियाव रहै तैं जाई॥

---

(१) शरारत।

(हंस बाच)

जब हंसा ने बचन उचारा । बिन जाने कहा कहे बिचारा॥

(मेढक बाच)

तब छलाँग तीसर उन मारा । यासे कहा कहे अधिकारा[१]॥

(हंस बाच)

कूप सिंधु कहा पटतर लावे । तोरी बुद्धि समझ नहिं आवे॥

(मेढक बाच)

मेढक के मन गुस्सा छूटा । तैं है लबार जक्त का झूठा॥
यासे कहा बड़ा बतलावे । तैं अंधे को नजर न आवे॥
मेढक टेक आपनी राखा । हंसा को झूठा कहि भाखा॥

॥ दोहा ॥

सज्जन और असज्जना, दोनौं का प्रतिबाद ।
हंस हारि आपड़ गये, मेढक अधम उपाध ॥
ज्यौं अज्ञानी मनुख की, मेढक बुद्धि बिचार ।
हार जीत माने नहीं, ज्यौं मछ धीमर जार[२] ॥

॥ छंद ॥

मेढक अधम कहै हंस से, यह कूप से भारी कहा ।
हंसा कहे दरियाव की गति, जन्म से ह्वाँही रहा ॥
दोनौं मैं यह प्रतिबाद उत्तर, परसपर होता रहा ।
कहि बात हंस न मानि मेढक, भूल में बादै बहा ॥
हंसा सरोवर बास बस, जस दृगन से देखी कहा ।
मेढक कुबुद्धी जाति मूरख, उमर भर देखा कुआ ॥
वो सिंध को संधि समझ बिन, नहिं हंस की बातैं सहा ।
हिरदे कठिन मन मेढका, जड़ टेक में अपनी रहा ॥

(१) इस से बिशेष क्या हो सकता है । (२) जैसे मछुआ के जाल मैं फँसी हुई मछली ।

॥ सोरठा ॥

मेढक मूरख ज्ञान, हानि लाभ समझै नहीं ।
हंस सिरोमनि आहि, जानि बूझि बरते नहीं ॥

॥ चैापाई ॥

मेढक मन यह मनुष कहाया । संसै के भव-कूप रहाया ॥
समुदर संत हंस जहँ बासा । मानसरोवर सदा निवासा॥
वह जड़ कहै कूप की बातैं । सुरत समुंदर हंस समाते॥
इनउनकाकहाबाकमिलापा । वे कहँ और और इनथापा॥
मेढक मन बस जीव बिचारा। यह कहा जाने वार अरु पारा॥
भौजल कूप बंध में बासा । हंस सरोवर रहे खुलासा॥
हंस सीख जो मेढक माने ।भव जल कूप परख जबजाने॥
मानसरोवर संधि लखावे । कूप भवन तजि हंस कहावे॥

॥ दोहा ॥

मेढक माने कहन को, हंस बचन बिस्वास ।
आस कूप भव जल तजे, सरवर हंस निवास ॥

(हिरदे बाच)

॥ चैापाई ॥

हे स्वामी इक बिस्मय जानी। हंसन की क्यौंबात न मानी॥
मन बुधि मैं मेढक नहिं लावा। कहोस्वामीयहकौनिप्रभावा॥
संत परमारथ के सहुकारा[१]। कारज करज मुक्ति निरबारा॥
यह नहिं लेत चेत चित लाई । कौन खोट कर्मन के माहीं ॥

चेतावनी और उपदेश

(तुलसीदास बाच)

भेख संत दोउ एक समाना। संतचीन्हनहिंपरखपिछाना॥
दोऊ को यह इक सम जाने। धनवंत निरधन परख न आने॥

---

(१) साहूकार।

करज कँगाल से लेने चाले। लकड़ी बाँस बेचने वाले ॥
वह का देवे करज बिचारा। मिहनत करि करि पेट सँवारा॥
साहूकार से लेन न आवे। नित निरधन से माँगन जावे॥
आवे न हाथ टका इक भाई। मूरख वोहि की करत बड़ाई॥

॥ दोहा ॥

निरधन से निस्चय करे, साहूकार से फेर।
कहर[1] करे कधी कोप से, करत सुरति से बैर ॥

॥ चौपाई ॥

अंधा जग यह फिरत भुलाना। माँगे भेखन का नहिँ जाना॥
सतगुरु की कोइ गैल न पावे। सूरति सिख सतगुरु पै आवे॥
ऐसा उनको कहा बिबेका। देखा सुना गुना न परेखा॥
जो संतन की साख बिचारे। द्रुस्टि माहिँ जब इस्ट निहारे॥
इस्ट जानि के इस्क लगावे। तौ सुधि बुधि थोड़ीसी पावे॥
उनकी कृपा द्रुस्टि है न्यारी। यह कहा जाने भेख अनारी॥
जस जग रीति भेख के माहीँ। भेख भिखारी जक्त कहाईं॥
ज्ञानी बड़े गाँठि नहिँ पैसे। वे लखपती होइ हैँ कैसे॥

॥ दोहा ॥

लखपतियन की रोकड़ी, अँगड़े लैके जाय।
साह दिसावर के बड़े, खाते जमा कराय ॥

॥ चौपाई ॥

माल अपूरब संतन केरा। सो जग कोइ पावे नहि हेरा॥
उनका रोकड़ माल खजाना। बीजक वह उनहीं का जाना॥
माल सड़े नहिँ काई लागे। चोरै न चोर रैन दिन जागे॥
कबहुँ न हाथ चढ़े केहु भाँती। खोदत रहे दिवस अरु राती॥
यहदौलतदुनियानहिँजाना। गुप्त भेद मेँ माल छिपाना॥

---

(१) क्रोध।

दया दीन दिल कूँची[१] पावे। मेहर नजर करि वे दरसावैं॥
जो मूरख कोइ लेन बिचारे। जन्मजन्मपचिपचि के हारे॥
जुगनजुगनकोउअंतनपाया। घर घर मुए अनेकन काया॥

॥ दोहा ॥

यह दौलत दरबार की, बकसीसी[२] के माहिँ।
और तरह आवे नहीं, कोटिन जन्म सिराय[३]॥

॥ चौपाई ॥

यहजगअँगसँग में मतवारा। चावे बिषय भोगअनुसारा॥
इन्द्री सुख बहु भाँतिसुहाई। मद के नसे छके रहे भाई॥
रातदिवससिरकालसिकारी। पकरि घेरि के मारिपछाड़ी॥
जबकोइकुटुँबकामनहिँआवे। जम जुलमी की जूती खावे॥
दो दिन जग मैं देख तमासा। फूले फिरैं जक्त मन आसा॥
कबहुँ न हार हिये मैं लावे। मूरख जन्म बाद यौं जावै॥
जब सुपना अपना करिचावै। अंत समय कोइकामनआवै॥
यौं जग की यारी समझावा। मुए गये कोइ खोज न पावा॥

॥ सोरठा ॥

गुललाला का फूल, छुवत हाथ मुरझात है।
ज्यौं ओला जल गाँठि, काँचे बर्तन नीर जस॥

॥ चौपाई ॥

नर तन पाय किया का भाई। अंदर की नहिँ अगिनबुझाई॥
जुगजुग रहा खानि मैं भटका। काल कला कर्मन मैं लटका॥
नरतन ले कहो का फल पाया। जानाजोजिनआप बनाया॥
यहऔसरभलिभाँतिबिचारे। नहिँ यह जन्म वायदे[४] हारे॥

---

(१) कुंजी। (२) बख़्शिश। (३) बीत जाय। (४) वायदा=वादा यानी इक़रार जो मालिक के भजन का जीव ने गर्भ में किया था। दूसरे तौर पर "वाद ही" भी हो सकता है जिस के मानी "बेफायदा" के हैं।

मन आपने बिबेक बसावे । बढ़ीघटी सब नजर में आवे॥
ज्ञानी रहे मगन मन माहीं । सुपने दुख सुख ब्यापे नाहीं॥
ज्ञानवंत नर परम अनंदा । भक्ति सिरोमन काटै फंदा॥
ज्ञानी का जीवन जग माहीं । रहे बिचार हिये लघुताई॥

॥ दोहा ॥

बाक[1] ज्ञान में निपुन है, अंदर का नहिं भेद ।
उग्र[2] ज्ञान बिन भक्ति के, जुग जुग पावे खेद ॥

॥ चौपाई ॥

संत बिना नहिं कारज होई । याबिधि बात कहैं सब कोई॥
जो संतन ने बचन उचारा । बिनसतसंगनहींनिरधारा[3]॥
ऐसे आगे साख पुकारे । साँच होय तन मन से हारे॥
दुर्गम घाटी काल कराला । बाँधीबाटजुलमजमजाला॥
सतगुरु तेग सुरति से काटे । निकरिजायजुलमीकीबाटे॥
तन मन सोधि रहे निरबाना। तब लख पावे पुरुष पुराना॥
जुग जुग से जिव चले अनेरा। काटा कधी न जमका घेरा॥
जन्म जन्म चौरासी माहीं । कबहुँ न सुरति संधिकोपाई॥

॥ दोहा ॥

सुरति सब्द के भेद बिन, होय न पूरन काम ।
चमर चाम की दृस्टि में, तन तत तिमिर[4] समान ॥

॥ चौपाई ॥

अंडज पिंडज उस्मज खाना । चौथे मनुष जन्म का जामा॥
यह सब बाक बचन बरतंता । यहिबिधिकहीजुगनजुगसंता॥
जिन नर तन में मूलबिसारा । कबहुँनहोयखानि निरबारा॥
उत्पति परलय में जिव जावे । फिरिफिरि जग जिव खानि समावे ॥

(१) बाच या ज़बानी । (२) प्रचंड, लद्द । (३) स्थिरता । (४) अंधकार ।

करनी करे भोग फल भाई । जोनी धर फल को भुगताई॥
यह रहनी की बात बिचारा । यामें नहीं होय निरधारा[1]॥
करनी करे कर्म की बाजी । इन्द्री सुख भोगन में राजी॥
बिना सुरति नहिं संसय जाई । यह सतगुरु भाखैं गोहराई॥

॥ दोहा ॥

करतब तो सब ने किया, जस जस जिनके भेद ।
कर्म खेद छूटो नहीं, सूरति सब्द उमेद ॥

(हिरदे बाच)

॥ छंद ॥

हिरदे अरज कहे साँच स्वामी, सब्द तो ऐसी कहे ।
सत बचन बाक बिलास बोली, आस बिन ऐसे रहे ॥
कोइ सुरतवंत जो पंथ पावे, बिकट मारग को गहे ।
इन्द्री सिथिल मन कैद करिके, जुगति थिरता की लहे ॥
ज्यों पेड़ पौद झकोर पवना, यों डगन मन को सहे ।
जब सुरति सोधि उपाधि टारे, बाट मन की ना बहे ॥
धर नीलगिरि पर ध्यान निस्चल, सिखर पर सूरत रहे ।
हिरदे बिना अस काज कीन्हे, मीन जल मछरी बहे ॥

॥ सोरठा ॥

सुंदर[2] में स्नुति ध्यान, ज्ञान भक्ति बल्ली गहे ।
करि केवट पहिचान, सतगुरु पार उतारिहैं॥

॥ चौपाई ॥

यहिबिधिकरेजीवनिरबारा । भव जल से जब उतरे पारा॥
यह ऐसे बिन कधी न होई । यहिबिधिसंतकहैं सबकोई॥
संत जुगन जुग कहते आये । कोई जीव ख्याल नहिंलाये॥
भवसागर में नाव बतावैं । जोकोइ उतरि पारकोजावै॥

---

(१) स्थिरता । (२) सुख का द्वार ।

परमारथ के संत सुखदाई । उनके हृदय दया रहे छाई॥
वे पुकार करि कहैं अवाजा । ज्यों मेघा बादर में गाजा॥
गरजे मेघ सुने सब कोई । अस कहैं गरजि संतसबसोई॥
जड़ता जीव जोनि के माहीं। उनके बचन कान नहिं लाई॥

॥ दोहा ॥

वे दयाल जुग जुग कहैं, बहिरा सुने न कान ।
ज्यों मतवाले मद पिये, छके नसे के माहिं ॥

॥ चौपाई ॥

यौं अस फिरे खुमारी माहीं। छके नैन मद कहा न जाई॥
सब्द साख कहैं बचन पुकारे। यह मूरख मन में नहिं धारे॥
ग्रंथ बनाय कीन्ह यह काजा। डारे भाख अनेक समाजा॥
नर तन यह यहि में कछुलावे ।करिउपाव बुधि ज्ञान जगावे॥
निरमलज्ञान सिला जल धोवे। मैले से उजला यह होवे ॥
कई प्रकार की बानी बोले । यह अज्ञान गाँठि नहिं खोले॥
कहते कहते जन्म सिराना । एक न बात कानपर आना॥
संतन की कछु खोर[1] न भाई। कहनकहैं सबकछु गोहराई॥

॥ दोहा ॥

यह अज्ञानी पातकी, सुने न उनके बैन ।
कहन कान लावे नहीं, कहाँ मिले सुख चैन ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे भटक भटक दुख पावे । चौरासी बंधन में आवे ॥
राज रोग रोगी जिमि होई । वाको औषधि लगे न कोई॥
ऐसे रोग रहे संसारा ।कोइऔषधिनहिंदर्दसिहारा॥
संत हकीम दवा को देवें । निर्मल अंग आप करिलेवें॥
बिना दाम की दवा बतावैं । जीव सुखी करिरोगछुटावैं॥

(१) क्रोध, सराप ।

यहकमबखत कहननहिंमाने । भूत भवानी मेँ मन आने॥
करे पिसाच अरु पित्तर पूजा। सतसँग को कछुबातन बूझा॥
कैसे भरम जीव को जावे । मैली बुधि नहिं ज्ञान समावे॥

॥ दोहा ॥

जुगन जुगन बंधन पड़े, कर्म काल के द्वार ।
नर्क स्वर्ग की सुधि नहीं, दुख सुख बारम्बार ॥

॥ चौपाई ॥

ज्योँ कूकर हड़काना[१] होई । मारे मार करे सब कोई ॥
जो घर को कोइ के पग धारे । दुरदुर करि के मारि निकारे॥
ऐसे जीव भया हड़काया । आवागवन नाहिं सुख पाया॥
उपजे मरे बहुरि तन पावे ।फिरिफिरिआवागवनसमावे॥
चौरासी बासी बस होई । जनमे मरे काल मुख सोई॥
ऐसे जनम अनेक सिराने ।सतगुरु बाक बचन नहिं माने॥
खानिहिखानिजनमजुगधारे। बिन अधार फिरे मारेमारे॥
अंत अधार कोई नहिं कीन्हा । बिना सार सन्मुख नहिं चीन्हा ॥

॥ दोहा ॥

जो सन्मुख रहे संत के, अंत कहूँ नहिं जाय ।
सूरति डोरी लौ लगे, जहँ को तहाँ समाय ॥

॥ चौपाई ॥

त्रियसुत मात पितापरिवारा। यह झूँठे इन बंधन डारा॥
मोह जाल जग रह्यो बँधाई । ममता माया बिपति बसाई॥
यह जम जाल घेरि घुन खाई। जैसे कीट काठ के माहीं॥
घुनघुन खाय काठ को भाई ।यों संसय सब जग घुन खाई॥
रातदिवस कोइ चैन न पावे । संसय सुपने जाइ सतावे॥
यह बंधन बिपता ने मारा । कैसे होइ जीव निरबारा॥

(१) रोने वाला ।

जुगनजुगन परिपाटी[1] आई। योँ जिव पड़ा भूल के माहीं॥
ज्ञानबिबेकबचननहिं बूझा। यौंभयाअंधआँखनहिंसूझा॥

॥ दोहा ॥

आँखी में जाले पड़े, काढ़े कैान निकारि।
जब सथिया[2] नस्तर भरे, सुरति सलाई डारि॥

॥ चैापाई ॥

जब छूटैं आँखी के जारे[3]। सुरति सलाई नैन निहारे॥
सो कोइ यह सतगुरु से पावे। तिमिर नैन के तुरत छुड़ावे॥
योँ जग का छूटे अँधियारा। गुरु सूरज से होइ उबारा॥
जो कोइतिमिर नसायाचावे। गुरुचरननपर सुरतिलगावे॥
सुरजमुखी पथरी की नाईं। सन्मुख लावत अगिनसमाई॥
जो चेला सतगुरु को चावे। गुरु प्रताप पदअगम लखावे॥
जब बंधन टूटे जम फाँसी। जग आसा से रहे उदासी॥
मन अनुरागबिषयसबत्यागे। राग रीति जगकी सब भागे॥

॥ दोहा ॥

सुंदर सुरति सुधारि के, गुरु चरनन करि ध्यान।
भान उदय नितही उगे, संत बचन परमान॥

(हिरदे वाच)

॥ चैापाई ॥

चौरासी तजि नर तन थापा। यह सब संत चरन परतापा॥
एक बचन मोरी अभिलाखा। सोसुनिहौंस्वामीमुखभाखा॥
फिरनर तनका कहो बिचारा। जिनपाये जसजसनिरबारा॥
नरनिजरूपप्रकिर्त्तिबिचारा। कोइकोइआपअपनपौहारा॥
कोइसज्जनसुखसेज बिलासा। कोइ अपराधी बाँधीआसा॥
यह इनका कहो भेद निवेरा। हिरदे दास चरन का चेरा॥

---

(१) बंधेज, रीति। (२) जर्राह। (३) जाला।

जुग चारो कलु[1] मूल मलीना । नर तन धरे कलू[1] मतिहीना॥
यासे मन संदेह उठावे । स्वामीबचनबोध मनआवे॥
यह मोरो संदेह मिटावो । हिरदे को बिधिबिधिअर्थावो॥

॥ सोरठा ॥

कठिन कलू की रीति, जीति सके नहिँ आपको ।
मन इन्द्री सँग प्रीति, हित अनहित गुन गाँठि मेँ ॥

कलियुग मेँ जीव की दुर्दशा

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

हे हिरदे यह अकथ कहानी। कहँ लग बरनन कहूँ बखानी॥
नरकलुके मतिहीन अभागी। चाल चलैँमनबिषअनुरागी॥
अब याका बरतंत सुनाऊँ ।मन तन बरन बास बतलाऊँ॥
कोइ नर कर्मी कर्म करावे। जो कोई जैसे फल पावे॥
कोइ नर ज्ञानवंत अनुरागी । नरतनसुफलभोगबड़भागी॥
कोइ नर मुक्ति मनोहर पावे। नर तन मैँ सो सुफलकहावे॥
कोइकोइनरगुरगगनबिचारा।संत कृपा से आप सम्हारा॥
कोइनरकुटिलआपअपराधी। पड़ेकुमतिबस काल उपाधी॥

॥ दोहा ॥

कलू काल को का कहूँ, नर नारी मतिहीन ।
दीन भाव दरसे नहीं, मैली बुद्धि मलीन ॥

॥ छंद ॥

हिरदे कलू परताप से, नर की नजर मैली भई ।
गुन द्रोह दुंद बिकार मारग, दिवस निस बिष मैँ रही ॥
इन्द्री अपरबल बास बस अस, प्रीति मेँ फाँसी गई ।
जग लोभ मोह बिकार माया, ममत मैँ लागी रही ॥

---

(१) कलियुग।

पोट बिष मद मान सिर पर, बाँध करि गठरी लई ।
जुग जुग करम के भोग काया दुर्गति[1] दुख दीन्हा दई[2] ॥
कहुँ का बिपति यह जीव जड़ पर, जुलम जम की का कहो।
हिरदे हिरस[3] करि कोटि कर्मी, तुरत तन छूटै सहो ॥

॥ दोहा ॥

कोटि कर्म करनी करे, जम जुलमी को दाढ़ ।
जो रे पड़े सो ना बचे, सब जिव डारे चाब[4] ॥

मरने के समय सुरत कैसे खिँचती है— संत अपनी शरनागत सुरत की कैसे रक्षा करते हैं

॥ चैापाई ॥

संत जीव की बिपति छुड़ावैं । कर्मी जीव जक्त को चावैं॥
याको फल चौरासी माहीं । भिन्न भिन्न तोहि कहूँ सुनाई॥
जब जिव निकरि देह दरसाऊँ । वोहि समय की समझ सुनाऊँ॥
निकरि जीव तन छूटे भाई। जब की बातैं कहूँ बुझाई॥
सिमटि अकास भास जब जावे। जब नाड़ी मैं सोत समावे॥
जस रबि अस्त होय अँधियारा। प्रान पलो तन धुकधुक धारा॥
जस रबि भास गये उजियासी। धुकधुक प्रान बसे तन बासी॥
निकसे स्वाँस भास कृन[5] प्राना। येरे सिमटि कहो कहाँ समाना॥
जो वो ठाँव जैान से ठाईं । दसवाँ द्वार ब्रह्म के माहीं॥
सूरज ब्रह्म द्वार दस माहीं । उनसे किरन अंड में आई॥
किरन पाँच तत प्रान कहाया ।तत मिलि पाँच अकास जगाया॥

---

(१) दुर्गम, कठिन । (२) ईश्वर । (३) लालच । (४) चबा । (५) किरन ।

आतम सब में भास प्रकासा। सोई भास किया तन बासा॥
मारग भास जोई मग आया। तरक तालुवे राह समाया॥
ज्यौं प्रतिबिंब पड़े जल जाई[1]। ऐसे भास नाभ के माहीं॥
नाभ तेज तन माहिं समाना। रोमहि रोम बदन में जाना॥
भास तेज चेतन भइ काया। यह भीतर में बरनि बताया॥
जिन घट सैल करी काया की। भीतर भेद कहै जोइ भाखी॥
ऊपर की कहनी नहिं मानूँ। अंदर उदय होय घट भानू॥

॥ दोहा ॥

अंदर भानु उदै बिना, भीतर की का कहेन।
बैन बचन झूँठे कहे, बिन अंदर नहिं ऐन[2]॥

॥ चौपाई ॥

ब्रह्म जीव कुन प्रान कहाया। यह काया में भाखि बताया॥
ठीक ठौर अरु ठाम ठिकाना। अंदर कोइ परखि पहिचाना॥
यह सब बैन बदन में भाखो। सुन करि साध देइँगे साखी॥
निकरे प्रान बदन से जावे। जाहि समय को संत सुनावैं॥
जाका अब दृस्टांत सुनाऊँ। नकल माहिं मैं असल दिखाऊँ॥
जैसे पतँग गगन चढ़ि जावे। डोरी देत देत बढ़ि जावे॥
जब डोरी वह खैँचि खिलाड़ी। खैँचि डोरि भूमी पर डारी॥
सिमटी डोरि किया उन पिंडा। यहि बिधि सुरति खिँचै ब्रह्मंडा॥
रोम रोम से तेज खिंचाना। सिमटि सिमटि नाभी मैं आना॥
नाभि तेज से भास उठाया। जब तन मद्ध तालुवे आया॥
तालुवे से जब डोरि खिँचानी। जब तत पाँच अंड में आनी॥
खैँचै डोरि प्रान इँचि आवे। काल कान पर आसन लावे॥
काल कान के मारग लाई। या बिधि तन के माहिं समाई॥
जब वा डोरि को पकड़े जाई। संत सुरति की बैठक वाही॥

(१) जैसे पानी में जाकर परछाईं पड़ती है। (२) आँख।

वहीसतगुरुकीबैठकपासा। डोरिछाँड़ि होइ कालनिरासा॥
प्रानी सतगुरु की सुधि लावे। डोरी छाँड़ि काल अलगावे॥
जो सतगुरु सुधि बिसरे भाई।जबहिँकालघर बजत बधाई॥
जिनके हृदय संत लै लागी। सतगुरु साँच प्रीतिअनुरागी॥
जिनकेकाल निकट नहिँ आवे। डोरि छाँड़ि के दूर परावे॥
काल ठिकाने अपने आवे। सूरति में सूरति लिपटावे॥
अपनी सुरति सुरति में डाली। ज्यौं बंसी मच्छी खिँचि चाली॥
बंसी में मच्छी खिँचिआवे। ज्यौं सतगुरुमें सुरतिसमावे॥
सुरति डोरि पोढ़ मजबूती। जबहिँ काल सिरमारे जूती॥

॥ दोहा ॥

सुरति डोरि सतगुरु गहे, रहे चरन के माहिँ।
सुन्न सुरति सब्दै मिली, डोरी डोरि समाय॥
काल रहा झख मारि के, गयो जो दावा चूक।
निर्मल होइ आगे चले, कर्म कोल मुख थूक॥

॥ चौपाई ॥

जे सतगुरु सज्जन अनुरागी। संत चरन सूरति बड़भागी॥
कहुँ उनका यह यौं बरतंता। सूरति बसे सरन में संता॥
जो कोइ ऐसी लगन लगावे। सो सूरति सतगुरु में आवे॥
वारकाल जहँ बसे ठिकाना। काल पार सतगुरु का थाना॥
जेहि के मद्ध सुरति का बासा। सज्जनजोकोइकरे निवासा॥
अष्टकँवल पखड़ी दल माहीं। जो जेहि आस रहे जहँजाई॥
काल स्याम के बीच रहाई। सेत सुरति सतगुरु की भाई॥
बूझै यह कोइ समझ लखावे। याकी बूझसमझ कोइ पावे॥
यामें जिव का लगे ठिकाना। यहमारगसज्जन का जाना॥

॥ दोहा ॥

नैन स्याम और सेत के, मद्ध सुरत की लाग।
जो जैसे सतगुरु मिले, तैसे तिन के भाग ॥

॥ चौपाई ॥

जो सूरति सतगुरु को चाही। जैसी डोरि ऊँट की नाईं।
जैसे ऊँट अगाड़ी जावे। सब कतार[१] पीछे चलिआवे॥
बाँध डोरि पूँछि के माहीं। सब कतार पीछे चलि आई॥
सतगुरु सूरति मूल ठिकाने। ज्योंकतारजिवसुरतिसमाने॥
जो सूरति सतगुरुदृढ़लावे। सुनु हिरदे वह वही समावे॥
यही भाँति से चले न दावा। और भाँति सबमारगिरावा॥
तप संजम जोगी बहु पाले। ये मारग में भये बिहाले॥
जो कोइसमझिकरे यहलेखा।बिनसतगुरुनहिं मिलेबिबेका॥

॥ दोहा ॥

ज्यों कतार रहे ऊँट की, अगले ऊँट बँधाय।
यों सूरति सतगुरु कहें, सब जिव वही समाय ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

यह स्वामी सज्जन की बाता।यहिबिधिभाखेसभोसनाथा॥
सब संतन की देखी बानी। सबनेकहीबिमलमतिछानी॥
अब वह मोको भेद बतावो। करमी जीव काल को दावो॥
सज्जन का भाखा निरबारा। करमी जीव काल को जारा॥
उनकेप्रान कहाँ होइ जाई। कहोस्वामीमोहिंबरनिसुनाई॥
काल घाट रोके केहि द्वारे। सब जीवन को खाय बिडारे॥
कौन राह से जीव नसावे। कैसे सकल जगत को खावे॥
यह तनमें केहि भाँतिसमावे।बदन बीच वह क्योंकर आवे॥

---

(१) पाँती।

॥ दोहा ॥

प्रान निकारे आय के, घेरे घट के माहिँ ।
एक जीव बाचे नहीं, धरि धरि सब को खाय ॥

॥ चौपाई ॥

करता कौन जीव का होई । बिनजाने जगजाय बिगोई॥
कहँ से आय कौन उपजाया । क्योँकर देह धरी जग काया॥
पाँच तत्त तन रहा बँधाई । उपजि मरे चौरासी माहीं॥
याको सब यह सबब सुनावो । स्वामी यह धोखा दरसावो॥
पत मत हीन दीन हौँ दासा।चरनकँवलकीनिसदिन आसा॥
और आस बिस्वास न आवे । निसदिनसूरति चरनसमावे॥
ज्ञान बिबेक एक नहिँ जानो । ऊपर चरन सुरति कुरबानी॥
दिल दृढ़ मेहर सरन में होई । चित संसय मेटो प्रभु सोई॥

॥ दोहा ॥

दिल दुबिधा मोरे भई, स्वामी सरन तुम्हार ।
जार जक्त कैसे पड़े, कैसे जीव उबार ॥

॥ चौपाई ॥

काल बली परचंड कहावे । यासे जीव बचन नहिँ पावे॥
छल बल दाँव करे कइभाँती। करे कोप जिव पर दिनराती॥
नहिँकोइठौरबचनजिवपावे।जहाँ जाय तहँ जाय समावे॥
स्वर्ग मिर्त्त पाताल न बाचे । को है जबर सरन जेहिँ याचे[1]॥
भटकत फिरे जुगन के माहीं। कालबली से पार न पाई ॥
यह कइ दाँव लगाये फंदा। कर्मी जीव जक्त का अंधा॥
मारे जो जोरावर कोई । जबर संग कछु जोर न होई॥
काल बड़ा बरियार कहावे ।बिकटबिपतिकरिजीवसतावे॥

---

(१) माँगे ।

॥ दोहा ॥

काल जबर जुलमी बड़ा, खड़ा रहे मैदान ।
कर कमान खैंचे फिरे, मारे गोसा[1] तान ॥

॥ चौपाई ॥

ज्योँ बन भेड़ी सिंघ अहारा । जैसे जीव काल का चारा॥
डाके[2] सिंघ भेड़ के माहीं । ऐसे डाक काल जिव खाई॥
यहस्वामीमोहिँ कहोबुझाई। कौन चरित्तर काल कसाई॥
या की कर[3] कूँची बतलावो।भिन्नभिन्नकहिकरिसमझावो॥
केहि बिधि जाय जीव को घेरे। केहि मारग से सूरति फेरे॥

जीव सत्य पुरुष की अंश

(तुलसीदास बाच)

हे हिरदे तोहिँ आदिसुनाऊँ । जीव सुरतिकी संधिलखाऊँ॥
चौथे महल पुरुषइकस्वामी । जीव अंस वहि अंतरजामी॥
उनकी अंस जीव जगआया। करता पाँच तत्त में लाया॥

॥ दोहा ॥

करता ने काया रची, जुग जुग जग बिस्तार ।
सार दियो बिसराय के, घर घर करत पुकार ॥

कर्म काया का संग

॥ चौपाई ॥

पिंड प्रधान बसे तन माहीं । करता ने काया उपजाई॥
बेद पुरान कर्म उपराजा । यासे करे जीव जग काजा॥
करता करम किया बिस्तारा । लख चौरासी रूप सँवारा॥
काल अपर्बल जाल पसारा । उन सब घेरि जीवको मारा॥

---

(१) तीर की गांसी या भाल । (२) दहाड़ता है । (३) कल ।

कर्म कलंदर[1] आप नचावे । बाजी लाय जीव भटकावे॥
कोइ बंधन से बाँधे भाई । ऐसे बंध अनेक लगाई॥
कोई दाँव नहिं मारग पावे । धरि धरि देही जन्म सिरावे॥
चौरासी से निकरि न पावे । बारबार वहि माहिं समावे॥

॥ दोहा ॥

कर्म सारनी[2] बुधि बसी, सूरति रही अधीन ।
आसा के बस में पड़ी, बासा बिपति मलीन ॥

॥ चौपाई ॥

कर्म अपरबल भारी भोगू । सब जग जार जब्बर यह रोगू॥
बिना कर्म कोइ काया नाहीं । जग बस रहा कर्म के माहीं॥
काया बिना कर्म नहिं होई । कर्म बिना काया नहिं सोई॥
यह अनादि से रचना भाई । जुगनजुगन ऐसे चलि आई॥
कर्म भूत सब जग को लागा । यासे बची नहीं कोई जागा[3]॥
कीट पतंग संग सब केरे । तीन लोक अंडा सब घेरे॥
सात दीप नव खंड कहावे । चौदह लोक कर्म बस गावे॥
चन्द्र सूर अरु दस औतारा । यह सब बँधे कर्म की जारा॥

॥ दोहा ॥

अंड खंड ब्रह्मंड लोँ, लोक सकल जग जाल ।
काल कर्म सिर ऊपरे, जुग जुग फिरत बेहाल ॥

काल के चरित्र

॥ चौपाई ॥

अब यह काल चरित्र लखाऊँ । अंदर प्रान बसे जेहि ठाऊँ॥
काया मद्धे काल सतावे । जब वह प्रान लेन को आवे॥
सिमटत भास स्वाँस उठि जावे । प्रान पतो जम सिमटि समावे॥

---

(१) बंदर नचाने वाला । (२) कुटनी । (३) जगह ।

भास अकास तत्त में जाई । तत्त अकास अंड[1]के माहीं॥
जब यह कर्म कला उपजावे । बुद्धि सुरतिको आन दबावे॥
मैली बुद्धि सुरति के माहीं । वही समय मैं जाय समाई॥
कर्म अनुसार बसे मन आसा । सूरति मनबुधिबंधनफाँसा॥
सुनत अवाज स्याम सठ[2]गाँसा[3]। घेर घुमरि लावे जहँ स्वाँसा ॥

॥ दोहा ॥

कर्म सारनी[4] बुधि बसै, आसा बास निदान ।
यह नव द्वारा पिंड मैं, निकसि जाय ज्यों प्रान ॥

॥ चौपाई ॥

यह तो कर्म बुद्धि अनुसारा । अब सुनियो यह काल पसारा॥
अस्ट कँवल दल अंदर माहीं । ह्वाँ छिपि बैठा काल कसाई॥
जबसबभाससिमटिकरिआवे।जब सूरति पै बुधिपहुँचावे॥
कँवल द्वार पखड़ी को रोके। उलटी सुरति काल मुखसोखे॥
काल दाढ़ मैं आन चबानी । जब ढरके नैनन से पानी॥
लगे टकटकी दिखे न भाई । वाहि समय को करे सहाई॥
जम के दूत घेर चहुँ फेरा । निकसे प्रान छोड़ करि डेरा॥

जहाँ आसा तहाँ बासा

कर्म सारनी बुद्धि कहाई । जहँ भइ आस बास जेहिंमाहीं॥

॥ दोहा ॥

कर्म आस की बास मैं, जोनी जोनि समाय ।
जो जैसी करनी करे, सो तैसे फल खाय ॥

नर्कों के दुख

॥ चौपाई ॥

जम का जुलम जोर दरसाऊँ ।मारग मैं जिवबिपतिबताऊँ॥

(१) सहसदल कँवल। (२) दुष्ट काल। (३) घेर कर पकड़ लेना। (४) कुटनी।

लोह के खंभ तपत के माहीं। जहाँ जीव को ले चिपटाई॥
तड़फ तड़फ जिव जुलम दुखारी। तपत खंभ दुखउपजेभारी॥
वाहि समय को कहा सुनाई। लोहा अगिन धमन¹धौंकाई॥
ज्यौं धम्मन से धौंकि लुहारा। लोहा जो अगिनी में डारा॥
ऐसे कस्ट जले जिव भाई। वही समय की बिपति बताई॥
पाया भोग सोग सोइ जाना। छटपट करे जीव बिलखाना॥
अब नर्कन का सुनो सुभावा। कर्मी जीव सहैं दुख दावा॥

॥ दोहा ॥

कुंभी नर्क निदान यह, पड़े जीव जब जाय।
सिर समेत बूड़ा रहे, सदा नर्क के माहिं॥

॥ चौपाई ॥

जबहि नर्क सिर ऊपर काढ़े। जब ऊपर जूती जम मारे॥
डूबा रहे नर्क के माहीं। सिर काढ़े जम मारे भाई॥
कुंभी नर्क कल्प लौंरहे बासा। मुख में नर्क नाक में स्वाँसा॥
कई जुगन लौं रहे बिहाला। फिर अघोर नर्क लै डाला॥
हूाँको कठिन भोग दुखदाई। तनसड़िमरैउपजिवहिमाहीं॥
निकसि न होय कधी निरवारा। गाढ़े बंध बँधे चौधारा॥
पापी जीव अधम है सोई। करम भोग भुगते जो कोई॥
करनी कीन्ह मलीन बनाई। जिन की दसा²भोग दरसाई॥

॥ सोरठा ॥

नर्क अनेकन और हैं कहँ लग करूँ बयान।
दुख भुगते यह जीव ज्यों जाने जो भोग समान॥

खानि योनि के कष्ट

॥ चौपाई ॥

ये भुगताय बहुरि सुनु भाई। जोनी खानि जुलम दुखदाई॥

(१) भाथी। (२) दशा, हालत।

खानि खानि का कहूँ निबेरा। लख चौरासी जीव बसेरा॥
भवसागर जल भरा अथाही। अंडा जीव पड़े सब माहीं॥
अंडा मद्धे जीव बिचारा। सो सब बहे चौरासी धारा॥
धार धार का कहूँ बिबेका। तो लिखने नहिं लागै लेखा[१]॥
हे हिरदे यह अद्‌भुत बाता। लख पावे नहिं करम बिधाता॥
ब्रह्मा बासन गढ़ै कुम्हारा। बोहु पुनि कर्म जोग अनुसारा॥
सिव जोगी भिच्छा मैं राजे। बिस्नु भोग बैकुंठ बिराजे॥

॥ दोहा ॥

करम भोग अनुराग मैं, माया का बिस्तार।
तीन त्रिया तीनों लई, कर्म जोग अनुसार॥

॥ चौपाई ॥

यहि बिधि जक्त चलाई बाटा। इन भुलाय दीन्हा घर घाटा॥
सब दुनिया मारग यहि लागी। भवसागर जिव भया अभागी॥
जग में जीव करै ब्योहारा। घटी बढ़ी कछु नाहिं सिहारा॥
आवागवन भया बिस्तारा। भवसागर यों जीव बिचारा॥

संत छाप के एक जीव ने नर्क में पड़कर सब नर्कियों का उद्धार कराया

अब वह कथा कहूँ बिस्तारी। हिरदे सुनिये ज्ञान बिचारी॥
संत छाप जेहि जिव पै लागी। कोइ जिव भूलि गया अनुरागी॥
कूसंगति से भूल समानो। जाकी कहूँ सुनो सहदानी॥
जो कदाचि नरक मैं जावे। संत जाय के जहाँ छुड़ावैं॥

॥ दोहा ॥

साह असामी पै करज, जाय लेइ जहँ होय।
ऐसे संत सुभाव को, परख लीजिये सोय॥

---

(१) हिसाब।

॥ चौपाई ॥

मोहर छाप के काज सिधावैं । नरक माहिं वे जीव जुड़ावैं॥
अँगुठा बोरि नरक के माहीं । वहि ततछिनमँनरकसुखाईं॥
जोनी छूटि नरक से आवे । फिरि नर देही जोनिजुड़ावे॥
एक जीव कारन उपकारी । सब छूटे भये जीव सुखारी॥
अब नानक की साखसुनाऊँ । सोदर[1] पौड़ो[2] में समझाऊँ॥

संत की अनूठी दया

॥ दोहा ॥

धनधनराजाजनक है, जिन सुमिरन किया बिबेक।
एक घड़ी के सुमिरते, पापी तरे अनेक ॥
ऐसा सुमिरन जानि के, संतन पकड़ी टेक ।
नानक सुमिरन सार है, बिसरे घड़ी न एक ॥

॥ चौपाई ॥

नानक जाय अँगूठा बोरा । नरक जीव के बंधन तोड़ा॥
ऐसी साख समझ कोइ बूझै । तिमिर जाय आँखी से सूझै॥
साखी देन का कारन नाहीं । अंधे जीव भरम के माहीं॥
जो बड़ भाग दया वे करईं । तोकदाचि बंधन निरबरइ॥
जुग जुग भूले जीव अनेका। दया भाव सतगुरु से ठेका॥
संत दया की रीति नियारी । बार बार चरनन पर वारी॥
जो कछु करैं करैं सोइ संता । संत बिना नहिं पावे पंथा॥
सतगुरु जो जोइ राह बतावैं। भूले को मारग दरसावैं॥

---

(१) ग्रन्थ साहब के वह पद जिस के शुरू में "सोदर" का शब्द आता है ।

(२) पद्य, नज़्म ।

॥ दोहा ॥

सतगुरु संत दयाल से, करम रेख मिटि जाय ।
मन तन सूरति साँच से, ज्यौं का त्यौं रहि जाय ॥

॥ छंद ॥

हिरदे अजब वोहि रीति घर की, संत से नाहीं बड़ी।
जहँ लौं निगम कहे बाक बानी, सो सभी नीचे पड़ी॥
आगे अगम बेअंत मारग, सुरति वहिं जा कर अड़ी ।
जहँ लोक लखन अलोक लखि कर, गगनपर सूरति चढ़ी॥
तक सूर सन्मुख दृस्टि धरि कर, नेह निसाने पै गड़ी ।
सूरति सिखर के पार होइ कर, कँवल पखड़ी से कढ़ी ॥
चढ़ते पलक नहिं बार उनको निमख नहिं लागे घड़ी ।
छोड़े सकल सँग साथ सबको, फौज तजि पहुँची छड़ी ॥
सबको दिये छिटकाय करिके, सुरति सत मत से लड़ी ।
यहि भाँति साथ जड़ाव कुन्दन, नग अँगूठी ज्यौं जड़ी॥
अंदर अलख के पार पद में, पुरुष के आगे खड़ी ।
भयो मेल मिलन मिलाप पिव को, संत के सरने पड़ी ॥
सत पुरुष संत दयाल दिल ले, सुरति सज्जन की बड़ी ।
कैसे नरक दुख खानि में से, काढ़ि लैं वोही घड़ी ॥
ऐसे पुकारैं साख सब कहँ, संत की बातें बड़ी ।
सब सुन स्रवन पर हाथ डारे, संत पट खोलैं कड़ी ॥

॥ दोहा ॥

संत सरन जो जिव रहे, गहे जो उनकी बाँह ।
थाह बतावैं समुद की, बल्ली भवजल माहिं ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे हिरदे संत सुभावा । भवजल पार लगावैं थावा[1]॥
जहाजसुरतिउनकीनितचाले। समुदर पार भरावैं माले॥

---

(१) थाह में ।

भरती भरें सुरति की डोरी। पहुँचे पार जहाज को छोड़ी॥
माल बिलायत में जा बेंचें। मेवा आनि[1] खरीदी खैंचें॥
जम्बू दीप मुलुक के माहीं। खलक माल को चीन्हे नाहीं॥
गली गली में ले दरसावें। मेवा ल्यौ जो जिनको चावे॥
बार बार कहि कर गोहरावें। कोइ मेवा के पास न आवें॥
देखे सुने समझ कर कहते। यह तो माल बड़ा कछु लेते॥
भाव सुने पर मूड़ हिलावें। साँचीमानिबहुरिनहिंआवें॥

॥ दोहा ॥

तन मन से साँचो कहैं, खरी खरी बतलान।
पल्ले में डालें जबै, खैंचै खूंट निदान[2]॥

॥ चौपाई ॥

कदरबिनानहिंमालबिकाना। संत दिसावर बड़ी न जाना॥
मेवा मोल खरीदी नाहीं। वह सवाद कहो क्योंकर पाई॥
देखे सुने खाय मुख माहीं। सो कीमत को जाने भाई॥
लिया दिया देखानहिंआँखी। वह कहा परख कहँगे भाखी॥
यह संतन का माल अगूढ़ा। सो का जाने जग मन मूढ़ा॥
यह तो नाज खरीदा चावे। धर गठरी सिर ऊपर लावे॥
धड़ा[3]पसेरी तोल पिछाने। यहि बिधि माल संत का जाने॥
गठरी बाँधि लेउँ सब सारी। यह जाने यों माल अनारी॥

॥ दोहा ॥

संत मता दुरलभ कहैं, सतसँग में गोहराय।
बड़े बड़े हारे सभी, संतन की गति गाय॥

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे बोले इक बानी। स्वामी बचन कहन पहिचानी॥
बचनअडोलबोलप्रियलागा। मोको मिले पुरब बड़े भागा॥

---

(१) ला कर। (२) जब उसके पल्ले में माल देने लगते हैं तो वह पल्ले का कोना खींच कर लेने से इनकार करता है। (३) दस सेर का बाट।

करनी कौन पुरबली रेखा। स्वामी को भरि नैनन देखा॥
ऐसो कहा भाग भल मोरा। चरन माहिं चित रहे बहोरा॥
हे स्वामी यह कहनि बखानी। तुम्हरी दया समझ में आनी॥
को यह कहे अपूरब बाता। हिरदे चित बिस्मय[१] बिख्याता॥
बिस्मय दूर भर्म सब भागा। स्वामी चरन कँवल अनुरागा॥
एक बात मोरे मन आई। मेवा माल कहो समुझाई॥

॥ दोहा ॥

संत समुंदर पार मेँ, जहाज भरी दरियाव।
सो मेवा मो से कहो, संत खरीदेँ जाय॥

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

हिरदे जग आँखी मेँ जाला। उन कहा कहूँ प्रगट वह माला॥
अच्छर मेँ बोली समझाई। जग ने बूझ मर्म नहिं पाई॥
यह मेवा मैं वा समझाई। याहि मेँ समझि लेव तुम भाई॥
अच्छर माहिं अर्थ समझाया। जिन बूझा जिन ने कछु पाया॥
जो जाने यह भेद भलाई। जहँ कहुँ कृपा संत की छाई॥
बानी बचन अपूरब बोली। जग में प्रगट नाहिं हम खोली॥
सज्जन सूर सुरति के नाका। सो समझे बोली यह भाखा॥
देस देसंतर के हम बासी। दीपक द्रुग नैनन पर चासी[२]॥
हिरदे हमरी जाति न पाँती। मैं कहा कहूँ बड़ा अपराधी॥
यह अच्छर का लेखा लावे। कोइ सज्जन सत साध कहावे॥

॥ दोहा ॥

सतसँग मेँ मन नीच है, जिनके हिरदे हार।
दीन गरीबी गवन से, बैठे मन को मार॥

---

(१) संदेह। (२) जगाया।

भक्त के लक्षण

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे यह भक्त कहावे। दास भाव स्वामी को चावे॥
भक्ति बड़ी खाँड़े की धारा। जो यह करे आप जिन मारा॥
आपा को समझे नहिं भाई। जिन यह भक्ति गरीबी पाई॥
बिन सतसंग भक्ति नहिं आवे। दास भाव मन नाहिं समावे॥
यहि बिधि भक्ति करै मन लाई। जग स्वामी अज्ञा अस गाई॥
सिर धरि उचित चले मन मोड़ी। मद मन मान बड़ाई तोड़ी॥
सो सज्जन निज दास कहावे। यों सेवा सतगुरु की गावे॥
छलबल साफ सुरति से तोले। यों सतगुरु की बानी बोले॥

॥ दोहा ॥

छलबल से साँचा रहे, निर्मल बुद्धि बिचार।
जब रँग मिले मजीठ को, सतगुरु पुरुष अपार॥

अभक्त के लक्षण

॥ चौपाई ॥

अब यह अभक्तन की सुनु भाई। कपट भक्ति मन में चतुराई॥
बगुला भक्त बड़े जग माहीं। बैठे जाय राह में जाई॥
छाप तिलक कर माल सुहावे। गठरी काटन को मन चावे॥
परदेसी निज बास निवासी। डारे जाय गले में फाँसी॥
मीठे मधुर दीन लघुताई। यह लच्छन उनके हैं भाई॥
और अभक्त अधम अरथाऊँ। मन में कुटिल प्रीति परभाऊ॥
मैल अँदर मुख मीठा बोले। भीतर कपट गाँठि नहिं खोले॥
अंदर पाप बसे मन माहीं। ऊपर भक्ति भाव दरसाई॥

॥ दोहा ॥

बड़े भक्त जग में बजैं, मँजैं[1] न मन का मैल ।
खेल खिलाड़ी काल के, फँसे गुमर[2] की गैल ॥

॥ चौपाई ॥

है हिरदे वे अधम कहाई । जुग जुग पड़े नर्क के माहीं॥
कोई न उनका काढ़नहारा । कीन्हे कर्म अनीत अपारा॥
जन्म धरे कइ नाहिं जुड़ावे । कर्म बली त्रय ताप तपावे॥
कीट पतंग जोनि जिन पाई ।भोग भुगति अपनीअधमाई॥
कहँ लग कहूँ कर्म की रेखा ।जोकछुकीन्हलीन्हसोइलेखा॥
बंधन कर्म आप अपनावे । औरन को कहि दोष लगावे॥
यह हिरदे जिवबड़ाअभागी। खरी छाँड़ि खोटी अनुरागी॥
दुर्लभ तन नर देही पाई । जीवन तुच्छ जक्त के माहीं॥

॥ दोहा ॥

घड़ी घड़ी स्वासा घटे, आसा अंग बिलाय ।
चाह चमारी चूहड़ी[3], धरि धरि सब को खाय ॥

चेतावनी

आसा अमृत सब ने जानी। यों ऐसे चौरासी खानी ॥
स्वासा निकरि पलक में जावे। यह आसा करि कर्म बँधावे॥
तन का नाहिं भरोसा भाई।पलकमाहिं यह जाय बिलाई॥
पड़ि बुल्ला फूटे जल माहीं । छिन में तन छूटे यों भाई॥
महलमुलुकऔरमालखजीना[4] । सँग नाहिं जाय परखि परबीना॥
जीव निकरि तन जाय जरावे। जब तेरे कछु संग न जावे॥

---

(१) माँजैं। (२) गुमराही, भूल। (३) भंगिन । (४) ख़ज़ाना।

यह यौँ अंध धुंध चलि आई । यह तेरे कोइ संग न जाई॥
हाय हाय करि जन्म बिताया। नहिँ कोइ तेरे कारज आया॥

॥ दोहा ॥

हाय हाय करि पचि मरे, कुटुँब काज अज्ञान ।
मान बड़ाई जक्त की, डूबे करि अभिमान ॥

॥ छंद ॥

हिरदे करम जग जाल में, जिव अधम की आसा बढ़ी ।
परले पलक में होय तन मन, मौत सिर ऊपर खड़ी ॥
दिन चारि जग में जीवना, जिव स्वास की बीते घड़ी ।
चेतन बदन में बास बिन, फिर रहेगी काया पड़ी ॥
काया किला गढ़ फूँकि जब, जमराय की फौजेँ चढ़ीँ ।
अंधा धुंध दल प्रबल वाके, सामने कहो को लड़ी ॥
भीतर बुरज के सुरँग लागे, पलक में टूटे गढ़ी ।
हिरदे बड़े रन खेत में, कई सूर की लोथेँ सड़ीँ ॥

॥ सोरठा ॥

जम यह जबर कराल, काल जुलम जुलमी बड़ा ।
खड़ा रहे मैदान, जान कोई पावे नहीं ॥

॥ चैापाई ॥

ऐसा घेरा जम ने डारा। सब जिव पकड़ि घेर करि मारा॥
जमकी जाल बड़ी दुखदाई । नहिँ कोइ छोड़े कालकसाई॥
जीव अंध फँद माहिँ फँदाना। भूला जीव जन्म से जाना॥
बंधन ने वा को बौराया । मोर तोर में जन्म गँवाया॥
आस अपरबल सबसे भारी।यौँ कहा जाने भेद अनाड़ी॥
ममता ने चित चाट लगाई। अपने घर की बाट भुलाई॥
सतसँग सुना न सतगुरु पाया । यासे भेद हाथ नहिँ आया॥

जन्म मरन दुखिया में दौड़ा। नाँगे फिरे पाँव नहिं जोड़ा[१]॥

॥ दोहा ॥

जुलमी की जाली पड़े, बड़े बड़े उमराव।
दाँव कधी लागे नहीं, भागन कवन उपाव॥

काल कराल

॥ चौपाई ॥

खेले जुगजुग काल सिकारी। खाये जक्त जीव सब सारी॥
को रोके जबरी के माहीं। आड़े[२] फिरें सामरथ नाहीं॥
सतगुरु से डरपत है भाई। कछू और ना चले उपाई॥
जिव मूरख वो[३] जबर कहावा। याको कछू चले नहिं दाँवा॥
कई परपंच करे जम काला। यासे बपुरा[४] जीव बिहाला॥
कोई उपाव से बाचे नाहीं। सतगुरु सरन बिना कोइ भाई॥
उन बिन फंद कटनको नाहीं। जो कोइ कोटिन करे उपाई॥
मारग रोक बाट में बैठा। सन्मुख होइ को खावे खेटा[५]॥

॥ दोहा ॥

सतगुरु के टारे टरे, और न माने एक।
भेष टेक करि करि मुए, करि दरियाप[६] दिल देख॥

॥ चौपाई ॥

सब जिव सौंपि पुरुष यहि दीन्हा। तीन लोक का मालिक कीन्हा॥
जो चाहे सो करे अनीता। यहि के सन्मुख कोइ नहिं जीता॥
जबरी जोर अपरबल भाई। संत बिना कोइ पार न पाई॥
नाक छेर जो नाग नचावे। ऐसे करि काबू में आवे[७]॥

---

(१) जूता। (२) छिपते। (३) काल। (४) निर्बल। (५) सोंटा—"खेटक" नाम बलराम जी के हथियार का है। (६) दरियाफ़्त=खोज और जाँच। (७) जैसे श्रीकृष्ण ने काली नाग को नाथ के नचाया था वैसे संत काल को परास्त करते हैँ।

सात्विकी और दीन रहनी के गुन

यह संतन से बनै बिचारा । उन अपना कारज यों सारा॥
जग आसा सबही बिसराया। जब यह उनके काबू आया॥
सब रस भोग खान अरु पाना । इन्द्री सुख सब को बिसराना॥
मेवा मही एक समाना । मीठ[1] मिठाई सम करि जाना॥

॥ दोहा ॥

सहज भाव से जो कछू, आवे अमृत भाव ।
यह सुभाव भीतर बसे, जब कछु चले न दाँव ॥

॥ चौपाई ॥

रूखी रोटी साग अलोना । बहुत प्रेम से पावे दूना ॥
उनके मन ऐसी उपजावे । जब वह उनके काबू आवे॥
यहि बिधि और करे जो कोई । सो चीन्हे मन बिरला वोही॥
और बात कोइ बाट न पावे । मनकी कला हाथ नहिं आवे॥
सतगुरु सूर मेहर गति न्यारी । वे चाहैं तो लेहिं उबारी॥
और उपाय एक नहिं लागा । भटकत खोज फिरे कइ जागा॥
यह बिषई मन मान बड़ाई । हिरदे कपट कुमति मति माहीं॥
मन मतिमंद अंध है आँखी । मनकी तरँग रहे नहिं राखी॥

॥ दोहा ॥

मन तरंग तन में चले, आठो पहर उपाव ।
थाह कधी पावै नहीं, छिनछिन छल परभाव ॥

॥ चौपाई ॥

छलबलदाँवलगेनहिं हाथा । फोड़ै सिर कितने केइ भाँता॥
जब सतगुरु की मेहर मँझावे[2]। उनकी दया रमज कछु पावे॥
और भाँति कोइ करे उपाऊ। सुपने उनका मिलै न थाऊ[3]॥
ज्ञान जोग बैराग बिधी से । और तने[4] नहिं मारग दीसे॥

---

(१) तीत ? (२) हेरै, खोजै । (३) थाह, पता । (४) तरह ।

वे अंदर घट लेइँ पिछानी । बोली मेँ परखेँ सब बानी॥
चालचलनसबभाँतिबिचारैँ ।जबजेहिजीव कोकारजसारैँ॥
दीन लीन सब भाँति निहारैँ। जेहिजिवका अंकुर बिस्तारैँ॥
रहनि गहनि से देखेँ भाई । सुधि साँचे परखेँ सब ठाईँ॥
योँ सब भाँति लखैँ परबीना। जब वाको दरसावैँ चीन्हा॥
उजली बुद्धि मलीन नसावे । जब मनको सुधताई आवे॥
जग मेँ रहे मरे मन भाई । जग इच्छा सब देइ उड़ाई॥
मुरदाबोल बने मति हीना ।जगबिरोधखुसआपअधीना॥
मार मार सब जग गोहरावे । जब लालोँ की लाली पावे॥
काला मुख मन मौज उड़ावे । जबदयाल की मेहर बसावे॥
उनकी कृपा दृस्टि है न्यारी । वे चाहेँ जब लेइँ उबारी॥
दीन जानि कोइ सरनै आवे । चरनकँवल चितसुद्धबसावे॥
चीन्हे बचन संत के जोई । सिर ऊपर धरि लेवे सोई॥
उनको बड़े जानि मन माने । जब उनका उपदेस पिछाने॥

॥ दोहा ॥

उपदेसी वहि देस के, भेष भवन के पार ।
सार समझ सुलटी कहेँ, जग करि उलटि बिचार ॥

भेष, पंडित, बाचक ज्ञानी इत्यादि

॥ चौपाई ॥

जो बानी मुख से उन गाई ।कोई समझ न मन मेँ लाई॥
बाम्हन ने रुजगार बिचारा। घरघर कथा कीन्ह बिस्तारा॥
बाँचत फिरे करे रुजगारा । उद्र काज उन पेट सम्हारा॥
बानी का कछु मर्म न पाया। बाँचिबचनजगकोउरझाया॥
परमारथ पर दृस्टि न डारी। बोल अमोलनबातबिचारी॥

संत बचन सब कहँ अतोला। बानीमें कोइ सार न खोला॥
भेख टेक में रहे भुलाई। संत बचन की संधि न पाई॥
पूजा आप करावे अपनी। रात दिवस माला को जपनी॥
वह भी यहि मारग में भूला। केहि बिधि पावें सार अतूला॥

॥ दोहा ॥

पोथी पढ़ने में लगे, चढ़ा ज्ञान का मान।
सभा माहिँ मोटे भये, गुन के संग गुमान॥

॥ चौपाई ॥

सार असार न चीन्हा भाई। गुन के ज्ञान चढ़ी गुरुवाई॥
संत सार नहिँ बानी बूझी। गुन की गैल आँख नहिँ सूझी॥
गुनी भये बहु जक्त रिझाया। बादइ जग में जन्म गँवाया॥
ज्यौँ बिस्वा(१) पैसे से राजी। या बिधि बुद्धि सभी उपराजी॥
जल बिन मीन भई बेहाला। ज्यौँ पैसे डाली जग जाला॥
ज्ञानी गुनी कबेसुर होई। पंडित और भेख सब कोई॥
माया ने चेरा करि राखा। समझै कहा संत की भाखा॥
ज्यौँ रबि अस्त होय अँधियारा। ज्यौँ जग हृदय तिमिर भया सारा॥
बिन अंजन नहिँ नैनन सूझै। सतगुरु बचन कौन बिधि बूझै॥
गुरु दयाल से अंजन पावे। जब कहुँ तिमिर आँखि से जावे॥
दीन होय बिन पावे नाहीं। संत बिना नहिँ तिमिर नसाई॥
और दवा कोइ काम न आवे। सतगुरु चरन सदा लौ लावे॥

॥ दोहा ॥

और आस बिस्वास की, झूँठी है सब बात।
हाथ कछू आवे नहीं, जम धरि मारे लात॥

---

(१) कसबी।

॥ छन्द ॥

ज्ञानी कवेसुर पंडिता, सब बाँच करि पोथी पढ़े।
कोइ अर्थ बात बिबेक पूछे, तुरत ही उनसे लड़े॥
बड़े ज्ञानवंत महंत मोटे, मान मुख बातें कढ़े।
सतगुरु अगम पुर पार पद की, बात नहिँ हिरदे गड़े॥
केइ भाँति संत पुकार बोलें, तोल बिन चित ना चढ़े।
गफलत पड़ी सब देस दुनिया, समझि कोइ सूरे अड़े।
सज्जन सुरति के रंग राचे, कर्म काँचे से कढ़े॥
अपने रहे उनमान से, नहिं मान सेवा इक कढ़े॥

॥ दोहा ॥

हिरदे जो जन असल है, नकल कधी नहिँ होय।
कूसंगति के गुन गहै, नकल कहावै सोय॥

॥ चौपाई ॥

असली अपनी आदि न छोड़े। करि बिबेक बंधन को तोड़े॥

असली
(तेजी[1] घोड़े का दृष्टांत)

॥ चौपाई ॥

अब याकी इक नकल दिखाऊँ। नकल माहिँ असली दरसाऊँ॥
कारवान सौदागर आया। घोड़े खरीद बहुत से लाया॥
कीन्हा सहर से बाहर डेरा। फजर[2] जाय घोड़े को फेरा॥
लोग सहर के देखन आये। तेजी गुन चित माहिँ समाये॥
कहो सौदागर कीमत भाई। कोइ कहि कर अस बचन सुनाई॥
तब सौदागर बोला भाई। सवा लाख कीमत फरमाई।
सहर माहिँ कोइ का लै जाने। कीमत सुन करि होस हिराने॥

(१) घोड़े की एक नसल का नाम। (२) तड़के।

राजा मूरख बूझि न बाता । तेजी असल न जानो जाता॥
मैं तेजो की असल न जाने । काना मुख से भाखि बखाने॥
जब घोड़ा मन में घबराना । काना मुख से कहै बखाना॥
घोड़ा सुने बहुत दुख पावे । अब याका का करूँ उपावे॥
बोल राय के कैसे लागे । ज्यों अगिनी हियरे में दागे॥
बहु घबराय कहे वो घोड़ा । रन पड़े कहूँ राय से तोड़ा॥
ऐसी मन में बात बिचारूँ । राजा को कोइ छल से मारूँ॥
एक दिवस ऐसा भया भाई । पड़ि चकरी[1] कोइ फौजै आई॥
भया बिगाड़ सहर में भाई । राजा की फौजैं चढ़ि आई॥
आमें सामें[2] लगो लड़ाई । बहु रन खेत भया वहँ आई॥
बहुत दिनन से बात बिचारूँ । लगा दाँव अब राजा मारूँ॥
घोड़ा लाय सवारी कीन्हा । फेरा राय गरम कर लीन्हा॥
फेर फार कर एड़ चलाई । जब पहुँचा रन भीतर जाई॥
घोड़ा वही याद करि लयऊ । रनभीतर जाकर अड़ि गयऊ॥
बहु सवार राजा ले घेरा । घोड़ा अड़ा फिरे नहिं फेरा॥
वह फौजन का कहे सिरदारा । तेजी का मारो असवारा॥
तब तेजी मन किया बिचारा । मारा जाय मोर असवारा॥
तेजी कुल पै गारी[3] लाऊँ । राजा के बोलन पै जाऊँ॥
तेजी कुल को नाम धराऊँ । राजा की मन बात बसाऊँ॥
यह बिचार मन घोड़ा कीन्हा॥ तुरत बचाय राय को लीन्हा॥
जो कोइ असल कुलन के भारी । मन में लेवें बात बिचारी॥
असली जो कोइ असल बिचारे । नकली नकल माहिं चित धारे॥
नकली न्यारी नकल चलावे । असली का वह मर्म न पावे॥
नकली असली अंतर भाई । हिरदे तो को बरनि न जाई॥

---

(१) चारों ओर से घेरा डाले हुए । (२) आमने सामने । (३) कलंक ।

॥ दोहा ॥

तेजी[1] घोड़ा असल को, क्योंकर करूँ बखान ।
चले पछैयाँ पवन ज्यों, ऐसा तुरी निदान ॥

॥ चौपाई ॥

यह भनकार राज पै आई । राजा के कोइ कान सुनाई॥
घोड़ा एक अपूरब आया । तेजी अस कहि नाम सुनाया॥
जब राजा बोले अस भाई । लावो वह सौदागर जाई॥
हलकारे को हुकम सुनाया । सुन सौदागर पै चलि आया॥
घोड़े सुधाँ[2] चलो तुम भाई । राजा का यह हुकम बजाई॥
सुनि सौदागर घोड़ा लीन्हा । राजा सन्मुख घोड़ा कीन्हा॥
घोड़े को देखत भये राजी । कहोकीमतसचसचउपराजी॥
जब सौदागर बोले बैना । सवालाख कीमत का कहना॥

॥ दोहा ॥

सौदागर से पूछि कर, राजा खामुस[3] खाय ।
मुख से बोले कछु नहीं, मन ही मन मुसकाय ॥

॥ चौपाई ॥

जब राजा ने बात बिचारी । सौदागर यह अहै अनारी॥
करोड़ रुपै कीमत का घोड़ा । इन ने मोल बताया थोड़ा॥
जब ऊपर से पाखर मोड़ा । काना एक आँख से घोड़ा॥
राजा तो घोड़े से राजी । लेना याहि बुद्धि उपराजी॥
दिये दाम सौदागर माँगे । घोड़ा भीतर भूमि उलाँगे॥
घोड़े को बाँधा घुड़साला । कइ खिजमत के करनेवाला॥
मक्खी तन पर लगन न पावे । घोड़े ऊपर चँवर डोलावे ॥
जब सिकार राजाजी जावे । काने को लावो गोहरावे॥
जब जब राय सिकारै जावे । काना कहिअसबचनसुनावे॥
ऐसे कइ दिन बीति सिराना । सुनिघोड़ामनमें रिसियाना॥

---

(१) ताज़ी ? (२) समेत । (३) चुप ।

॥ दोहा ॥

असली असल जनाइया, घोड़े का दृस्टांत ।
राजा मूरख नकल यह, भाखि बरनि बरतांत ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे बोला इक बाता । असली की भाखी बिख्याता॥
हे स्वामीइक और बतावो । नकली की कहि कर समझावो॥

नकली

(तुलसीदास बाच)

नकल नीच की असल निनारी । मन मलीन बुधि सकल सिहारी॥
संकर बरन[1] यह वही कहावैं । सासतर में उनको यौं गावैं॥
सज्जन से वे प्रेम छुटावैं । नीचे से नीचा मन लावैं॥
नीचनीचकी मसलत[2] मीठी । ऊँची अकल एक नहिं डीठी॥
ऐसे अधम नर्कपुर गामी । नहिँ समझैं कोइ सेवक स्वामी॥
गुरुद्रोही पातक के मारे । हिरदे अपना जन्म बिगारे॥

॥ दोहा ॥

जनमैं नकली जन्म से, जुगल बाप के पूत ।
माता की कीमत वही, सज्जन से नहिँ सूत ॥

॥ चौपाई ॥

धोबी कपड़े का मल धोवे । नकल नीच सज्जन मलखोवे॥
ऐसे धोबी पास बसावे । अधरम पाप धोवाया चावे॥
खोटे करम करे कुटिलाई । मुख देखन के जोग न भाई॥
अकल अनीत रीति नहिं जाना । वे भरमैं चौरासी खाना॥
गुरु निंदा संतन की करई । नहिँ अज्ञान अधम निस्तरई॥
सुनु हिरदे यह काग सुभावे । भिस्टा[3] की बैठक वे चावे॥

(१) वर्णसंकर=दोग़ला । (२) सलाह । (३) बिष्ठा, ग़लीज़ ।

मिसरी मेवा कधी न खावे । हरदम हिरस वही चितचावे॥
करम जोग करनी की खूबी । उनकी नाव बीच में डूबी॥

॥ दोहा ॥

संतन की निंदा करे, नानक कहत पुकार ।
संत को निंदक नानका, बहुरि बहुरि अवतार ॥

॥ चौपाई ॥

यह नानक मुख गाये साखी । ऐसे सबही संतन भाखी॥
संत द्रोह सुख कधी न पावे। नहिँ मुख अपने कछु फुरमावे ॥
अपने कर्म आप सिर बाँधे । नकलीबुधिअपनीनहिँ छाँड़े॥
कूकरमी नर यही कहावे । संतन की निंदा जेहि भावे॥
गुरुसे कपट साध से चोरी । कीहोयनिरधन कीहोयकोढ़ी॥
ऐसे अगली साख पुकारै । जिनको नीक लगै सोइ धारै॥
संत अभाव करे जो कोई । जिनकी करम रेख जस जोई॥
नारदने गुरु धीमर[१] कीन्हा । कर अभाव गुरु नरकहिँ लीन्हा॥

---

(१) कथा है कि भगवान ने नारद से कहा कि गुरू धारन करो बिना इसके काम न सरेगा। नारद ने पूछा किसको गुरू बनाऊँ । जवाब मिला कि जो पहिले रास्ते में भेँटै । नारद वहाँ से चले तो एक मल्लाह मिला और उसी को गुरू बनाना पड़ा। जब भगवान के पास लौट कर आये भगवान ने पूछा कि कहो गुरू मिला। नारद ने ग्लानि से जवाब दिया कि हाँ एक मल्लाह जो पहिले मिला उसी को आप की शिक्षा अनुसार गुरू बना लिया। भगवान बोले तुमने अपने गुरू की निरादर से चर्चा की इससे चौरासी के भागी हुए। यह सुनकर नारद घबराये और प्रार्थना की कि महाराज किस रीति से चौरासी से बचूँ। भगवान ने उत्तर दिया कि जाकर अपने गुरू से दीनता करो और उनकी शरन पड़ो। नारद ने ऐसाही किया जिस पर उनके गुरू मल्लाह ने उनको यह जुगत बताई कि एक पत्र पर हरि से चौरासी लिखवा कर उसी पर खूब लोटो तो चौरासी कट जायगी। इस प्रकार करने से नारद चौरासी से बचे।

फिरउनसेउन नरक छुड़ाया। फिरउनकीसरनागतिआया।
कागज पर लिख दी चौरासी। लोटत छूटि गई जम फाँसी॥
योँ पुरान कहि कर गोहरावे। गुरु निंदक सुख कधीनपावे॥
अपनी नीच नकल दरसावे। हम चतुराई ऐसी चावे॥

॥ दोहा ॥

नीच निचाई ना तजे, औगुन करे गुलाम।
काम पड़े पर फिरि खुले, खोटे खोटे दाम॥

॥ चौपाई ॥

खोटे में खोटा मिलि जावे। खरे खरे की राह चिन्हावे॥
अपनी खोट मोट करि जानें। खरे खराई नहिँ पहिचाने॥
खोटे में खोटा है राजी। यहि बिधि बूड़े मूरख पाजी॥
उनको अकल कौन अर्थावे। ये गोते अपने से खावें॥
उनको बल्ली नाव न बेड़ा। उनका होय न कधी निबेड़ा॥
सज्जन की संगति सुख पावे। दुरजन में दूना दुख आवे॥
अपनी अपनी रीति मिलापा। जैसे को तैसा मिलि थापा॥
अपनी अपनी चाल चिन्हाई। जैसी गति जैसे ने पाई॥

॥ दोहा ॥

जैसे को तैसा मिले, जैसी कहे बनाय।
वह उनकी बिधि योँ मिले, एक ठिकाने जाय॥

॥ चौपाई ॥

वे अपनी करनी फल पावें। बोवें लुनें[1] वही वो खावें॥
असल जीव की करनी न्यारी। वे बोलैंगे बात बिचारी॥
असली कुल अपने पै जावे। नकली कुल को दाग लगावे॥
बहुरुपिया कइ रूप बनावे। भाँड़ बने पै नकल दिखावे॥

---

(१) काटें।

असल जीव से नकल न होई। नकली नकल बनावे सोई॥
नकली असली का यह लेखा। पुरब[1] कर्म जिनकी जेहि रेखा॥
जो निज निज जिनकी करतूती। बुधि अनुसार संगम जबूती॥
जल में कँवल जौंक इकसंगा। उपजे गुन अप अपने अंगा॥

॥ दोहा ॥

जोंक रुधिर को पियत है, जो कोइ जल में जाय।
कँवल रवी[2] देखत खिले, ऐसे अंग सुभाय॥

॥ चौपाई ॥

कँवल जौंक उपजे इक ठाईं। न्यारे न्यारे गुन बिलगाईं॥
अब हिरदे सुनु और सुनाऊँ। साध असाध उभै[3] गति गाऊँ॥

साध के लच्छन

साध वोही जो सब कछु साधे। नहिँ अनुमान बिरत अनुरागे॥
संजम बिना साध नहिँ होई। बिन साधे साधू नहिँ सोई॥
स्वाल करे नहिँ मुख से माँगे। बैठे रहे नाहिँ इक जागे[4]॥
गदला पानी बंधन सोई। बहता सदा निर्मला होई॥
जगकी आस कबहुँ नहिँ राखे। सतगुरु बानी को नित भाखे॥
खाय पिये पल्ले नहिँ बाँधे। पैसा न पोट उठावे काँधे॥

॥ दोहा ॥

खाय पिये उतना रखे, बाकी रखे न पास।
और आस ब्यापे नहीं, सतगुरु का बिस्वास॥

॥ छन्द ॥

हिरदे गरीबी दीनता, दृढ़ साध को निस्चै चही।
खोटी खरी कोइ कहन कहे, जिनकी नहीं मन में लही॥
अपनी रहनि रस रीति को, आठो पहर जाँचे रही।
सतगुरु बचन मुख बाक बानी, जानि सोइ समझे सही॥

---

(१) अगले। (२) सूरज। (३) दोनों की। (४) जगह।

सबही सनातन संत ने, गुरु बैन[1] की आँखी कही।
हिये में समझ धरि कर करे, सोइ साध गुरु सूरत लही॥
निसदिन चरन में लौ लगे, पल एक नहिं बाहर गई।
हिरदे गुरू के ध्यान बिनु, छिन एक नहिं न्यारी रही॥

॥ सोरठा ॥

साधन की यहि रीति, प्रीति परस परखें वही।
गुरु चरनन जिन चीत, रमक[2] रीति जाने जोई॥

॥ चौपाई ॥

हिरदे सज्जन साधू सोई। यहि बिधि परख चले जो कोई॥
हे हिरदे यह साध सुभाऊ। निस दिन जिनके चरन उमाऊ[3]॥
यहि बिधि साध रहे परबीना। निसदिन पकरि प्रेम रस पीना॥
उनका संग करे जो कोई। जीवन मुक्त जासु की होई॥

असाध के लच्छन

और असाधू की सुनु रीती। आसा लोभ परख की प्रीती॥
जो कोइ देने को ले आवे। प्रीति परस्पर बहुत जनावे॥
ऐसी चित्त बिर्ति अनुसारा। कहे मुख से हम जग से न्यारा॥
मन का लोभ भोग भरमावे। ममता माया नित्त नचावे॥

॥ दोहा ॥

मन की ममता ना घटी, लटी[4] न छूटे चाल।
हाल हाथ से दे कोई, ले झोली में डाल॥

॥ चौपाई ॥

खेती बैल महल सब राखे। हम हैं साध कहे अस भाखे॥
बट्टा ब्याज करे दिन राती। खौ[5] खाँड़े[6] गाड़े बहु भाँती॥

---

(१) बचन। (२) कुछ। (३) उमंग। (४) नीच। (५) भुँइघर, तहख़ाना। (६) खोद कर बनाना।

अपनी मरन जिवन सुधि नाहीं। साध हुए केहि कारन भाई॥
भेख किया पर रेख[1] न जानी। करम कांड करनी पहिचानी॥
योँ यहि भाँति रहनि दिन राती। साधू नाम करे उतपाती॥
जो कोई दरसन को जावे। हाथ मिठाई देखि सिरावे[2]॥
जो कोइ राजा बाबू आवे। ले परसाद सामने जावे॥
ऐसे मन की बिर्ति बनाई। देखी बात परखि सब भाई॥

॥ दोहा ॥

यह रुजगारी साध की, बरनि बताई बात।
हाथ कछू नहिँ अंत को, पंथ मिला नहिँ साथ॥

पंथ

॥ चौपाई ॥

अब पंथा पंथी दरसाऊँ। पूछे पंथ न जाने गाऊँ॥
पंथ नाम मारग को होई। सो पंथी बूझा नहिँ कोई॥
गाय बजाय खंजरी पीटी। गावत मुख में पड़ि गई सीठी॥
जो संतन का सब्द बिचारा। सूझे पंथ वार अरु पारा॥
सब्द संधि कछु और बतावे। यह नहिँ समझ सोध[3] मन लावे॥
गुरु बानी संतन की बूझे। निर्मल नैन आँखि से सूझे॥
गुरु चेला मिलि पंथ चलावा। संत पंथ की राह न पावा॥
यहि लेखा देखा उन माहीं। पूजा को उनका मन चाही॥

॥ चौपाई ॥

पूजा के कारन करे, सब बिधि भाँति उपाधि।
आदि अपन जाने नहीं, कहने को है साध॥

साध शिरोमनि या संत

अब सुनु कहूँ सिरोमन साधू। उनकी मति गति कहनि अगाधू॥
उनकी सुरति कँवल पद माहीं। पदम पार बेनी नित न्हाई॥

---

(१) होनी, आक़िबत। (२) सराहै। (३) बिचार।

मंजनकरिकरिकरतेध्याना। पदमसुरतिसतगुरुअस्थाना॥
पदम कँवल पर आसन लावे। जहँ कोइ साध सूरमा जावे॥
सुन्न और महा सुन्न के पारी। जहँ वह जाय लगावे तारी॥
सत्तपुरुष के दरसन पावे। तीन लोक के पार कहावे॥
यह सब संत महात्मा गाये। साखी सब्द माहिँ दरसाये॥
जो सब्दन का करे बिचारा। जब जिव का पावे निरबारा॥

॥ दोहा ॥

सब्द साखि में संधि है, अंध लखे नहिँ कोय।
यह माया फरफंद से, बंध न टूटा सोय॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

साधसाध का एक बिचारा। तुम कहि भाखा चारि प्रकारा॥
साधसाध सब एक बतावा। तुम बरनन कीन्हा कइ भावा॥

साध गति

(तुलसीदास बाच)

साधन की है रीति अनेका। साधू मति है अगम अलेखा॥
यह सब भेख नाम से पूजे। साधू की गति बिरले सूझे॥
षटदर्सन को बेद बखानो। साधरीति फिर भिन[1] करि जानो॥
पंथ रीति भेखन के माहीं। यों सब संत कहैं गोहराई॥
जो प्रयाग बेनी[2] पद पावे। सुनु हिरदे सो साध कहावे॥
सतगुरु के पूरन पद बासी। जहँ नहिँ जाय सके अबिनासी॥

॥ दोहा ॥

जो संतन सतगुरु कहा, पूरन पद के माहिँ।
चरन कँवल बेनी बहे, नित जहँ जावे न्हाय॥

॥ चौपाई ॥

यह मारग साधू मत चीन्हा। सो समझे सज्जन परबीना॥

---

(१) जुदा। (२) सुन्न।

(हिरदे बाच)

साधू को करनी दरसाई । रहनी रमज[1] सभी समझाई॥
गृस्थी का कहो कौन निबेड़ा।सतसँगकियानसतगुरु हेरा॥
सिर पर मोट[2] अपरबल भारी। जुगन जुगन उतरी न उतारी॥
आठ पहर वाही में लागे। कर्म भोग पूरबले जागे॥
वह कहो कैसा करे बिचारा। आठ पहर आफत में हारा॥
वोहि कभी कहुँ होय निबेड़ा। नर तन नाहिं मिले जग फेरा॥
जीवन तुच्छ जक्त के माहीं। नर देही पावन को नाहीं॥

॥ दोहा ॥

नर देही दुर्लभ कहैं, मिलै न बारम्बार ।
धार बड़ी भवसिंधु की, क्योंकर उतरे पार ॥

गृहस्थी का कैसे निबेड़ा होय

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

यह भवसागर अगम अथाहा। यामें लगे न बल्ली थाहा॥
सतगरु संत भाग से पावे। की उनकी वे दया बसावैं॥
जो कोइ और उपाव लगावे। भवसागर गम[3] कभी न पावे॥
काल दिवाल बाट पर कीन्हा। घाटा घेर आपने लीन्हा॥
कूँची[4] हाथ संत के घाटा। ताला खुले मिले जब बाटा॥
और तने[5] कोइ राह न पाई। करि करतब सब दैं हि गँवाई॥
सेवा साध करै दिन राती। तो सुभ के फल आवे हाथी॥
साँचे भाव प्रेम से पूरी। तो कछु पाप होयँगे दूरी॥
कोई आतमा भूखो आवे। वाको देखि दया दिल लावे॥
वो अहार की कोमत नाहीं। मानो सब बैराट जँवाई॥

(१) भेद। (२) गठरी। (३) थाह। (४) कुंजी। (५) तरह।

(पिँडुका पिँडुकी की कथा)

ब्यासभागवतमाहिँ बखाना । पिँडुकापिँडुकीकादृस्टाना॥
जेहि बृच्छ पर करैं बसेरा । नीचे कीन्ह मुसाफिर डेरा॥
त्रिया पुरुष दोउ बात बिचारे । भूखा रहा मुसाफिर द्वारे॥
ठंढ की सीत लगी जब भाई । लकड़ी बीनिमुसाफिरलाई॥
बन में आग कहाँ से आवे । देह जुड़ानी सीत सतावे॥
तबपिँडुकीमनकियाबिचारा । गृहस्थीपरधिरकारीडारा॥
भूखा रहा मुसाफिर द्वारे । घर मसान सम जानि निहारे॥
जब पिँडुकी उड़िअगिनी लाई । ऊपर से उन दीन्हगिराई॥
जबहिँ मुसाफिर आग जराई । उठ करि बैठ तापने भाई॥
पिँडुकी पिँडुका बहु दुख भीँजे । भूखा रहा कौन बिधिकीजे॥
पिँडुकीगिरी आगिकेमाहीँ । फिर पीछे पिँडुका गिर भाई॥
दोऊ जरे आग के माहीँ । भूँजि मुसाफिर भूख जुड़ाई॥
भाखी ब्यास कथा के माहीँ । भूखा न रहे द्वार पर जाई॥
जेहि घर द्वारे भूख रहाना । वह घर कहे मसान समाना॥
बड़ा दोष पातक वहि लागे । भूखा रहे द्वार के आगे॥

॥ दोहा ॥

जो द्वारे भूखा रहे, गृहस्थी में होइ पाप ।
आप अपनपौ परखि के, भूखे को संताप ॥

॥ चौपाई ॥

हे हिरदे यह गृहस्थ बिचारा। यहि बिधि सेकरि लेइगुजारा॥
गृहस्थी माहिँ बने कछु नाहीँ । भूखा देखे देइ जुड़ाई॥
जाति पाँति नहिँ देखे भाई । भूखा कोइ होय देइ खिलाई॥
जो अभ्यागत[1] भूखा आवे । साध जानि के सीस नवावे॥

---

(१) जो इसके घर आवे, मुसाफ़िर ।

जो परसाद होय घर माहीं । उनके सन्मुख आनि चढ़ाई॥
वह भोजन को भोग लगावे । उनकी दया पाप नसि जावे॥
यही भाँति जग जीव गुजारा।और भाँति नहिँ पावे पारा॥
जो कोइ समझि लखे यहबानी। गृहस्थी धर्म करे परमानी॥

॥ दोहा ॥

गृहस्थी होय हिरदे दया, भूखे कछू खिलाइ ।
बाक सनातन यौँ कहे, सभी सभी गोहराइ ॥

॥ छंद ॥

गृहस्थी धरम यह भाँति, कोइ भूखा दुवार रहे नहीं ।
सरधा बने कछु होय जो जस, आनि के लावे सही ॥
हिरदे दया दिल धीर करि, यहि भाव की भिच्छा कही ।
आतम दया मन माहिँ बरते, तत्त की बातेँ यही ॥
जिव आपु सम सब का लखे, दुख भूख की भारी भई ।
ऐसे बिचारे बात जब, वोहि पुन्न की कहा का कही ॥
जग एक इक जिव भूखा पोखे[1], कोटि फल उनको भई ।
ऐसे रहै जग माहिँ गिरही, वहि जीव को जीवन सही ॥

॥ सोरठा ॥

जीवन जग मेँ सार, जो गिरही होइ अस रहे ।
पावे पुन्न अपार, स्वर्ग लोक बासा करे ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

स्वर्ग पुन्न से पावे कोई । ऐसी तुमने बरनि बिलोई[2]॥
पुन्न जोग से स्वर्ग सिधावे। पुन्न भोगि मृत लोकहि आवे॥
स्वर्ग नर्क नहिँ हुआ निबेड़ा । फिर कीन्हा चौरासी फेरा ॥
आवागवन छुटा नहिँस्वामी। जन्म धरे जिव अंतरजामी॥

(१) पालन करै । (२) निर्नय किया ।

जग निस्तार पार नहिँ पाये । यह तो आवागवन समाये॥
वह उपदेस दिया नहिँ कोई । जासे आवागवन न होई॥
सिर भरि बूड़ रहा जग सारा। माया मोह बँधा परिवारा॥
जड़ता ने सब बुद्धि नसाई । कैसे भव जिव उतरि जुड़ाई॥

॥ दोहा ॥

स्वर्ग भोग पुन[1] के उदै, भोग करे भुगताय ।
पुन्न भोग जब करि चुके, फिर चौरासी जाय ॥

सतसंग की महिमा

(तुलसीदास वाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे जग का यहि लेखा । बिन सतसंग न होय बिबेका॥
बिना बिबेक एक नहिँ आवे ।एक बिना नहिँ दुरमति जावे॥
दुरमति से दुनिया भई भाई । दुनिया दुरमति कीन्ह बनाई॥
यह ऐसे बूड़ा संसारा । संसय आस बँधा सिर भारा॥
बिन सतसंग बिबेक न आवे । बिना बिबेक ज्ञान कहा पावे॥
बिना ज्ञान बुधि सुधि नहिँ होई। बिना बुद्धि बूझै नहिँ कोई॥
बिन बूझे नहिँ आँखी सूझा । योँ जग अंधा भया अबूझा॥
बिन सतसंग बूझि नहिँ पावे । बिना बूझि नहिँ तिमिर नसावे॥
संत दया अंजन अर्थावैँ । जब यह तिमिर आँख से जावे ॥
सतसँग सब संतन गुहराया । तन मन दीन हुए जिन पाया॥

॥ दोहा ॥

केई[2] मूरख भटके फिरैँ, लगा न उनके हाथ ।
साथ केई दिन से लगे, जगे न बूझी बात ॥

---

(१) पुन्न । (२) कोई ।

॥ चौपाई ॥

सतसँग केई दिन करै जो कोई। बिना दया नहिं वासिल[1] होई॥
बिन वासिल कछु पड़े न हाथा। सतसंगति नहिं पावे बिधाता॥
बिन सतसंगति कधी न पावे। यहि बिधि संत सभी गुहरावे॥
सतसँगकी महिमा कहँ भारी। सो कोइ सज्जन साध बिचारी॥
करे घड़ी इक कोइ सतसंगा। सो वह करे जक्त भव भंगा॥
जिन अपने मैं लीन्ह बसाई। निकरे तिमिर आँखि खुलि जाई॥
जो को इस तसँग प्रानी पावे। जिनका आवागवन नसावे॥
हिरदे गृही[2] संगत कहा जाने। जग फंदे मैं जीव भुलाने॥

॥ दोहा ॥

जीव दया पाले कोई, इनको इतना बहुत।
मौत खड़ी सिर ऊपरे, मूरख बाँधे थोथ[3]॥

॥ चौपाई ॥

योँ हिरदे गृही का परभावा। भूखे दया भाव दरसावा॥
और तने[4] नहिं होय गुजारा। जिव आतम सब एक पसारा॥
दयाहीन नर दुष्ट कहावे। नर तन नाहक जन्म गँवावे॥
सतसँग बिना भरम नहिं भागे। पुरबले अंकुर बिन नहिं जागे॥
सतसँग सतसँग सब गुहरावे। सतसँग का कोई अंत न पावे
बिस्वामित्र बसिस्ठ प्रसंगा। तप सतसंग कहे दोउ अंगा[5]॥

---

(१) मेला। (२) गृहस्थी। (३) मुँह। (४) तरह। (५) कथा है एक बार बशिष्ठ जी बिश्वामित्र जी के घर गये तो बिश्वामित्र ने उनको अपने साठ हज़ार बरस की तपस्या का आधा फल भेँट किया। कुछ दिन पीछे बिश्वामित्रजी बशिष्ठ जी के आश्रम पर गये तो बशिष्ठ जी ने दो घड़ी सतसँग का फल उनको भेँट किया। बिश्वामित्र जी ने जिन को अपने तपोबल का बड़ा अहंकार था इस भेँट को अपनी भेँट के मुकाबिले मेँ बड़ा तुच्छ समझा और दोनोँ ऋषीश्वरोँ मेँ बहस होनेलगी कि साठ हज़ार बरस की तपस्या बढ़ कर है या दो घड़ी का सतसंग। अंत को बिश्वामित्र न्याव चुकवाने को शेष

साठ हजार बरस तप कीन्हा। उभै[1] घड़ी सतसँग तिन दीन्हा
दोइ घड़ी सतसंगति आगे। तुली तपस्या तुले न लागे॥

॥ दोहा ॥

कई बरस तप करि मरे, बीते साठ हजार।
दोइ घड़ी सतसंग से, तुला सेस का भार॥

॥ दोहा ॥

बिस्वामित्र बसिस्ठ को, भई परस्पर बाद।
उन तप को कीन्हा बड़ा, उन सतसंग अगाध॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

यह स्वामी सतसँग की महिमा। जो कहुँ मिले करे इक लहमा
भाग बड़े सज्जन के सोई। वे सतसँग में रह समोई॥
अब वह कथा कहो बिस्तारी। जुगन जुगन की पूछूँ सारी॥
सतजुग सब से बड़ा बतावैं। कलिजुग छोट सबै मिलि गावैं
कहो स्वामी मुख बैन बिलासा। याका भाखो भेद खुलासा॥

(तुलसीदास बाच)

सुनु हिरदे यामें दोइ बाता। याकी बूझु बचन बिख्याता॥
जग रचना को सतजुग भारी। जिव निस्तार कलू अधिकारी
भिन भिन याका भेद सुनाऊँ। तोको बरनि भाखि समझाऊँ॥

नाग के पास गये। शेष नाग ने कहा कि मेरे मस्तक पर सारी पृथ्वी का भार है उसको ज़रा सम्हाल लो तो निर्नय करूँ। बिश्वामित्र ने अपने साठ हज़ार बरस का तपोबल लगाया पर पृथ्वी तनिक न हटी, तब शेष नाग ने पूछा कि कुछ और पूंजी भी है। बिश्वामित्र ने बड़ी हेठाई की निगाह से कहा कि हाँ वही दो घड़ी के सतसंग का फल जो बशिष्ठ जी ने दिया है। शेष नाग बोले कि और उस को भी लगा कर आज़मा देखो। ज्यों ही ऋषिजी ने उस को लगाया पृथ्वी दूर हट गई—तब वह बोले कि अब निर्नय करिये, शेष नाग ने जवाब दिया कि अब भी निर्नय करना बाक़ी है जब तुम ने देख लिया कि वह अपार भार जिसे तुम्हारा साठ हज़ार बरस का तपोबल रंचक न हटा सका वह दो घड़ी के सतसंग के महात्म से दूर हट गया। बिश्वामित्र लज्जित हो कर लौट आये। (१) दो।

॥ सोरठा ॥

बिध बिधि भाखूँ बैन, कहन कोई राखूँ नहीं ।
सुनने मैं सुख चैन, नैन निरख दीसे वोही ॥

सतजुग का प्रभाव

॥ चौपाई ॥

अब सुनु याको कान लगाई । प्रथम कहूँ सतजुग गति गाई॥
जब लछमी प्रभुता बिस्तारी । माया सुख कीन्हा अधिकारी॥
उमर बहुत कलपन की कीन्हा । जोधा जोर अधिक लखि लीन्हा॥
कंचन भूमि पिरथिवी कीन्ही । मट्टी मीठ लगे जस चीनी॥
एक कमावे घर दस खावे । खेती मैं सैागुन उपजावे॥
द्रब्य अपार अपूरब भारी । जग माया कीन्हा बिस्तारी॥
हीरा रतन जवाहिर सोई । कलसे रतन महल के जोई॥
इन बातन सतजुग है भारी । माया छलन किया बिस्तारी॥
इन आसा मैं जीव जुड़ावे । बंधन ले आसा फिरि आवे॥
ऐसे जक्त बाँधि बिस्तारा । जीव सुखी माया अधिकारा॥

॥ दोहा ॥

इन बातन सतजुग बड़ा, पिया घर जीव भुलाय ।
यह सुख माया मैं बँधे, उलटि काहे को जाय ॥

॥ चौपाई ॥

उलटि जीव भव सागर आवे । बंधन से मालिक बिसरावे॥
सतजुग ध्यान हाड़ मैं प्राना । खान पिवन बिन कस्ट बखाना
कास्ठा फल तप राज कराई । दोनौं जक्त भोग के माहीं॥
इन बातन सतजुग बढ़ गाया । पिया मिलन नहिं जीव बताया॥
यासे सतजुग छोट बतावे । पिया मिलन की राह न पावे॥

कलिजुग का प्रभाव

कलजुग संत बड़ा ठहरावैं । संत उतरि पिय घर से आवैं॥
नाम डोरि दे सुरति लखावैं । सुरति डोरि जिव पिय घर जावे ॥
सब संतन कलु बड़ा बतावा । यामैं जीव अपनपौ पावा॥

॥ दोहा ॥

बड़ा कलूजुग सब कहैं, संत बचन के माहिं ।
रामायन के बाक मैं, तुलसी कही बनाय ॥

॥ चौपाई ॥

कलु कर एक पुन्न परतापू । मानस पुन्न होय नहिं पापू॥

॥ दोहा ॥

कलजुग सम नहिं आन जुग, जो नर करे बिस्वास ।
नाम डोरि गहि भव तरै, जा मन तुलसीदास ॥
कलजुग सम नहिं आन जुग, संत धरैं अवतार ।
जीव सरन होइ संत के, भवजल उतरै पार ॥

॥ चौपाई ॥

तुलसी कही कलू की साखी । यहि बिधि यौं सब संतन भाखी॥
द्वापर त्रेता का यह लेखा । ये जुग मैं औतार बिसेखा॥
मारि निसाचर जग के माहीं । यह लीला उन ने दरसाई॥
जीवजेहि घरसे चलि आया । वहि घर राह नाहिं दरसाया॥
मार कूट संग्राम सुनाया । आतम हत जिव मारन गाया॥
संत दयाल दया अर्थावैं । जीव हतन की राह छुड़ावैं॥
अज्ञानी को ज्ञान बतावैं । दे उपदेस दया उपजावैं॥
अंकूरी जिव मैं धरि लेई । हिरदे सुद्ध हरख हिय जेई॥

॥ दोहा ॥

संत चरन बिस्वास से, कलजुग मेँ निरधार ।
सतजुग तो बंधन करे, कहँ सब संत पुकार ॥

॥ छंद ॥

हिरदे कलूजुग जोग है, सब संत ने ऐसी कही ।
लेवेँ संत औतार जेहि जुग, जीव को सुधि बुधि दई॥
हिये के तिमिर खुलि ज्ञान उपजे, संत की सरना लई।
दृढ़ कै दिये उपदेस मन को, भोग बिष त्यागे रही॥
इतनो कलू परताप जग में, सब्द को समझै सही ।
सतजुग सुनो सब रीति उनकी, उलटि सुधि घर ना लई॥
लीला बिलोके कृत्रम बस, जिव अंध का अंधै रही।
सतजुग जगत में नीक कहेँ, हिरदे सुनो बातेँ यही॥

॥ दोहा ॥

सतजुग की बरनन[1] करेँ, कलजुग कहत मलीन ।
सब दुनिया ऐसी कहे, संत बचन मुख चीन्ह ॥

॥ चौपाई ॥

संतन ने कलु नीक बताया । सतजुग का इतबार न आया॥
त्रेता द्वापर कृत्रम देखा । मार कूट रस रीति बिसेखा॥
यामेँ नाहिँ जीव को काजा । ये जुग म भूमी भये राजा॥
राजकाज जग रीति अनीती। जो जिन करी भई जस रीती॥
यहि बरनन कछु हाथ न आवे। को कहि कहि सिर मूड़ पचावे॥
यह हिरदे बकबायद[2] लेखा । आवत कछू हाथ नहिँ देखा॥

सतसँग की महिमा

जो सतसंग मिले कोइ बारा। घड़ी एक दोइ होइ कृतारा[3]॥
बड़े भाग सतसंगति होई । जब अनुराग जीव मेँ जोई॥

(१) बड़ाई (२) बकवाद । (३) कृतार्थ ।

॥ दोहा ॥

सतसंगति यह जीव को, लगे जो अंदर जाय ।
माहिँ[1] भाल खटकत रहे, काल बली को दाँव ॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी जो सतसँग पावे । उनको भर्म कहो कस आवे॥
यह मोरे मन भया बिचारा । सो स्वामी कहिये निर्बारा॥

(तुलसीदास वाच)

हिरदे उन सतसंग न कीना । अंदर चुभक[2] नाहिँ रसपीना॥
ज्योँ पानी पाहन पर डारा । ऊपर गील सूख वोहि बारा॥
अंदर हुआ गील नहिँ भाई । कहो सूखे नहिँ कहा कराई[3]॥
ज्योँ मिसरी पानी मेँ डाली । मिसरी घुल पानी रस चाली॥
पानी मिसरी इक रँग राता । जल मीठा मिसरी के साथा॥
घुली मिठाई जल के माहीँ । सो सरबत मीठा भया भाई॥

॥ दोहा ॥

जल मिसरी कोइ ना कहे, सर्बत नाम कहाय ।
योँ घुल के सतसँग करे, काहे भरम समाय ॥

॥ चौपाई ॥

उन हिरदे सतसंग न कीन्हा । जिनको आया भर्म यकीना॥
बिन माँगे से दूध दिवावैँ । माँगे से पानी नहिँ पावे॥
जिनपर उनकी मेहर कहावे । पानी से वे दूध दिवावैँ ॥
जो उनकी मन मौज निहारे । दिल में होय सोई धरि धारे॥
यह सतसंग गूढ़ गति गाई । यह कोइ रतन पारखी पाई॥
जैसे भाँग पिये कोइ भाई । नसाबाज जो जाय पचाई॥
नया कोई पीवन को जावे । उसके तन को तुरत घुमावे॥
ऐसे सतसँग का रस भारी । पीवत आवे तुरत खुमारी॥

(१) अंतर । (२) डुबकी लगा कर । (३) कहो तुरत सूख न जाय तो क्या करे ।

॥ दोहा ॥

सूरा रन में सीस को, धरे हथेली माहिँ ।
सरा[1] सती जरि जाय जो, पिल पैठे घर माहिँ ॥

॥ चौपाई ॥

छाती बिन सूरा ज्योँ पेले । सूरा बिन सिर धड़ से खेले॥
ऐसा जो मारग पग धारे । धड़ ऊपर से सीस उतारे ॥
दूध छठी का निकसे भाई । सिर बेचे मारग जिन पाई॥
यह नहिँ दूध भात की बाता । बैठे खान चलावे हाथा ॥
जो यह राह सहज की होती। तो ब्राह्मन क्योँ बाँचत पोथी॥
तप अरु जोग कठिन पहिचानो। इनहिँ राह अटपट करि जानो॥
ऐसा मारग बिकट अतोला। पचि पचि मरे किनहु नहिँ तोला॥
संत राह रस्ते की बातेँ । सतगुरु बिना कोई नहिँ पाते॥

॥ दोहा ॥

राह रकाने संत के, मारग को को जाय ।
बड़े बड़े महात्मा थके, कहे को अगम अथाह ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी मोहिँ बरनि बतावो। संतन की गति गाय सुनावो॥
कहो मारग केहि देस रहाई । कहँ होइ राह देस को जाई॥
कैसा देस बरनि मोहिँ कीजे । हिरदे दया हिये में लीजे॥

संत देश

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

जहँ नाहिँ पृथ्वी पवन अकासा। पाँच तत्त मारग नाहिँ स्वासा॥
चाँद सुरज तारागन नाहीँ । जोगी ब्रह्मा बिस्नु न जाईं॥

(१) अग्नि ।

दस अवतार राह नहिँ जानी। निरंकार नाहिँ निर्बानी॥
जोति सरूप न पहुँचे भाई। नहिँ ओंकार अकार न जाई॥
पारब्रह्म जो कहिये ऐसा। जाके आगे सतगुरु देसा॥
जाके परे संत अस्थाना। उनका देस उनहिँ पहिचाना॥
हे हिरदे यह अकथ बिलासा। उनकी गति उनही परकासा॥
यहि रे अपूरब को को जाने। बेद नेत कहि संत बखाने॥
जहँ नहिँ साखी सब्द न बानी। यह अदेख गति किनहुँ न जानी॥
वे करि दया देइँ दरसाई। उनकी मेहर बिना नहिँ पाई॥
देखन मेँ नहिँ नजरे आवे। हिये दृग नैन खुले जब पावे॥
सो अंजन है उनके पासा। दया बिना और झूँठी आसा॥
वे पल माहिँ दया दरसावैँ। कृपावंत संत को पावे॥
केइ मूरख पचि मुए अनेका। उनकी मेहर मिले नहिँ ठेका॥

॥ दोहा ॥

हे हिरदे यहि अकथ गति, कही सब संत बिचार।
संत सिरोमनि रीति को, पावे को निरधार॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे ने बचन सुनाया। यहतोसमझमाहिँमोरि आया
कपट भेष जो साध कहावे। भेष बनाय ठगी करि लावे॥
देखत साध सरोतर[1] भाई। अंतर कपट छलन को चाही॥

कपट भेष--बाघ का दृष्टांत

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

तब तुलसी बोले सुनु भाई। याका एक प्रसंग सुनाई॥
इक बन बाघ रहे बन खंडी। बन मेँ मठ देवी जहँ चंडी॥

(१) हर प्रकार से पूरा।

वोहि अस्थान ठिकाने भाई। बाघ वहीं बिसराम कराई॥
धुंधूकार बड़ा बन भारी। एक दिवस गये बाघ सिकारी॥
सब दिन फिरे सिकार न पाई। साँझ पड़े अस्थान सिधाई॥

॥ दोहा ॥

खुध्या[1] में ब्याकुल हुए, लगी सिकार न हाथ।
राति बिताई बिपति से, फजिर किया उतपात॥

॥ चौपाई ॥

बाघ साध का भेष सँवारे। फूँकि पाँव भूमि पर डारे॥
बिन फूँके नहिं पाँव उठावे। फूँकि भूमि जब पाँव चलावे॥
येही भाँति मारग में आवे। मानो सुद्ध साध दरसावे॥
बंदर एक बृच्छ पर बैठा। देखी अचरज बात अनूठा॥
बाघ फूँक धरि पाँव चलाई। यह अचरज देखा बढ़ भाई॥
बंदर के मन भया अचंभा। पिरथी फूँकि धरे पग लंबा॥
बृच्छ नजीक पास जब आया। जब धीमी सी चाल उठाया॥
बंदर ने पूछी हे भाई। तुम हो कौन कहाँ से आई॥

॥ दोहा ॥

अरे बनचर हम साध हैं, दया भाव के माहिं।
फूँकि पाँव हम यों धरें, जिन चींटी मरि जाय॥

॥ चौपाई ॥

बंदर के मन में उठि आई। याके चरन धरूँ सिर जाई॥
ऊँचे उतरि डार पर नीचे। जा करि पड़ो पाँव के बीचे॥
तब बंदर ने बचन उचारा। स्वामी धूप बड़ी यहि बारा॥
करोबृच्छबिसरामनिवासा। मैं सेवक तुम्हरो निज दासा॥

---

(१) भूख।

हौले पाँव उठाये आये । बृच्छ छाँह में आसन लाये॥
बंदर उतरि पाँव सिर दीन्हा।तबही पकरि डाढ़ में लीन्हा॥
हे भाई तू सेवक प्यारा । साधू को दीन्ही ज्योनारा॥
आज अहार बनो भल भाई । तुम कीन्ही मोरी सेवकाई॥

॥ दोहा ॥

बंदर को हाँसी लगी, सुने कपट के बैन ।
बाघ मनै बिसमय भई, क्यों हाँसे सुख चैन ॥

॥ चौपाई ॥

कहे बंदर हाँसी योँ आई । एक अचंभा देखा भाई॥
जब बन बाघ पूछिया भाई । तो को हाँसी क्योँ करिआई॥
तब बंदर बोला अस भाऊ । ढील करो मैं बचन सुनाऊँ॥
जब बन बाघ ढील मुख कीन्हा । बंदर छलाँग डारि[1] को लीन्हा ॥
जब बिस्वास बाघ बुलवावे । नहिँ बंदर वा को पतियावे॥
ऐसे कपट साध जग जानो । गुन मन ज्ञान कहा पहिचानो॥
बंदर कहे सुनु बाघ प्रसंगा[2]।अब मैं कबहुँ करूँ नहिँ संगा॥
सर्प उरगाने की जस बाता। अस मोहिँ आज कीन्ह तुम घाता॥

॥ दोहा ॥

यह मन तो बंदर कहा, बाघ कहा है ज्ञान ।
उरगाना कहेँ गरुड़ को, काल सरप पहिचान ॥
ज्ञान पकरि मुख मैं लिया, मन बंदर को जाय ।
गरुड़ काल मुख सरप को, भच्छन को रे उपाय ॥
बाघ कहे बन्दर कहो, सरप उरगाने बात ।
कहो कैसे उनकी भई, सो बन्दर कहो साख ॥

---

(१) डाल। (२) बात ।

(उरगाने और साँप की कथा)

॥ चौपाई ॥

कहे बन्दर सुनु रे बन बाघा। तैंने छल कीन्हा यहि जागा॥
साध जान तोरे ढिंग आया। तैंने मोको डाढ़ दबाया॥
जैसे उरगाने ने छल कीन्हा। उनने बचन सरप को दीन्हा॥
बचन दिये पर दगा बिचारा। जेहिबिधिकीन्हा हालहमारा
उरगाना इक जाति मुसाफिर। रहे बड़ चोर चलन मैं काफिर
डेरा कीन्ह सहर इक माहीं। खाने मैं अधि रातबिताई॥
घोड़ा एक रहे उन पासा। तसमा टूटा करे तलासा॥
वोहि दुकान बनिये से पूछा। तसमे बिन घोड़ा रहे छूछा॥

॥ दोहा ॥

बनिये से उन पूछिया, कहाँ चमार का ठाम।
तसमा टूटि बनावने, यह जल्दी का काम॥

॥ चौपाई ॥

आधि रात जब गई बिताई। पूछत फिरै चमार का ठाँई॥
ढूँढ़त गये चमार के पासा। तसमा एक बनावो खासा॥
तब चमार बोला हे भाई। रात पड़े अब नाहिँ बनिआई॥
दिया न बाती तेल उजाला। मोसे बने नाहिँ ततकाला॥
वाको टका दिये दो चारा। फजिर बने सो करो बिचारा॥
इतनी कहे मकाने आया। उस चमार ने डौल बनाया॥
काट कूट करि करी तयारी। कुंडली[1] पानी माहिँ तगारी[2]॥
वामैं धरि पतथर से दाबा। जब चमार सोया ले लाभा॥

॥ दोहा ॥

ठंढ मास के दिवस मैं, सरप कहूँ चलि आय।
कुंडली करी तगार मैं, माहीं पैठे जाय॥

---

(१) गेंडुरी बना कर। (२) बरतन जिस में चमड़ा भिगाते हैं।

॥ चौपाई ॥

ठंढ में बैठ रहा जल माहीं। तन में होस रहा नहिं भाई॥
फजिर भये उरगाना आई। राह चले जल्दी करि भाई॥
सरप कुँडलिया मारे बैठा। ठंढ माहिँ पानी में ऐंठा॥
लीन्हा तुरत चमार उठाई। भूल गया चमड़े को भाई॥
दोच दाच[1] चपटा कर दीन्हा। रापी[2] ले मुख चीरा कीन्हा॥
उरगाने लीन्हा ततकाला। उनने ले तँग में कस डाला॥
होइ सवार मारग में लागा। पाँच कोस निकले वोहि जागा॥
सीत उड़ी रबि तेज दिखाना। गरमी भई सरप अकुलाना॥
उरगाने को मालुम नाहीं। सरप कसा घोड़े के माहीं॥
मारग बाँबि सरप इक बैठा। कहि अवाज इक बचन उलेटा॥
कसा सरप घोड़े पर देखा। तोको लाज न आवे नेका॥
काला होइ कर डसता नाहीं। तैंने सरप जाति लजवाई॥
जब लगि काम पड़ा नहिँ काले। तैं का बोले बाँबी वाले॥
माल गड़ा जिस पर तैं बैठा। काम पड़ा नहिँ खाया खेटा॥
माल गड़े पर तैं खुस भाई। वह गरूर मन में भरि आई॥
मेरी दसा डसन की नाहीं। जब तूने यह नोक चलाई॥
दोनों बोल सुने उरगाने। घोड़ा छोड़ तुरत अलगाने॥
सर्प कसा घोड़े तँग माहीं। देखा जब दिल दहसत खाई॥
घोड़े कसा सर्प जोइ बोला। अब कहुँ डरे जाय मत डोला॥
खोल निकाल तंग से न्यारा। तोको नहिँ मैं डसनेहारा॥
तंग खोल करि बाहर काढ़ा। मोको लगे बदन में जाड़ा॥
जब चमार ने यहि गति कीन्हा। तैं तँग माहिँ जबर कस दीन्हा॥
अब मेरे हैं प्रान चलइया। तोको मैं इक भेद कहइया॥

---

(१) पीट कर और मसल कर। (२) चमड़ा काटने का औज़ार।

बाँबी माहिँ माल है भाई । ताता तेल देव छिड़काई॥
इतनी कहि उन प्रान गँवाया । उरगाना अपने घर आया॥
ताता तेल तुरत करवाया । उरगाना बाँबी पर आया॥
बाँबी माहिँ सर्प ने जाना । ताता तेल छिड़क ले आना॥
सर्प कहे सुनु रे उरगाना । लेन माल मारन को ठाना॥
उलटि तोहिँ मैं डस कै खाई । तौ यह माल कहाँ ले जाई॥
यासे एक बिचार बताई । तू भी रहे माल तैं पाई॥
नित इक दूध कटोरा लावो । एक मोहर मोसे ले जावो॥
तब उरगाने किरिया खाई । तुम हम बीच दगा नहिँ भाई॥
तबचलि के वह आवन लागे। सत सत बचन कहूँ तोरे आगे॥
तू मैं तीसर जाने नाहीं । तीसर मैं सब बात नसाई॥
बचन करार हुआ दोउ केरा। जब चलि आये अपने डेरा॥

॥ दोहा ॥

जो करार भयो सर्प से, उरगाने मिलि दोय ।
तीसर कोइ जाने नहीं, बचन पालिये सोय ॥

॥ चौपाई ॥

किरिया कसम भई सब भाँते । दीन इमान बचन की बातैं॥
हम तुम माहिँ बीच भगवानै ।अब दूसर कोइ बात न जानै॥
यौं कहि कर घर अपने आया । दूध कटोरा भर करि लाया॥
बाँबी केर पास धर दीना । निकरा सर्प दूध सोइ पीना॥
मोहर सरप लेकर इक डारी । लो उरगाने हाथ पसारी॥
मोहर लई घर अपने जाई । सो दइ तिरिया हाथ के माहीं॥
ऐसे कइ दिन बीति सिराने । एक दिवस पुत्र ने पहिचाने॥
तिरिया पुत्र कहे समझावो । कहो यह मोहर कहाँ से लावो॥

॥ दोहा ॥

नित की मोहर मिले कहाँ, कहो कौन से ठाँव ।
सो ठिकान मोसे कहो, पिता पुत्र परभाव ॥

॥ चौपाई ॥

ठाँवठिकान मोहिं बतलावो। नहिं फरियाद राज पर जावौं॥
यहि बिधि बात पुत्र ने कीन्हा। उरगाने मुखऔंगुरीदीन्हा॥
यह तो बात कहन मैं नाहीं। बाक कहूँ तो बचन नसाई॥
वह मूरख नहिं माने बैना। यह बरतंत कहो सुख चैना॥
मोहर कहाँ से नित उठि लावो। सो मोरे को ठौर बतावो॥
यहि चर्चा में रात बितानी। फजिर पुत्र सँग हुआ निदानी॥
दोनों मिलि बाँबी पर आये। सर्प देखि दिल में दुख पाये॥
सुनु उरगान बात तैं फोड़ी। दूसर दगा करी तैं चोरी॥

॥ दोहा ॥

सर्प कहे उरगान से, बचन बिरोधी कीन्ह ।
लड़काई बुधि पुत्र की, मारे कोइ दिन चीन्ह ॥

॥ चौपाई ॥

तब उरगान बोलिया भाई। मैं मोरे पुत्र भेद कछु नाहीं॥
तुम संका मन मैं मत लावो। यहि अपना तुम दास बनावो॥
तुम हम बचन करैं प्रतिपाला। कछु मन मैं नहिं लावो दयाला॥
तुम्हरी टहल करन नित आवे। दूध कटोरा नितप्रति लावे॥
सरप बचन बोला यों भाई। यह तो तुम कीन्ही लरिकाई॥
इन बातन मैं दगा बिचारे। इक दिन हानि लाभ जिव मारे
यह तो हाल हरकत कीन्हा। दूसर कान भेद तैं दीन्हा॥
जब उरगान बचन यों बोला। जानो तुम मोरा बचन अडोला॥

॥ सोरठा ॥

डोलै बचन हमार, जुगन जुगन नरके परूँ ।
यौं अस मनहिं बिचारि, जनम बिगारूँ आपनो ॥

॥ चौपाई ॥

अस उरगाने बचन उचारा । तोरे मोर बीच करतारा॥
यहि सुनि मोसे दगा न होई । सत सत बचन कहूँ मैं तोही॥
अस कहि कर घर डगर सिधारा । सरप समझि मन माहिं बिचारा ॥
लड़का फजिर दूध ले आया । उरगाने ने आप पठाया ॥
बाँबी पास कटोरा लाया । धरि कर दूध तुरत अलगाया॥
डरता सरप बाँबि से आया । दूध पियत मन संका लाया॥
चौंकत दूध पिया उन भाई । दुबिधा मन के माहिं समाई॥
लई मोहर घर लड़का आया। मारग माहिं मता उपजाया॥

॥ दोहा ॥

रोज दिवस यह्न को करे, नित को आवे जाय ।
सरप मारि मरदन करूँ, माया लेउँ छुड़ाय ॥

॥ चौपाई ॥

नित नित कौन फिरे यहि काजा । सरप मारने मति उपराजा ॥
यौं बिपरीति बुद्धि उपजाई। लड़का सरप मारने चाही॥
लड़का यहि अपने मन ठाना। दूसर कोइ सुने नहिं काना॥
उरगाने को मालुम नाहीं । लड़का यहि मन में उपजाई॥
गुनता रहा रात भर सारी । सरप मारने बात बिचारी॥
दूध फजिर को ले कर चाला। लठिया से मारूँ दरहाला॥
सोंटा लिया हाथ के माहीं। दूध धरा बाँबी पर आई॥
सौंटा सरप हाथ में देखा । चितवन चित्त चरित्तर लेखा॥

॥ दोहा ॥

सरप समझ मन आपने, बिपरीत[1] बुद्धि बिचार ।
आज उपद्रव होय कछु, यह मन माहिँ सिहार ॥

॥ चौपाई ॥

यह अस समझि बाँबि से निकरा । सोच करी मन उपजा फिकरा ॥
दीन इमान भया पितु केरा । पहिले डसूँ धरम नहिँ मेरा॥
सोँटा पहिल चलावे आई । ता पीछे काटूँ धरि खाई॥
यहि बिचार करि बाहर आया। सोँटा लड़के तुरत चलाया॥
सोँटा लगा मूड़ के माहीँ । सरप झपट लड़के को खाई॥
जहर घुमरि घन्नाटी आई । लड़का पड़ा भूमि के माहीँ॥
गया फजिर से साम कहानो । जब माता मन मेँ अकुलानी॥
उरगाने से कहा बिचारा । लड़का गया भई बड़ि बारा॥

॥ दोहा ॥

यह उरगाना समझि के, तुरत चला वोही बार ।
देख ठिकाने सरप के, सोँटा हाथ मँझार ॥

॥ चौपाई ॥

भीतर बाँबि सरप अस भाखा । हे उरगान बचन भल राखा॥
मैँ तो से पहिले कह दीना । लड़के का मोहिँ नाहिँ यकीना॥
तैँ बिस्वास किया मन मोरा। दगाबाज मन माहिँ कठोरा॥
सोँटा तोर पुत्र मोहिँ मारा। सिर मेँ चली रुधिर की धारा॥
जब मैँ झपट पकड़ के खाया। तोर मोर यह बचन नसाया॥
उरगाना रोवत घर आया। तिरिया को बरतंत सुनाया॥
तिरिया बिकल पुत्र सुन सोगा । बिछुड़े पुत्र पुर्बले भोगा॥
ब्याकुल रुदन करे कइ भाँता। पुत्र मरे सुन करि यहि बाता॥

---

(१) उलटी ।

॥ दोहा ॥

पुत्र सोग सुन कर त्रिया, ब्याकुल भई मलीन ।
रुदन करे लट तोरि के, पुत्र सोग दइ[१] दीन ॥

॥ चौपाई ॥

उरगाने से भई लड़ाई । तिरिया पुरुष माहिँ अधिकाई॥
लड़का मार मोर तैँ डारा । मैँ राजा से कहूँ पुकारा॥
त्रिय सिर खोल गई फरियादी । नीच त्रिया बुधि करी उपाधी ॥
करि बिषाद[२] राजा पर पहुँची। कहा अतंत बातनहिँ सोची॥
मोरा पुत्र पुरुष ने मारा । यह इन्साफ होय दरबारा॥
सुन राजा उरगान बुलाया । तुरत बाँधि कर पकरि मँगाया॥
तोरी त्रिया कहा कहे भाई । पुत्र पुरुष मोरा मारि सुनाई॥
जब उरगाने बचन सुनैया । न्याय नीति दरियाफ करैया॥

॥ दोहा ॥

गुनहगार दरबार का, तव[३] तकसीरीवार ।
माफ न कीजे गुनह की, तुरतै गरदन मार ॥

॥ चौपाई ॥

हे राजन के श्री महराजा । गरदन गुनह मारिये आजा॥
जो तकसीर अंग मोरे लागा । चाहे सो कीजे यहि जागा॥
साँचहि साँच कहूँ जस बीती । माने बचन मोर परतीती॥
जो कछु भया बिधी बरतंता । कहूँ प्रसंग आदि से अंता॥
कान सभा सब मिलि सुनि लीजे। मोरे बचन बाक चित दीजे॥
सुनु यह कहूँ आदि बिख्याता । साँची झूँठिपरखिये बाता॥
मैँ परदेस गयो महराजा । यह रुजगार पेट के काजा॥
कई दिवस मैँ घर को आया । मारग भई कहूँ अर्थाया॥

---

(१) ईश्वर । (२) शोक । (३) तुम्हारा ।

॥ दोहा ॥

एक सहर मारग महीँ, रहिया मोर मुकाम ।
तसमा घोड़े को नहीँ, टूटि कसन मेँ चाम ॥

॥ चौपाई ॥

आधी रात फरक जब पाई । तब तसमे की सूरति आई॥
तुरत चमार पास मैँ गैया । सोवत वाको जाय जगैया॥
तसमा एक चाहिये भाई । जो कछु कहो दाम दिलवाई॥
आधी रात बने नहिँ भाई । तुरत तयार मोर घर नाहीँ॥
चाहै सोई दाम मैँ देऊँ । तसमा तो तेरे से लेऊँ ॥
तब चमार कहे दिया न बाती। तुम चलि के आये अधिराती॥
अब तो तसमा बने न भाई । फजिर कहो तो देउँ बनाई॥
तब उरगाना समझ सुनावे । सदिये[1] घड़ी राति से जावे॥
कहे चमार तुम जावो भाई । हाल करूँ चलते ले जाई॥

॥ दोहा ॥

उरगाना उठि कर चला, आया जहँ बिसराम ।
चमड़ा लिया चमार ने, काटा तसमा चाम ॥

॥ चौपाई ॥

गोल घरी तसमे की कीन्हा । सो तगार के महिँ धरदीन्हा॥
पानी भरा तगारी माहीँ । तसमा तामैँ डाखो जाई॥
सीतकाल महिना मलमासा। पूस पड़े ठँढ होस हिरासा[2]॥
सरप कहूँ चलि आया भाई । बैठा जाय तगारी माहीँ ॥
चाम कुँडलिया धरी तगारी । सरप कुँडलिया बैठे मारी॥
फजिर भये मैँ जाय जगाया । तसमा दे अस बचनसुनाया॥
जल्दी से चमरा उठि आया। चाम चूकि के सर्प उठाया॥
चाम कुँडलिया सरप बनाई । दोनोँ एक तरह के भाई॥
सरप कुँडलिया लीन उठाई । मुँगरी से मुँह दोचा जाई॥

(१) तड़के। (२) डर ।

॥ दोहा ॥

रापी से मुँह चीरि के, चपटा दोच बनाय ।
कर दुरुस्त मोको दियो, तँग मेँ खैँचा जाय ॥

॥ चौपाई ॥

होय सवार मारग को जाई । ठहरे पाँच कोस पर गाँई॥
जहँ इक सरप बाँबि पर बैठा । देखा सरप तंग मेँ ऐँठा॥
जब उसने इक तरक चलाई । करिया नाम धराया भाई॥
जब मोको मालुम अस बोला । देखा तंग सरप को खोला॥
जब यह सरप कही सुनु भाई । मेरे प्रान पलक मेँ जाई॥
यहि बाँबी मेँ सरप रहाई । यामेँ माल बहुत है भाई॥
गरम कढ़ाय तेल करि डारे । काढ़े माल सरप को मारे॥
अस कहि प्रान तुरत तन त्यागा । मोरा लोभ माहिँ मन लागा ॥
तेल कढ़ाय गरम करि लाया । बाँबी पर लेकर चलि आया॥

॥ सोरठा ॥

सरप कहे सुनु बात, माल मरे ले जाय तैँ ।
मैँ डसि खाऊँ तोहि, बहुरि माल को पावई ॥

॥ चौपाई ॥

सरप अवाज कही सुनु भाई । मोको मारि माल ले जाई॥
मैँ तोहिँ पकरि तोरि के खाऊँ । तो रहे माल कौन से ठाऊँ॥
मैँ इक बचन कहूँ उरगाने । जो मोरी बात कहन को माने॥
दूध कटोरा नित ले आवो । एक मोहर नित की ले जावो॥
सरप कही उरगाने मानी । दूसर कान कोऊ नहिँ जानी॥
यह अस बचन भया दोउ माहीँ । किरिया कसम दोऊ मिलि खाई ॥

दूध पियाय मोहर ले आऊँ। भया अस यौं बरतंत सुनाऊँ॥
ऐसे कइ दिन बीति सिराना। तिरिया पुत्र बात यह जाना॥

॥ दोहा ॥

तिरिया यौं पूछन लगी, मोहर कहाँ से लाय।
जहाँ दूध लै जात हो, देव मोहिं ठौर बताय॥

॥ चौपाई ॥

भया एक दिन श्री महराजा। लरिका दूध सरप के काजा॥
लेकर गया हाथ में दूधा। मैं नहिं जानूं मन का सूधा॥
सौंटा लिया काँख के माहीं। सर्प पियत में चोट चलाई॥
झपटा सरप पुत्र को खाया। राजा को यह बरन सुनाया॥
राजा हुकम दीन तत्काला। लावो बाँबि खोदकरि माला॥
उरगाने ने ठाँव बताये। खोदन माल राज से आये॥
माल मँगाय राज ने लीन्हा। तुरत बिदा उरगाना कीन्हा॥
तिरिया केर मूड़ मुड़वाया। साँच बचन उरगाना पाया॥
सुन बन बाघ बचन अस कीजे। साँचे पर साहब बहु रीझे॥

॥ दोहा ॥

बंदर कहे सुनु बाघ यह, उरगाने की साँच।
सत्त बचन आधीनता, कधी न आवे आँच॥

॥ चौपाई ॥

बंदर कहे दगा यह कीन्हा। सुनु बन बाघ भेष तैं लीन्हा॥
साध भये पर कपट न छूटा। झूँठे जबर जाल जम लूटा॥
मिथ्या बचन करे अधिकाई। निस्चै जीव नरक मैं जाई॥
जो परपंची दगा बिचारे। बिना मौत परमेसुर मारे॥
उठि कर गवन करो तुम भाई। अब मैं तुमको नहिं पतियाई॥
साँच भया राजा पै जाई। सरप से बचन झूँठ भया भाई॥

कइ कइ कसम सरप से खाई। तीसर कान पड़े नहिं भाई॥
पुत्र त्रिया को तुरत सुनाई। झूठा भया बचन के माहीं॥

॥ दोहा ॥

जिन के बोले बंध नहिं, स्वारथ बचन रसाल।
डारि गले बिच मेखला, खैंचे जम धरि खाल॥

॥ चौपाई ॥

अस तैं झूठा भेख बनाया। साध बचन को दाग लगाया॥
साँचे बचन बंध जोइ प्रानी। प्रान जाय बोले परमानी॥
झूठे बचन कधी नहिं भाखे। भीतर सुध मन मैल न राखे॥
तन मन बचन बोल के साँचे। उनके बाक कढ़े नहिं काँचे॥
दुरमति दगा दाँव जिन कीन्हा। अपने भोग आप सिर लीन्हा॥
जो परलोक बिगारा चावे। सो मलीन मन बुद्धि बसावे॥
जो मतिहीन दीन नहिं जोवे। अपना जन्म अकारथ खोवे॥
जन्म मरन का करे निबेरा। सो जीवन कोइ बिरले हेरा॥

॥ दोहा ॥

जग मैं जीवन तुच्छ है, कछु करि ले निरधार[1]।
पार उतरना चहे जो, केवट समझि सुधार॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी यह कही कहानी। कौन परोजन बरनि बखानी॥
को उरगाना सरप कहावा। को बंदर बन बाघ सुनावा॥
को घोड़ा को तसमा होई। टूटा तंग माहिं कहो सोई॥
कहो को सरप पुत्र ने मारा। उलटि सरप ने पुत्र बिडारा॥
को गइ त्रिया राज फरियादी। बैठे कौन राज की गादी॥

---

(१) निर्णय।

कस इन्साफ कीन्ह निरबारा । सो स्वामी कहो बरनि बिचारा ॥
जो सम्बाद कहा परसंगा । बिना अर्थ ब्यापे नहिँ अंगा॥
सो बरतंत बरनि बतलाओ । हिरदे को भिन भिन अर्थावो॥

॥ दोहा ॥

ये स्वामी परसंग का, कहिये बरन बयान ।
जान पड़े हित समझ ये, हिरदे परख पिछान ॥

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

तुलसी कहे बचन बिस्वासा। यह तन अंदर माहिँ तमासा॥
बिन अस्थूल कहन मेँ नाहीँ। मूल मरम की भूल बताई ॥
बरनन रूप बिना कहुँ कैसे। समझि न पड़े रूप बिन जैसे॥
जो कोइ सज्जन सुरति बिलासी। भीतर भूमि लखे तन बासी॥
वे सुनि के करिहैँ निर्बारा। निर्मल ज्ञान उदै अनुसारा॥
जो मलीन मति बुधि के मैले। जिन बिन बूझे बचन उथेले[1]॥
हिरदे कुटिल कुमति की झाँई। पड़ी नहीँ सतसँग परछाँई॥
सतसँगसुना न देखा आँखी। लखी नहीँ सतगुरु मुख भाखी॥

॥ दोहा ॥

अंदर की आँखी नहीँ, बाहर की गइ फूटि ।
बिन सतगुरु औघट बहे, कभी न बंधन छूटि ॥

(उरगाने की कथा का आशय)

॥ चौपाई ॥

अब सुनु याका भेद बताऊँ । जो परसंग पूछि अर्थाऊँ॥
उरगाना उर अंतर बासी । जा का नाम कहैँ अबिनासी॥

(१) उलट दिया।

तत्त तुरी घोड़े असवारी । जा पर बैठि फिरै जुग चारी॥
तसमा तो सम रूप कहाना । टूटि नेह निज नाम भुलाना॥
चाह चमार ने फेरि बनाया॥ तसमा तन तँग तुरत कसाया॥
मँजिल मुसाफिर चल करि गयऊ । सुभ और असुभ माहिँ दरसयऊ ॥
चाह मारि सोइ चोख चमारा । कालसरपमुख तसम सँवारा॥
तिन तसमे का बरनि सुनाया । तिन का तिन में जाय समाया ॥

॥ दोहा ॥

चाह जो मारि चमार है, तसमा तन तजि आस ।
पवन सुरति आधी चढ़ी, तिन का तिन के पास ॥

॥ चौपाई ॥

भूमि भुवंग माल मन धारी । माया पर बैठा अधिकारी॥
मुख उर अंदर बास कराया । सो उरगाना पुत्र कहाया॥
लख गो[1] गुन तजि गगन उजारा । उन भुवंग सिर सोंटा मारा ॥
गगन चढ़त मुख मरम न पाया । काल सरप जबही धरि खाया ॥
इच्छा नारि त्रिया गुन साधी ।मन राजा पै गइ फिरियादी॥
उर में जाय राय नहिं रोका । माल पुत्र मन भया बिसोका॥
निज इन्साफ राय ने कीन्हा ।बासन पाँच माहिँ धर दीन्हा॥
बरतन भूमि माल जनवाया । सो राजा ने खोदि मँगाया॥

॥ दोहा ॥

धन खुदवाया राज ने, लीन्हा माल निकार ।
बंदर बाघ बयान का, सुन करि करो बिचार ॥

---

(१) इन्द्री ।

ज्ञान बाघ मुख में लिया, बंदर बिपति बिनास ।
उरगाने परसंग का, भाखा अगम अवास ॥
मन बन्दर मानी नहीं, ज्ञान बाघ बिस्वास ।
मुख मेलत मुक्ती हती, मूल मुकर के पास ॥
बाघ कहे बन्दर सुनो, उरगाने की ऐन ।
तू का जाने भेद यह, कहि भाखे मुख बैन ॥

॥ सोरठा ॥

उरगाना उर बास, नास कभी होवे नहीं ।
जुग जुग रहत निरास, अंग आस ब्यापे नहीं ॥

॥ छन्द ॥

हिरदे गगन गुरुज्ञान गति, उरगान की कोइ का कहे ।
आगे अगम धुर धाम पुर, बिसराम जुग जुग ले भये ॥
अंदर उदै भये भानु भिन्न, पिछान पद पूरन गहे ।
घट मठ मुकर में बास बस अस, आनि ऐनक में रहे ॥
सुंदर सिखर चढ़ि चीन्ह दृढ़, दुरबीन दुख सूरति सहे ।
नित परन पालि दयाल दिल, जम जाल बुधि बंधन बहे ॥
आँखी अजर घर घूमि सोइ, भल भूमि भुइँ मारग गये ।
तुलसी तरावट नैन नित हित, हेरि हिरदे को कहे ॥

॥ दोहा ॥

उरगाने का उग्र मत, सत सूरति को पंथ ।
बाघ कहे बन्दर सुनो, नहिं कोइ पावे अंत ॥
तुलसी हिरदे को कहे, उरगाने गति गाय ।
जाय जुगति जाने जोई, सोई अगम लखाय ॥

॥ चौपाई ॥

मन का तत्त तरंग न पाया । बन्दर को गति बरनि सुनाया ॥
उर में बास बसे उरगाना । बाघ ज्ञान गहे बचन बिधाना ॥

जिन जो ज्ञान गती पहिचानी। दीन भये पर भक्ति समानी॥
दिल में दीन गरीबी चावे। आप अपनपौ को बिसरावे॥
अंकुर उदै होय बड़ भागी। जिनकी प्रीति पुर्बली जागी॥
सो सज्जन रस पिये अघाई। सतसँग की महिमा जिन पाई॥
जो पूरन सतगुरु पहिचाना। वह महिमा उनहीं ने जाना॥
उर मारग अंदर में बासी। उर में गवन करे अबिनासी॥

॥ दोहा ॥

सुरति सिखर अंदर खड़ी, चढ़ी जो दीपक बार।
आतम रूप अकास का, देखे बिमल बिहार॥

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे उरगाना सोई। यहि बिधि[1] पंथ चले जो कोई॥
हर हिये हेर फेर कर आवे। सोइ उरगाना उग्र कहावे॥
बिमल बचन बातैं रस यानी[2]। मीठी मधुर पूर परमानी॥
भानु उदै हिये ज्ञान समाना। तन से तिमिर दूर अलगाना॥
रैन रबी ऊगे निसि नासी। उदै भानु जस तिमिर बिनासी॥
यौं अंदर घट में उँजियारा। परम प्रकासक दीपक बारा॥
आतम तेज तत्त से न्यारा। सो बूझै सतगुरु का प्यारा॥
हे हिरदे यहि उनकी बाती। जो होइ उरगाने का साथी॥

॥ दोहा ॥

कहे तुलसी हिरदे सुनो, गुनो जो मन के माहिं।
उरगाने की आदि यह, दीन्ही तोहि जनाय॥

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यहि बरनि सुनाई। उरगाने की निज गति गाई॥
यहि में समझ लेव सब लेखा। यहि अपने मन करो बिबेका॥

---

(१) विधि। (२) यानि=वाहन, यहाँ मतलब "भरी हुई" से है।

जब हिरदे बोले कर जोरी। स्वामी बचन बोध मति मोरी॥
भिन भिन बचन कहे अर्थाई। जब मोरि बूझ समझमेँ आई॥
अब वह बरनि बाक समझावो। पूछौँ जौन तौन दरसावो॥
स्वामी से पूछौँ इक बानी। सो बरतंत कहो सहदानी॥
अबिनासी पद कौन कहाई। उनकी आदि कहाँ से आई॥
तुम अबिनासी बर्नन कीन्हा। सो मोहिँ भाखि सुनावो चीन्हा॥
केहि घर से अबिनासी आया। बासी बरन मूल कहा गाया॥
इनकी आदि कहाँ से आई। सो मोहिँ कहिये ठौर सुनाई॥
कौन ठिकाने तन मेँ बासा। सो कहिये यह भेद खुलासा॥
आगे अंत कहाँ से आया। अबिनासी कस नाम कहाया॥
कहँ को आदि अंत घर बासी। जासे भानु किरनअबिनासी॥

अबिनाशी का निरूपन

(तुलसीदास बाच)

॥ दोहा ॥

सूरज ब्रह्म अकास मेँ, भास भूमि परकास।
किरन जीव यहि आत्मा, सब घट कीन्हो बास॥

॥ सोरठा ॥

पिंड पिंड ब्रह्मंड मेँ, अबिनासी रहे छाय।
सभी सनातन योँ कहे, आगे अगम अथाह॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी मोरे मन माहीँ। आगे भाखि कहो समझाई॥
आगे का मोहिँ भेद बतावो। स्वामी आदि समझ समझावो॥

आगे कहो कहाँ है मूला । सो मोसे कहो आदि अतूला॥

(तुलसीदास बाच)

सुनु हिरदे यह बरनि बयाना। मन चित से सुनिये दे काना॥
धुंधूकार सब्द सुन माहीं । पारब्रह्म परमातम भाई॥
धुन उनकी से आतम आया । सो अबिनासी नाम कहाया॥

(हिरदे बाच)

धुंधू सब्द कहा सुन माहीं । अबिनासी आतम गति गाई॥
यह तो समझि परी सहदानी । साहब के कहने से जानी॥
धुंधू सब्द सुन्न के पारा । उनके परे कौन घर न्यारा ॥

॥ दोहा ॥

पार कहो घर कौन है, सब्द ब्रह्म से भिन्न ।
सो मोसे बरनन कहो, आदि अंत को चिन्ह ॥

॥ चौपाई ॥

धुंधू सब्द सुन्न के आगे । कहो उनको स्वामी केहि जागे॥
तब तुलसी बोले सुनु भाई । आगे भाखूँ बरनि सुनाई॥
चौथे पद सत साहब बासा । उनके अंस ब्रह्म परकासा॥
सब्द ब्रह्म परमातम गाया । सो वहि सत्त पुरुष से आया॥
वहि मालिक सतपुरुष कहाई। तिन से आदि ब्रह्म की आई॥
सत्तपुरुष के पार ठिकाना । वहँ से है अद्भुत अस्थाना॥
जिनको कोई संत पहिचाना। अगम निगम से अंत ठिकाना॥
ऋषी मुनी कोइ भेद न पाया। कहि कहि बेद नेत गुहराया॥

॥ दोहा ॥

दस अवतारी ब्रह्म से, ब्रह्म पार के पार ।
सो का जाने भेद यह, संत कहे निर्बार ॥

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे इक बिस्मै बोले । हे स्वामी यह बात अतोले॥
हद बेहद के पार कहाई । यह नहिं कधो तुन न में आई।

आप दया करि भाखौं स्वामी। यह कहुँ भेद न अंतरजामी॥
एक भरम मोरे मन माहीं। जाको बोध कहो समझाई॥
सब मैं सासूतर बरनन बासी। पिंड ब्रह्मंड बसे अबिनासी॥
परम हंस बेदांत सुनावा। कहे यहि नास कधी नहिं पावा॥
मीमांसा यह कर्म बस गावा। यह सुनि के मोहिं
भरम समावा॥
उन अबिनासी बरननकीन्हा। यह ते कहे करमबस लीन्हा॥
इनका भेद कहो समझाई। यह दोनोँ दे। बात बताई॥

॥ दोहा ॥

बेदांती कहे ब्रह्म यह, करम मीमांसा बाक।
यामैं कहो काकी कहोँ, झूँठ साँच की साख॥

॥ चौपाई ॥

यहि संदेह मोर मन माहीं। सो सब मोको बरनिसुनाई॥
जो बेदांत कहे अबिनासी। करम माहिं की[1] भिन्न निवासी॥
तब तुलसी ने बचन सुनावा। सुनु हिरदे याका परभावा॥
काया काल करम के माहीं। उपजे मरे धरे तन भाई॥
करम भोग से काया पाया। बिना करम नहिं कायाआया॥
पाँच तत्त जड़ चेतन गाँठा। रचि बैराट करम से ठाठा॥
यहि रचना ऐसे चलि आई। बिना करम नहिं उत्पतिभाई॥
जो यहि नासमान होइ जावे। तौ कहो करम भोग कोपावे॥

॥ दोहा ॥

अबिनासी आतम कह्यो, रह्यो करम के बंद।
उलटि न चीन्हा आदि को, बिन सतगुरु की संध॥

---

(१) या।

॥ चौपाई ॥

सासूतर कहे बेद जो गावा। फिर आगे को नेत सुनावा॥
जिन की साखि सासूतर गावा। बिन जाने की साख सुनावा॥
जब बैराट मेँ आतम आया। जेहिके पाछे बेद बनाया॥
सिंधु बुंद काया मेँ बासी। याको बेद कहे अबिनासी॥
आगे सिंधु भेद नहिँ पाया। जासु बुंद बैराटी काया॥
बुंद पाँच तत माहिँ समाना। याको बेद बिराट बखाना॥
आगे बेद भेद नहिँ पाया। सासूतर मेँ कहो कहँ से आया॥
आतम अंस करम के माहीँ। सासूतर से रचना भइ भाई॥
जब जिव भया करम के संगा। दस इंद्री गुन तीन प्रसंगा॥
पाँच भूत का सूत बँधाना। जड़ चेतन आतम उरझाना॥
जहँ हिरदे योँ बंधन आया। जुग जुग फिरे करम बस काया॥

॥ दोहा ॥

रस इंद्री गुन स्वाद से, बंधन भया अजान।
जान भुलानो आदि को, बादे जनम हिरान[१]॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे बोले हे स्वामी। मन अचरज भया अंतरजामी॥
जीव मूल तुम अंत बताया। कस घर भूलि भँवर मेँ आया॥
सो मोको भाखो बरतंता। कस सब कही सनातन संता॥

जीव का मूल को भूल जाना और भोगोँ मेँ आशक्त होना

(तुलसीदास बाच)

तब तुलसी कहे सुनो प्रसंगा। पाँच तीन मेँ रचि रह्यो अंगा॥
बिषै बासना मेँ मन राचा। जक्त भोग से कोइ नहिँ बाचा॥

(१) खोया।

रस बस रीति जोति नहिँ जानी । ज्योँ माखी मद मेँ
लिपटानी ॥
योँ जिव रस माहीँ मदमाता । इंद्री सँग रस भोग सनाथा॥

॥ दोहा ॥

दस इंद्री रस भोग से, भूले मूल मुकाम ।
सदा रहे भव चक्र मेँ, उलटि न बूझै धाम ॥

॥ चौपाई ॥

मूल भूल योँ फाँस फँसानो। रँगरसभोग जनम जिव जानो॥
अब याका दृष्टांत सुनाऊँ । नकल बनाय असल दरसाऊँ॥
ज्योँ माखी मद रस मेँ राजी । योँ रस पगा जीव यह पाजी॥
यहि योँ भवसागर का लेखा। सहद कटोरा भरि करि देखा॥
योँ माखी उड़ि उड़ि के आवे। सहद कटोरे ऊपर छावे ॥
कोइ कोइ बैठि किनारे भाई। सब को देखि तमासा जाई॥
रसपर पंख कभी नहिँ लिपटे। कोइ पर पंख बचायेझपटे॥
कोइ मतिहीन गिरे जो माहीँ। जिनके पाँव पंख लिपटाईं॥

॥ दोहा ॥

एक फकीर अलमस्त जो, देखत ही मुसकान ।
योँ जहान रस भोग मेँ, पगे प्रेम रस खान ॥

॥ चौपाई ॥

जब फकीर को हँस्ते देखा। हलवाई मन कीन्ह बिबेका॥
कहा मियाँ तू क्योँ मुसकाना । हँसकर खड़े मर्म नहिँ जाना॥
जब फकीर बोला सुनु भाई। अचरज देखि हँसी उठिआई॥
जैसे सहद कटोरा माहीँ । सब माखी उड़ि बैठी आई॥
यहि लेखा खिलकत[1] का जाना । बिष रस सहद
माहिँ उरझाना ॥

---

(१) संसार ।

जो फाजिल साहब के प्यारे । सो तो देखैं बैठ किनारे॥
कोइ सोहबत अकले[1] उन माहीं । पंख पैर बचि खायँ मिठाई॥
बेसहूर अकल के ओछे । बिष रस मोह ज्ञान के पोचे[2]॥
धाय पड़े सो माहिं मिठाई । बुधि सुधि बिना पंख लिपटाई॥
कछू स्वाद मुख मैं नहिं आया । वे नाहक नर देहि गँवाया॥
ज्यों माखी रस में उरझानी। यों मतिहीन जानिये प्रानी॥
मीठे को जो मन ललचावे । वह भव सिंधु में गोते खावे॥

॥ दोहा ॥

ज्यों माखी पर पाँव से, सहद माहिं लिपटाय ।
ऐसे ही जग जीव जड़, झाड़ि बिषै रस खाय ॥

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे पूछे परभावा । सब कहैं बेद सनातन आवा॥
सब्द नाद से बेद बतावैं । सब मिलि यों करि करि गुहरावैं॥
सुन्न सब्द तुमने भी भाखी । बेद सब्द की देवे साखी॥
यामें कौन फरक है स्वामी । भाखे सब्द बेद सहदानी॥
यह निरनै मो को समझावो । जो तुम कही बेद ने गावो॥

शब्द भेद

(तुलसीदास वाच)

सुनु हिरदे यह भेद निनारा । सो का जाने बेद बिचारा॥
सब्द सब्द में अंतर भाई । जो हम कही बेद नहिं पाई॥
ओं सब्द बेद बतलावे । त्रिकुटी मद्ध माहिं से आवे॥

॥ दोहा ॥

गढ़ त्रिकुटी के मद्ध में, सब्द उठे ओंकार ।
यह पुकारि बेदन कही, सुनु हिरदे निरधार ॥

---

(१) बुद्धिमान । (२) खाली ।

॥ चौपाई ॥

ओंकार के पार ठिकाना। जहँ है सुन्न सब्द अस्थाना॥
सो कहँ संत सब्द सुख दाई। सो महिमा बेदन नहिं पाई॥
ओंकार को नेत पुकारा। यह सुन सब्द बेद से न्यारा॥
अंडा सुन्न में सैल कराई। सो वो सब्द परखिया भाई॥
ओअं सोहं जाप सुनावा। सो सब ये माया परभावा॥
वह तो सब्द सुन्न के माहीं। उलटे चढ़े अधर घर माहीं॥
सो बूझै यह बाक बयाना। सतसँग से कोइ सज्जन जाना॥
सब्द सब्द में भेद निनारा। यह परखे संतन का प्यारा॥

॥ दोहा ॥

सुन्न सब्द वह अंत है, देखे सैल सिहार।
ओंकार त्रिकुटी बसे, सो कहे बेद पुकार॥

॥ सोरठा ॥

निराकार से बेद, आदि भेद जानै नहीं।
पंडत करै उछेद[1], मते बेद के जग चलै॥

॥ छंद ॥

निराकार बेद पुकारि कहे, ओंकार से उतपति भयो।
त्रिकुटि मधि इक सब्द उठि, अस बेद ने बायक[2] कह्यो॥
सुन्न को सबद बेहद्द मैं, इन भेद से न्यारो रह्यो।
सोई सनातन संत सब, लखि देखि सुख सुंदर गह्यो॥
निराकार ब्याल[3] बिकार बायक, बेद मनमुख दुख दयो।
सब सृष्टि सासतर साखि राखे, जक्त यों बादे बह्यो॥
सुभ असुभ अंक बढ़ाय बायक, करम बस जिव बँधि रह्यो।
सुधि बुधि बिसारी आदि अपनी, मूल तजि मारग लह्यो॥

(१) तर्क, बिवाद। (२) कथन। (३) साँप।

बिधि बेद ने रचि बिस्व बंधन, बाक सुनि गुन गठि रह्यो।
अंदर हिये के तिमिर ज्योँ, योँ धुंध आँखिन पै छयो॥
जैसे कटोरा सहद पर, झुकि झुंड माखिन को भयो।
पर पाँव लपटि बिनासि काया, जीव माया बस बह्यो॥
हिरदे सुनो जग जीव अस, योँ बस बिषै में रचि रह्यो॥

॥ सोरठा ॥

मद माखी दृष्टांत, सुने समझि कोइ भेद यह।
गहे गुरन के बाक, साखि समझ हिरदे धरे॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

सब्द सब्द अंतर अरथाया। न्यारा न्यारा भेद सुनाया॥
निराकार सब्द ओंकारा। ओं सब्द बेद बिस्तारा॥
सुन में सब्द अगम से आवे। आदि पुरुष का सब्द कहावे॥
यह सब समझ पड़ी सहदानी।साहब बरनन भाखिबखानी॥
मुखभाखेपदपरखिपिछानी। सब्द सब्द की न्यारी बानी॥
सुन में सब्द संत समझाई। सो कहो राह मँजिल अरथाई॥
ओअं की कस राह पिछानी। यह भी भेद कहो सब छानी॥
ये दोनोँ की बाट बतावो।सो घर घाट मोहिं समझावो॥

॥ दोहा ॥

कौन डगर ओंकार की, निराकार के बाक।
सुन्न सब्द सत पुरुष का, बरनि सुनाओ भाख।

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

निर्गुन सब्द बेद बतलावे। सोई काल ओंकार कहावे॥
तीन लोकरचनारचि राखा। सो जोगिन का पद अभिलाखा
त्रिकुटी तेज अकास समाना। सो निर्गुन का है अस्थाना॥
मुद्रा उनमुनि धरैं समाधा। त्रिकुटी मद्ध पवन को साधा॥

इँगल पिँगल सुखमनि के माहीं। बंकनाल में पवन समाई॥
त्रिकुटी तत्त जोति दरसानी। यह जोगिन का भेद बखानी॥
जहँ है निरंकार का बासा। मन ओअं कह्यो सब्द खुलासा॥
ये जोगिन के बाक बिलासा। काल निरंजन का जहँ बासा॥
ओंकार सब्द समुझाई। हिरदे सुनियो कान लगाई॥

॥ दोहा ॥

सुन्न सब्द संतन कहा, सो समझाऊँ भेद।
खेद करम की सबन से, बसै बिन बाक अभेद॥

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे सत सब्द लखाऊँ। जोग भेद से भिन समझाऊँ॥
सुन्न माहिं से सब्द जो आवे। सोई सब्द सत पुरुष कहावे॥
चौथा पद बेहद के माहीं। सुन्न सब्द सोइ नाम कहाई॥
ओअं सब्द काल को जानो। सुन में सब्द पुरुष पहिचानो॥
सब्द सब्द का भेद निनारा। सो कहि भाखि बरनि निरबारा

मंज़िलों का भेद

अब सुन मँजिल माल दरसाऊँ। संधि माहिं परबंध[1] लखाऊँ॥
पदम सुरति तिरबेनी घाटा। जहँ होइ जाय संत की बाटा॥
आठ महल अंदर के माहीं। संत बिलास करें वोहि ठाँई॥

॥ दोहा ॥

सत्त लोक सतपुरुष का, करै सुरति से ध्यान।
सात गगन ऊपर चढ़े, जहँ सतगुरु अस्थान।

॥ चौपाई ॥

सत्त पुरुष सोइ सतगुरु गाया। जीव अंस सब वहाँ से आया॥
तीन लोक निरगुन का घाटा। उन सब रोकि जीव की बाटा॥

(१) सिलसिला।

जीव की निर्बलता—मतौं की भूल भुलैयाँ

जीव भुलाय[1] खाय उरझाई। बेबस है चौरासी माहीं॥
जो कोइ सतसँग को मन चावे। काल ब्याल[2] होइ ताहि सतावे॥
कई उपाधि करे जिव साथा। मन की पकड़ न आवे हाथा॥
भरम भुलाय उठाय फँसावे। सतसँग यासे करन न पावे॥
मन बिकराल काल होय ताके। बेरस रहे रस में नहिं पाके॥
सतमत को निंदा करि भाखे। काल मते समझावे साखे॥

॥ दोहा ॥

कलजुग माहीं मति चले, नास्तिक होवे झार।
सो सिहारि मन में रहो, बेदन कहो पुकार॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे बरनि बाक समझावे। यहि बिधि जन्म जीव भरमावे॥
पोढ़ होय सतसँग में आवे। जाके संग उपाधि उठावे॥
पानी पाहन देव पुजावे। ऐसे ले जिव को भटकावे॥
तीरथ बरत बँधावे आसा। काल कला जीवन को फाँसा॥
मुए मुक्ति फलदायक भाखा। अस गावे बेदन की साखा॥
आसा बंध होय फलदाई। जहँ आसा तहँ बास कराई॥
चेतन इष्ट दृष्टि से तोड़ी। तन मन प्रीति जड़न से जोड़ी॥
यौं भवसागर भरा अथाही। अपने घर की राह न पाई॥

॥ सोरठा ॥

भर्म रहा संसार, सार भेद पाये बिना।
सुभ और असुभ कराय, काल चक्र भरमत रहे॥

॥ चौपाई ॥

यह बेदन ने किया खराबा। आसा अंग लगाय अड़ावा॥
त्रिसना तोप अनीति बनाई। गोला लोभ चलायो भाई॥

---

(१) भूल। (२) साँप।

माया मोह कायागढ़ धारी। बिषै बन्दूक ताकि के मारी॥
बन्धन बान चले बहु भाँती। गुन गरनाल लगे दिन राती॥
गो[१] में बास गाँसि[२] मन राखे। तू मैं तोर मोर मन भाखे॥
तन मन जीव फिरे बन माहीं। भव भरमन[३] की चाल चलाई॥
मन मकरंद[४] अंध यौं आया। सब मिलि के यौं बाँधि गिराया॥
जड़ चेतन की गाँठि बँधानी। बंधन बसे चौरासी खानी॥

॥ सोरठा ॥

काया गढ़ के माँहिं, गो[१] गुन मन राजा भयो।
रह्यो काल की छाँहिं, हाय हिरस बस बँधि रह्यो॥

॥ चौपाई ॥

हिरस हरकत कीन्हा वासिल[५]। मन बिष सँग जिव किया बेहासिल॥
ऐसे जीव भया हड़काया[६]। ज्यौं कूकर हड़ हाड़ चबाया॥
सूखा हाड़ चूसि दिन राते। अपने मुख लोहू नित खाते॥
ऐसा जक्त भया हड़काना। भव रस में घर भूलि भुलाना॥
बिन सतसंग जक्त बौराना। लाभ हानि नहिं मूल पिछाना॥
मूल भूल करि सूल सिहारा। यौं ऐसे जिव बाजी हारा॥

संत शरन और सतसँग की महिमा

संत दयाल चेत करवावैं। सो सत बाक हृदय नहिं लावै॥
दाता संत बड़े सुखदाई। परमारथ देइ दृष्टि लखाई॥
लेइँ न देइँ करैं उपगारा। सो चित में नहिं नेक बिचारा॥

---

(१) इंद्री। (२) घेर कर। (३) संसार में भटकना। (४) भँवरा। (५) मेल।
(६) दुरदुराया हुआ।

॥ सोरठा ॥

यह संतन के बाक, आँखि हिये सूझै नहीं ।
कहि कहि हारे थाक, जीव कहन माने नहीं ॥

॥ चौपाई ॥

संत बिना कोइ भूल न छूटे । जासे पकरि पकरि जम लूटे ॥
बिना संत नहिँ लगे ठिकाना । सब महातमा साखि बखाना ॥
जुग चारो कहते अस आये । कहँ सब संत यही बिधि गाये ॥
तीन जुगन में नहिँ निस्तारा । कलजुग संत लेइँ अवतारा ॥
तीनौं जुग तप जोग बिचारे । राज भोग फल को अनुसारे ॥
कलजुग जुक्त संत अर्थावैं । सुन हिरदे हिये माहिँ बसावैं ॥
उनके बचन सुरति सहदानी । हिरदे में मन लावे प्रानी ॥
कहनि अवाज आज कोइ बूझै । नर तन में आँखो से सूझै ॥
होइ निरधार पार पहिचाने । सतगुरु सत्त बचन करि माने ॥

॥ दोहा ॥

संत बचन सतगुरु कहँ, गहे जो चित मन लाय ।
सहाय करे सुधि अंत की, सभी संत गुहराय ॥

॥ छंद ॥

हिरदे बिना सतसंग के, जिव जोनि में भटका फिरे ।
बिन संत के नहिँ अंत पावे, खानि में गुरु बिन गिरे ॥
करनी करम फल फूल काया, ममत माया में घिरे ।
कोइ ज्ञान बाक बिबेक कहे, अज्ञान से आगे भिड़े ॥
गुरु ज्ञान बिन बैराग उपजे, कोइ जतन मन ना थिरे ।
ऐसो कुलाहल[1] कठिन यौं, पल एक नहिँ लावे बिरे[2] ॥
करि करि जुगत सब हारि थाके, नेक नहिँ पावे जिरे[3] ।
पाले धरम जिव कर्म ये यौं, भव नहीं हिरदे तरे ॥

(१) हल्ला । (२) बिरह । (३) मर्म, भेद ।

शास्त्रों का उलझेड़ा और उन को ठीक न समझने से ख़राबी

॥ दोहा ॥

धरम बेद ने करि किया, करम बंध की टेक।
द्वैत भाव भरमाय के, नहिँ बूझा प्रभु एक ॥

॥ चौपाई ॥

करम धरम ने बन्धन डारा। पूजा पत्री नेम अचारा ॥
तीरथ बरत और चारो धामा। यह यौँ पाप पुन्न उरझाना॥
लोभ दिखाय स्वर्ग समझावा। स्वर्ग भोगि भवसागर आवा॥
पुन्न प्रभाव कहे समझाई। भोग भुगति चौरासी माहीँ॥
नर की देहि देव नहिँ पावे। स्वर्ग आस नर को बँधवावे॥
नर तन दुरलभ देव न पावे। यह नर अधम स्वर्ग को चावे॥
सुख सुर लोक मेँ अधिक कहावे। तो सुर नर देही क्यौँ चावे॥
यौँ नहिँ मूरख बूझै बानी। देव स्वर्ग तजि नर तन ठानी॥

॥ दोहा ॥

स्वर्ग छाँड़ि सब देव यह, नर तन माँगत झार।
यह बिचार मन मेँ करे, तब पावे निरधार ॥

॥ चौपाई ॥

सासतर ब्रह्म बेदांत बतावे। यहि पूजा कहो कोहि की लावे
ब्रह्म अंस का सकल पसारा। सोई ब्रह्म देहि निज धारा॥
सब्द ब्रह्म सब माहिँ बतावेँ। स्रीमत[1] ऐसे साखि सुनावे॥
पिँड बैराट रूप भगवाना। आतम रूप कहैँ परमाना॥
फिर पाहन की पूजा लावे। सोइ अज्ञानी मनुष कहावे॥
चेतन तजि बाँधे जड़ आसा। धरम टेक बस करम निवासा॥
जो कोइ निरनै कहे बुझाई। बूझै न बैन चैन चित लाई॥

---

(१) भगवान।

सो निंदा करिके मन माना। सासतर आतम कहे पुराना॥

॥ सोरठा ॥

आतम देव पुकारि के, सब पुरान गुहराय।
देहि देवल बैराट यह, पूज करो निरधार ॥

॥ चौपाई ॥

देह देवल सब साखि सुनावे। आतम रूप पतिमा[1] गावे॥
जो तैं मूरति पूजि पखाना। यह नहिं पूजन कहे पुराना॥
याकी साखि संत नहिं गावें। नहिं पुरान पूजन बतलावे॥
याकी साखि समझि मन लावे। झूँठ साँच निरनै जब आवे॥
बिन सतसंग भरम नहिं जावे। सतसँग साबुन भरम छुड़ावे॥
जुग जुग का मन मैल मलीना। बिन सतसंग न आइयकीना
सतसँग अंजन आँखि लगावे। जब कछु तिमिर नैन से जावे॥
ज्ञान उदै बिन भक्ति न होई। भक्ति बिना सब बुद्धि बिगोई॥

॥ दोहा ॥

भक्ति भाव बूझे बिना, ज्ञान उदै नहिं होय।
बिना ज्ञान अज्ञान को, काढ़ सके नहिं कोय ॥

॥ चौपाई ॥

सब सब में भगवान बतावे। चर अरु अचर माहिं समझावे॥
पाहन में परमेस्वर जाना। सब में कहे भाखि भगवाना॥
पाहन को कस पूजो भाई। पूजन तो सबही की चाही॥
खी भगवान बसे सब माहीं। सब को तजि पाहन लौ लाई॥
जो तैं इष्ट दृष्टि में देखे। सब में जान बराबर लेखे॥
मुख से एक सबन में भाखे। फिर दुरमति केहि कारन राखे॥
यह नहिं इष्ट भाव का लेखा। दुरमति दृष्टि भाव से देखा॥
सुनु उपासना की यहि रीती। एक भाव से पाले प्रीती॥

---

(१) प्रतिमा=मूर्त्ति।

॥ दोहा ॥

कूकर सूकर में कही, सब के माहिँ समान।
और बसै अलगाय के, पूजन करो पखान॥

॥ चौपाई ॥

गो गुन में मन राम कहाई। गोपी गो मन इंद्री माहीं॥
कृस्न राम को धाम कहाई। मन तन सब में बास कराई॥
सो यौं मन इंद्री रस चावे। वहि मन को सब खोँट बतावे॥
भवरस माहिँ मुकर[1] में आसा। संख चक्र गदा पद्म निवासा॥
यहि महिमा रम राम कहावे। सोइ मुकर मन सब गुहरावे॥
मन यहि बिषै बासना माहीं। सोइ सरगुन मन राम कहाई॥
चेतन राम सबन में बासा। छाँड़े असल नकल की आसा॥
पाहन मूरति मनुष बनावे। टाँकी से गढ़ि गढ़ि के लावे॥

॥ दोहा ॥

मूरति का करता कहो, को गढ़ि कीन्ह बनाय।
ताहि समझि हिरदे धरो, रहो चरन लौ लाय॥

अवतार स्वरूपों की कथा का अंतरी अर्थ

॥ चौपाई ॥

जोइ बैराट रूप भगवाना। सोइ सब के तन माहिँ समाना॥
याको छाँड़ि और मन लावे। सोइ प्रानी जड़ मूर्ख कहावे॥
जिन बैराट रचा सो न्यारा। वहि सबका है सिरजनहारा॥
निरगुन कहैँ निरंजन कोई। पिंड ब्रह्मंड रचा जिन जोई॥
जिनके आहि दसौं अवतारा। गुन तीनों सँग साथ पसारा॥
सोइ नर देहि जक्त में धारा। इंद्री सँग मन करे बिहारा॥
मन तन सँग जड़ताई माहीं। यासे परख कोऊ नहिँ पाई॥
आप अपनपो को नहिँ चीन्हा। जासे जग में रहा अधीना॥

---

(१) दर्पन।

॥ दोहा ॥

आप अपनपौ ना लखा, भखा न सिरजनहार ।
पार बिना भटकत फिरे, कस पावे निरधार ॥

॥ चौपाई ॥

जीव तो अंस पुरुष से आया । निराकार रचि कीन्ही काया ॥
जोति सरूप तेज उपजाया । योँ जग माहिँ प्रगट भइ माया ॥
जोति माहिँ से भये भगवाना । तन धरि के प्रगटे जग रामा ॥
सोइ इंद्रिन में करे निवासा । तीन गुनन में जगकी आसा ॥
सो भया मन इंद्रिन के संगा । भव रस भोग करे रस रंगा ॥
तीन गुनन से आसा धारी । आसा अँग भव बात बिचारी ॥
आसा आहि भरम को मूला । आसा करम संग सहे सूला ॥
बोले राम सबन के माहीं । जड़ तत ने योँ फाँस फसाई ॥

॥ दोहा ॥

जोति सरूपी माहिँ से, प्रगट भये भगवान ।
सोई राम मन गुन गहे, सरगुन साखि बखान ॥

॥ चौपाई ॥

आदि छाँड़ि जिव निरगुन आया । आदि अंस की
सुधि बिसराया ॥
निरगुन जोति तत्त उपजाया । पाँच तत्त सँग धारी काया ॥
काया सँग अंग में उरझाना । आदिपुरुषकीसुधिबिसराना
भूलि पुरुष निरगुन को धावे । आदि पुरुष की सुद्धि न लावे ॥
निरगुन छाँड़ि जोति के संगा । तत्त बनाय बसा योँ अंगा ॥
जोति अंस इच्छा भइ रानी । जीवभुलाय जोतिअलगानी ॥
जोति छाँड़िजिव बाहर आया । जब तत पाँच धरी नर काया
अंग अजोध्या में अवतारी । दस इंद्री दसरथ मन धारी ॥

॥ दोहा ॥

जोति जीव बिसराय के, दसरथ पुत्र कहान ।
कुमति कौसिल्या मात सँग, भरत अंग उरभान ॥

॥ छंद ॥

मन तन त्रिगुन की चाह चतुरगुन, गाँठि में बंधन भयो ।
निरगुन बरम्ह अपनी सता[1], सीता को हरि कर ले गयो ॥
रावन त्रिकुट के मद्ध लंका, बास में बसि के रह्यो ।
सत की सता सीता लये, दुख राम तन बन को सह्यो ॥
करे राम मोह बिलाप ममता, लच्छ लछमन को कह्यो ।
सीता गये का सोच सुधि, सुग्रीव चिन्ह पट[2] को दयो ॥
सन्मुख समुन्दर बाँधि मन, तजि अंग संग अङ्गद लह्यो ।
तोड़े त्रिकुट चढ़ लंक गढ़, ब्रह्म की सता सीता लयो ॥

॥ दोहा ॥

रावन ब्रह्म त्रिकुट बसे, चढ़ मन राम जो धाम ।
सता ब्रह्म सीता लई, कीन्हा पूरन काम ॥

॥ चौपाई ॥

मन सो ब्रह्म भये अबिनासी । गहे निज मूल त्रिकुट के बासी ॥
संपादी[3] समपद मन गयऊ । इन्द्री गीध[4] गीध मन रहऊ ॥
जोतितजेमनभयोभगवाना । मन गीधे सोइ गीध कहाना ॥
त्रिकुटी धाम चढ़े भगवाना । सो मन केवल ब्रह्म कहाना ॥
जो भगवान भवन भव माहीं । गो पालन गोपाल कहाईं ॥
गो में बिंध गोबिंद रहाया । तन मन गोधा गीध बताया ॥
समपद को जो चीन्हे भाई । जिनका आवागवन नसाई ॥
चेतन मूरति मन भगवाना । पूजै जड़ जड़ माहिँ समाना ॥

---

(१) सत्ता=ताक़त । (२) कपड़ा । (३) नाम गिद्ध का जिस की रामायन मैं कथा है । (२) बिँधना या पगना ।

॥ दोहा ॥

सत्त पुरुष को जीव तजि, निरगुन भवन पिछान।
निरगुन छाँड़ि जिव जोति के, मद्ध भया भगवान ॥

॥ चौपाई ॥

सो भगवान सबन के माहीं। जड़ चेतन में ठावँ ठाईं॥
एक रूप सोइ भया अनेका। मन अपने में करो बिबेका॥
आदि एक अपनी को भूला। भया अनेक छाँड़ि तत मूला॥
चर और अचर खानि के माहीं। सब में देखो राम रमाईं॥
सोइ अपने में करो बिचारा। बोले सब में सिरजनहारा॥
लख चौरासी मेँ तन धारा। उपजे मरे करम संसारा॥

सतगुरू शरन बिना निर्बार नहीँ हो सकता

सतगुरु संत सरन जो आया। जिनका आवागवन नसाया॥
सुरति डोर सतगुरु मेँ लाये। सो जिव आदि अंत पद पाये॥

॥ दोहा ॥

सतगुरु संत दयाल बिन, सब जिव काल चबाय।
बाँधि करम के बस रखे, सके न सूरति पाय ॥

॥ चौपाई ॥

बिना सुरति नहिँ लगे ठिकाना। सतगुरु संत बिना भरमाना॥
भेष संत नहिँ बूझो भाई। संतन की गति अगम अथाही
जो वे मिलेँ जीव निरबारा। बिन उनके चौरासी धारा॥
जड़वत जीव भया जड़ताई। अपनी सुधि आपै बिसराई॥
यासे भूला आदि ठिकाना। जुग जुग जीव फिरे भरमाना॥
सतसँग करने को कोइ चावे। पंडित भेष भूल भरमावे॥
नेम अचार इष्ट की बातेँ। करि समझाय कहेँ बहु भाँतेँ॥
यह सतसँग है जग के माहीं। बंधन जीव जानि उरझाई॥

॥ दोहा ॥

ईसुर कर्म परमात्मा, मन तन मूल मिलाप ।
आप अपनपौ ना लखे, सुख दुख से संताप ॥

(एक सिद्ध की कथा)

॥ चौपाई ॥

अब याका परसंग बताऊँ । मूल भूल की साख सुनाऊँ॥
गुरु चेला रमते कहुँ आई । जोगी सिद्ध रहे बन माहीँ॥
आसन कुटी धुनी के पासा । रात्रि आय जहँ कियानिवासा
फल फलहार खान को दीन्हा। भोजन कंद मूल का कीन्हा॥
भोजन करि आसन पर आये । सिद्ध प्रनाम चरनसिरनाये॥
पूछा सिद्ध कहाँ से आई । कहो कहँ कहँ की रमत कराई॥
चेला सुनि के रहा अबोला । जब रमते मैं से गुरु बोला॥
तीरथ चार धाम परसाया ।नहिँ कोइ सिद्ध नजर मैं आया॥

॥ दोहा ॥

माया भगवत की बड़ी, को पावै परभाव ।
को लीला उनकी लखे, छल बल बहुर उपाव ॥

॥ चौपाई ॥

सिध सुनिके मन मैं मुसकाना। सिद्धन का इन मरम न जाना॥
जोग करे जिन सिद्ध पिछाना। बिन सिद्धी नहिं सिद्ध कहाना॥
जब चेला बोला सिध स्वामी । सिद्धी का कहो भेद बखानी॥
मैं अजान हौं तुम्हरो बारा[1]। पूछा कहो भेद निरबारा॥
सिद्धी मैं कहो कहा दिखाई । भाखो भेद मोहिं समझाई॥
जब सिध बोल कही यह बाता। सिध सिद्धी संसार सनाथा॥
जग राजी सिद्धी के माहीँ । जो कोइ जानि परख जिन पाई॥
तिलोंकी का नाथ कहाया । सिद्धी आहि जाहि की माया॥

---

(१) अयाना।

॥ दोहा ॥

जो तिरलोकीनाथ की, माया है बलवान ।
सो सिद्धी सिध सब कहैं, आप रूप भगवान ॥

(गुरु बाच)

॥ चौपाई ॥

चेला को गुरु यौं समझावा । सिद्धी आहि कृतम परभावा॥
सिद्धी से कछु मुक्ति न होई । सिद्धी संत कृतम कहैं सोई॥
ज्यौं बाजीगर आम लगावे। परतछ अमिया आम देखावे॥
चमड़े का करि साँप चलावे। सो सब के देखन मैं आवे॥
डमरू को जो जानि बजावे। सब संसार तमासे आवे॥
कौड़ी माँग उन खेल उठाया। डमरू बट्टे झोली नाया ॥
सरप चाम का चामै भइया । अमिया आम कछू नाहिं रहिया ॥
कौड़ी कौड़ी माँगि दुकाना । यौं सिद्धी है कृतम समाना॥

॥ दोहा ॥

ज्यौं बाजी का खेल, झूँठ पसारा कृतम का ।
जब वो लेत समेट, सुपने सम जिमि खेल यह ॥

॥ चौपाई ॥

जब चेला बोले गुरुस्वामी । सत्त बात कहि अंतरजामी॥
यामें नाहिं मुक्ति को काजा। तो काहे की सिद्ध समाजा॥

(सिद्ध बाच)

सिध सुनि के मन में रिसियाया। क्या जाने सिद्धी की माया॥
फजिर उठे कोइ खेल दिखाऊँ । सिद्धी माया का परभाऊ॥
राति बीत जो भया बिहाना। सिध सिद्धी करने कोठाना॥
चेला गुरू उठे दोउ भाई । हिरदे को तुलसी समझाई॥
जग अंधा फंदा पहिचाने । जीव मुक्ति की खबर न जाने॥
मुक्ति छाँड़ि माया कृत माना। मुक्ति बिना चौरासी खाना॥

(हिरदे बाच)

॥ दोहा ॥

हिरदे कहे तुलसी सुन्यौं, गुरु चेला के बाक ।
वोहि सुनाय फिरि के कहो, सिध सिद्धी की भाख ॥

॥ चौपाई ॥

राति बीति कर भया बिहाना। सिध सिद्धी करने को ठाना
यहि बिधि तुमने कहन सुनाई । सो सब मन मोरे मैं आई॥
राति बात का कहो बयाना । सो भइ कहा समझि परमाना॥
गुरु चेला सिध की कहो बोली । सिधनेकरामातक्याखोली॥

(तुलसीदास बाच)

कहे तुलसी हिरदे सुनि लीजे । करामात मैं करनी छीजे॥
जग संसार आँखिअँधियारी। करामात लगेसबको प्यारी॥
सिध सिद्धी करिके बतलावे । करामात मैं जक्त रिझावे॥
सिध कछु कीन्ह चुटकलाभाई। बड़े जानि सबसीस नवाई॥
सिद्धी करिकरि जनम बिगारा । मुक्ति न गये चौरासी धारा॥
जग रिझाय के आप बिगाड़े । बंधन बँधे काल के गाढ़े॥

॥ दोहा ॥

सिध सवाल अपना करे, करनी केर बिगाड़ ।
कर्म भाड़ मैं भुँजि मूए, पड़े खानि की खाड़[1] ॥

॥ चौपाई ॥

जग रीझे कृतम लख माया । सिद्ध बिगाड़ आपसुख पाया॥

(हिरदे बाच)

सिध बिगाड़ जग का सुख पाया। पुत्र कलित्र और धन माया
यह माया मोह बन्धन लीन्हा। अंत मुक्तिका काज न कीन्हा॥
माया मोह बहुत दुखदाई । यह सिद्धन से सिद्धी पाई॥
सिद्धी ले बहु फाँस फँसाना । जन्ममरननहिँ लगा ठिकाना

(१) खड्ड ।

यह लइ आस बास तन छूटा। चौरासी जम धरि धरि लूटा॥
यह भी भये नर्क गति गामी। जग सुख में क्या लीन्हा स्वामी॥

(तुलसीदास बाच)

जग संसार भँवर बहि जावे। काल जाल बस यौं अस आवे॥
माया मोह बँधाई आसा। सुख संपति ममता में फाँसा॥
गये प्रान कछु संग न लीन्हा। ममता से मुक्ती नहिं चीन्हा॥
सब संसार जक्त जम जाली। करम बंद सँग फिरे बेहाली॥
ज्यौं बंदर बाजीगर बाँधा। यौं चावे जिव करम इरादा॥

(हिरदे बाच)

हिरदे कहे सबब सुनि स्वामी। दोउ बूड़े ये अंतरजामी॥
सिध बूड़े करनी लुटवाई। मोह माया सिद्धी बतलाई॥
सो सिद्धो मैं जक्त भुलाया। जुग जुग धरी करम बस काया॥
कूकर सूकर मैं लिया बासा। सब संसार जक्त की आसा॥
अब वह कथा कहो दरसाई। गुरु चेला सिध की समझाई॥
भई राति बरतंत सुनावो। कस कस इन उन का बतलावो॥

॥ दोहा ॥

इन उनकी कस कस भई, राति बात बरतंत।
सो बनाथ मोसे कहो, का निकरा फिर तंत[1]॥

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह मन दुखदाई। यह मैं तैं की मान बड़ाई॥
सिध सिद्धी कीन्हा अहंकारा। कोई चुटकला करन बिचारा
निज निसि गई भई अधिराती। कीन्ह प्रसिद्ध[2] अगिन कइ भाँती॥
चेला गुरु बैठे दोउ भाई। चर्चा सिध से करैं बनाई॥

(१) तत्त, मतलब। (२) जगाया।

चरचा मैं सिध से नहिं हारा। जब सिध मन म कपट बिचारा
प्रबल प्रचंड अगिन कुटि माहीं। जरे देखि मन संका लाई॥
चेला गुरु उठि कर घबराने। कुटी जरे सिध मरम न जाने॥
सिध हँसते अपने मन माहीं। कपट भाव उनको भरमाई॥

॥ दोहा ॥

गुरु चेला उठि कर भगे, खड़े जो मारग माहिं।
देखे सिद्ध समाधि से, उठि के भागे नाहिं॥

॥ चौपाई ॥

सिधसमाधिसेसिद्धीआई। कुवा उमँगि जल अगिन बुझाई॥
बिना डोल डोरी जल आवे। कुवा उमँगि करि कुटीबुझावे॥
सिध आसन पर बैठ रहाई। किर्तिम सिद्धी करि बतलाई॥
अगिन बुझे पर आसन आये। गुरुचेलादोउ अचरज लाये॥
यह बरतंत राति को बीता। सिद्ध दिखाई कपट प्रतीता॥

(हिरदे बाच)

यह तो भई समझि सोइ लीन्हा। आगे को कहो फिर का कीन्हा॥
फजिर भये का कहो बयाना। फिर सिध ने मन में कहा ठाना॥

(तुलसीदास बाच)

सिद्ध कहे कछु करि दिखलाऊँ। अचरज कुटी माहिं दरसाऊँ॥

॥ दोहा ॥

फिर मन मैं सिध के उठी, करि बतलाऊँ खेल।
रमते साधु सुभाव को, डारूँ नीचे मेल॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

रमते साधु सिद्ध की बाता। फिर कस भई कहो बिख्याता॥
फिर सिध ने सिधि कहा जनाई। वह भी कहो मोहिं समझाई॥
गुरु चेला कहो रहे निवासा। की उठि गये फजिर कहँ बासा॥

(तुलसीदास बाच)

जब तुलसी बोले सुनु भाई। जो जस भई कहूँ समझाई॥
उठि कर चले फजिर दोउ साधू। सिधसिद्धी करि कीन्हा जादू॥
बेनी बहे कुटी के माहीं। यह महिमा करिके दिखलाई॥
साधुन को सिध कहत सुनाई। भया अचंभा देखो जाई॥
कुटी माहिं पूरन परयागा। देखि पुनीत रहो यहि जागा॥

॥ दोहा ॥

साधु दोऊ उठि कर चले, देखि कुटी में जाय।
तिरबेनी तीनों नदी, बहती अगम अथाह॥

॥ चौपाई ॥

अचरज साधु बहुत मन लाये। भया अचंभा दोउ मुसकाये॥
सिद्ध कहे तिरबेनी न्हावो। अपना जनम सुफल करि चावो॥
साधु कहे हम बहुत अन्हाये। कलप बास करि व्हाँ से आये॥
कुटी माहिं तिरबेनी देखो। यह अचरज की बात बिसेखो॥
चेला कहे गुरू फिर न्हावे। या में कहा गाँठि को जावे॥
चेला गुरू किये असनाना। अचरज मन में भरम समाना॥
करामात सिद्धों की माया। सो सिद्धों ने करि दिखलाया॥
दोऊ गये करन असनाना। सिध सिद्धी कीन्हे पकवाना॥
रुचि भोजन सब निपुन[1] बनाये। करि अस्नान साधु पुनि आये
बैठे जब पत्तल पर जाई। सब पकवान परोसे आई॥

॥ दोहा ॥

एक फकीर चलि आइ के, ठहर कुटी के पास।
स्वाल बचन कछु ना कहे, बैठे आय उदास॥

॥ चौपाई ॥

सिद्ध कहे कहो कहँ से आये। कैसे बैठ रहे मुरझाये॥

---

(१) उत्तम।

कहे सिद्ध कुछ खाना खावो। तो साईं तुमहूँ उठि आवो॥
कछु जवाब साईं नहिं दीन्हा। सिद्ध समझ करि पत्तल लीन्हा॥
पत्तल धरि साईं के आगे। फिर खाने को लावन लागे॥
बासन ढाँकि अँगोछा डारा। ह्वाँ से भोजन काढ़ि निकारा॥
जब साईं सिध सिद्धी जानी। समझि बूझि बोलेनहिं बानी॥
पत्तल पर खाने को लाये। साईं के सन्मुख धरि आये॥
कछु फकीर ने ख्याल न कीन्हा। सिध मन मैं अचरज करि लीन्हा॥

॥ दोहा ॥

सिद्ध कहे साईं सुनो, धरा खान को पास।
सो खाना खावो नहीं, यों क्यों बैठ उदास॥

॥ चौपाई ॥

बैठे रहे कहो क्यों साईं। जो चाहिये सो देउँ मँगाई॥
मियाँ कहे हमरी सुनि लीजे। गुनह करे मुरसिद नहिं रीझे॥
बिन मुरसिद नहिं खाना खावे। खावे तो यह गुनह कहावे॥
सिद्ध कहे मुरसिद कहाँ साईं। चाहो उनको लावो लेवाई॥
साईं कहे सुनु सिद्ध गुसाईं। मुरसिद ह्याँ आवेंगे नाहीं॥
वे दाता कहो कैसे आवैं। उनके बिन खाना कस खावैं॥
सिद्ध कहे कहो कहाँ बिराजे। करम[1] करैं हमहीं पर आजे॥
साइ कहे इहाँ कहाँ आना। उनका होय कहूँ नहिं जाना॥

॥ दोहा ॥

नहीं मकान से उठि सकैं, कहूँ न उठि कर जायँ।
रहैं मकान के माहिं वे, आठौं पहर समाय॥

॥ चौपाई ॥

जब सिध पूछि कही हे साईं। मुरसिद का कहो ठौर बताई॥

---

(१) दया।

कहो वह ठाँव कौन से ठाईं। दाता मुरसिद जहाँ रहाई॥
जब साईं बोले यह बाता। ह्याँ से बैठे देख दिखाता॥
कुटी सामने बाग दिखावे। देखु निगाह नजर मैं आवे॥
खाना जबै दुरुस्त कहावे। बिन उनके खाना नहिं खावे॥

(सिद्ध बाच)

बाग मियाँ ह्याँ कहँ बन माहीं। कोसन पहाड़ उजाड़ दिखाई॥
जब बोले उठि के यों साईं। कुटी सामने बाग दिखाई॥
बड़ा बाग सन्मुख दिखलावे। देखो बाग नजर में आवे॥

॥ दोहा ॥

तुम तो सिद्ध समाधि से, देखो नजर पसार।
दूर नहीं यहि पास है, मुरसिद मियाँ हमार॥

(सिद्ध बाच)

मियाँ बाग सन्मुख कहो, देखूँ नैन निहार।
कोसन पहाड़ उजाड़ है, यह कहो कौन बिचार॥

॥ चौपाई ॥

सिध को भया अचंभा भारी। यह कहो कौन कला बिस्तारी॥
करि निगाह देख चहुँ फेरा। दिखे न बाग भूमि सब हेरा॥

(साईं बाच)

बदन जहीर[1] आँखि अँधियारी। ऐनक एक फकीर निकारी॥
सिध लगाय तुम इसमें देखो। बगिया सन्मुख सुरति बिबेको॥
देकर ऐनक सुरति लगाई। बगिया तुरत नजर में आई॥
सिध मन में जब करे बिचारा। यह कहो कौन खेल करतारा
बैठा करि जुग जुग से ध्याना। सिद्धी भई और नहिं जाना॥
दृस्टिकधीबगिया नहिं आई। अचरज ऐनक माहिं देखाई॥

---

(१) दुबला।

॥ दोहा ॥

ऐनक के परभाव से, बगिया दृस्टि दिखान ।
रहे जुगन यहि भूमि पै, पड़ी नहीँ पहिचान ॥

॥ चौपाई ॥

कहे सिद्ध साईँ तुम दाता । देखी नहीँ सुनी यह बाता॥
सो ऐनक मेँ खोलि दिखाई । बड़े भाग से ऐनक पाई॥
उठे सिद्ध साईँ के साथे । बगिया देखन को सँग जाते॥
कुत्ता सँग लाये थे साईँ । सो पतरी[1] कुत्ते ने खाई॥
गुरु चेला भोजन को खावे । देखन सिद्ध बाग को जावे॥
चलिभये मियाँ सिद्ध के आगे । ऐनक सिद्ध आँखि मेँ लागे॥
चले बाट ऐनक से आवे । बिन ऐनक नहिँ बाट दिखावे॥
ऐनक भई सिद्ध को दाता । ऐनक से सब खेल दिखाता॥

॥ दोहा ॥

जब सिध ऐनक आँखि से, देखे निरखि निहार ।
सब जब तो बगिया लखे, नहिँ तो झाड़ उजाड़ ॥

॥ चौपाई ॥

कुत्ता पीछे भूँकत आवे । सिध सँग जान मियाँ घुरकावे॥
पहुँचे जाय बाग के पासा । बगिया चौकी सिंघ निवासा॥
उठि कर सिंघसिद्ध परडाका । जब फकीर सिंघ ऊपर ताका॥
पंजा धरे सीस पर जाई । सीतल सिंघ रहा मुरझाई॥
बगिया के मारग को चाले । सिद्ध बाग पर कीन्हा ख्याले॥
बाग बृच्छ फूली फुलवारी । देखा बाग बड़ा बन भारी॥
आस पास बगिया चहुँ फेरा । बहे बेनी अति गहिर गँभीरा॥
मैँ बेनी क्रितिम दिखलाई । यह तो बेनी अगम अथाही॥
सिध अचरज मन माहिँ बिचारा । मैँसिद्धोकोदेखिनिहारा॥

---

(१) पत्तल ।

॥ दोहा ॥

जोग कस्ट करि करि थके, अचरज ऐनक माहिँ।
सहज भाव देखत रहूँ, समझ पड़े केहि ठाँहिँ॥

॥ चौपाई ॥

आगे चले बाग के नाके। जोगी जती सिद्ध जहँ थाके॥
द्वार बाग पर रहै भुजंगा[१]। वह डसि खाइ जाइ जेहि अंगा॥
भीतर से सन्मुख को दौड़ा। फन फटकारि फिरे चहुँ ओरा॥
बड़े बड़े जाने नहिँ पावैँ। जोगी सिद्ध तुरत बगदावैँ[२]॥
साईँ देखि भुजँग फन डारा। भीतर बाँबी माहिँ सिधारा॥
साईँ सिधि सँग आगे चाले। परिमल[३] उठे सुगंधि रसाले[४]॥
भँवर पोहप से बहु लिपटाने। निर्मल गंध बास उरझाने॥
परम पुनीत भूमि बहु भाँती। सोभा कहूँ कही नहिँ जाती॥
निर्मल बास भूमि सब जागे। बृच्छ बृच्छ सूरज फल लागे॥

॥ दोहा ॥

तरु तरु फल सूरज लगे, कहा कहुँ तेज प्रभाव।
उदै होत रबि बृच्छ पै, कहा कहुँ अगम अथाह॥

॥ चौपाई ॥

सूरज फल बृच्छन पर होई। सोभा कहा कहे भल कोई॥
आगे गये बाग के माहीं। मियाँ कहे सुनियो सिध भाई॥
तुम तो रहो ठहर यहि जागे। मैँ साईँ से मिलिहौँ आगे॥
हुकुम हुए पर मैँ ले जाओँ। साईँ दाता दीदार कराओँ॥
साईँ साईँ के पास सिधारे। साहिब मियाँ अगम से न्यारे॥
मंदिर मठ अंदर के माहीं। मद्ध बाग मुरसिद को ठाईं॥
मिले मुरीद पैर सिर दीन्हा। मुरसिद तुरत अंग में लीन्हा॥
कदमअली[५] कहे मुरसिद प्यारे। सिध आये इक करन दिदारे॥

---

(१) साँप। (२) भस्म जायँ। (३) अचरजी सुगंध वाली। (४) रस की खानि। (५) नाम साईँ यानी मुरीद का।

मुरसिद कहैं उन्हें ले आवो। तुम दहसत[1] दिलमें जिन खावो॥
तुरत सिद्ध को लीन्ह बोलाई। कदमअली ले पहुँचे जाई॥

॥ दोहा ॥

सीस कदम ऊपर धरे, सिद्ध लिया अपनाय।
मियाँ कहे मुसकाय के, क्योंकर पहुँचे आय॥

॥ चौपाई ॥

हाथ जोड़ के सन्मुख ठाढ़े। कदमअली बन्धन से काढ़े॥
मेहर बड़ी मुरसिद ने कीन्हा। दीन्ही काढ़ि एक दुरबीना॥
सिध मुरसिद का देखे नूरा। हीरा चमके तेज जहूरा॥
मुरसिद कहे सुफल कर लेखे। यह दुरबीन ताकि कर देखे॥
सिध ने ले दुरबीन चढ़ाई। ऐसे बाग अनेक दिखाई॥
बाग पार जब ताकन लागे। सहर एक सब बागन आगे॥
सिद्धि वहाँ की क्या कहे कहेनी। महलौं महल बहे तिरबेनी॥
सिध अपनी सुधि बुद्धि बिसारी। यह तो गति ऐनक से न्यारी॥

॥ दोहा ॥

जब ऐनक को देखि कर, कहते अगम अथाह।
यह दुरबीन के सामने, ह्याँ कछु लगे न थाह॥

(कदमअली वाच)

॥ चौपाई ॥

सुनो सिद्ध यह बात गुसाईं। सँग ऐनक देकर ह्याँ लाई॥
हम मुरसिद दीदार करावा। जब मुरसिद के दरसन पावा॥
सँग मुरसिद होइ बाट बतावैं। बिन सँग मुरसिद बाट न पावे॥
दे दुरबीन वे आगे चालैं। तो वोहि देख पड़े सब ख्याले॥
सँग उन बिन दुरबीन लगावो। तो आगे नाहिँ जाने पावो॥
बिन हम सँग तुम ह्याँ नाहिँ आये। सँग मुरसिद ले जायँ लिवाये॥
इत दुरबीन उत ऐनक भाई। संग बिना कोई नाहिँ जाई॥

---

(१) भय।

मोको हुकुम करेँ सँग जाऊँ । तो सँग जाय खेल दिखलाऊँ॥
बिना हुकुम नहिँ पैर उठाऊँ। मुरसिद मेहर हुकुम से जाऊँ॥

॥ दोहा ॥

सिध कहे कदमअली सुनो, तुम बतलाया ठौर ।
बिना मिले तुम से जभी, कहूँ और की और ॥

॥ चौपाई ॥

तुम तो हो गुरु पीर हमारे । तुम्हरी दया देख दरबारे॥
इहाँ कहो को आने पावे । तुम सँग भये बिना को आवे॥
अब तुम कहो सोई बिधि जानूँ । हुकुम होय सोई मैं मानूँ॥
तुम लाए दुरबीन दिखाई । इतनी सैल मेहर से पाई॥

(कदमअली बाच)

अब तुम को इक अकिल बताओँ। ले दुरबीन मियाँ पै जाओ॥
मियाँ कदम पर सीस लगावो।हुकुम करें सोइ सीस चढ़ावो॥
ले दुरबीन मियाँ पै आये। जेहि बिधि कदमअली फरमाये॥
जस जस कही वही बिधि कीन्हा। ले दुरबीन कदम धरि दीन्हा

॥ दोहा ॥

सिद्ध सुनो मुरसिद कहे, ऐनक औ दुरबीन ।
दोनोँ के मध में रहो, ल्यो मकान को चीन्ह ॥

॥ चौपाई ॥

जब दुरबीन के ऊपर जावे । संग लिवाय तुम्हें ले आवे॥
अब तुम जाव कुटी के माहीँ। ऐनक को नित निरखो भाई॥
नित की सैल करो दरबारा । तुम हर वक्त करो दीदारा॥
हुकुम लिया सिध मुरसिद केरा। कीन्हा आय कुटी पर फेरा
गुरु चेला भोजन करि बैठे । देखा जाय कुटी में पैठे॥
जो ऐनक मुरसिद से पाई । देखे नित ऐनक के माहीँ॥
दर्सन नित मुरसिद के पावे। सीतल भये दया से आवे॥
मारग गये गुरू औ चेला । नित नित आवे जाय अकेला॥

॥ दोहा ॥

नित प्रति दरसन मैं करूँ, नहिं कोइ परख पिछान ।
अगम बास नित कर बसूँ, नहिं पावे कोइ जान ॥

॥ चौपाई ॥

इक दिन गये सिद्ध दरबारा । चलो मियाँ कहे करो दिदारा ॥
सँग ले मियाँ सैल करवाई । भाखूँ रमक रेखते माहीँ ॥

(रेखता)

अकल बुजरुग[1] सिखाते हैँ । कोई दिल मैँ न लाते हैं ॥
मझब मुरसिद बतावेगा । अरस[2] अक्सीर[3] पावेगा ॥
समझ कोइ नूर का प्यारा । जहूरे मेँ दिखा सारा ॥
सुई के द्वार नाके मेँ । ऊँट जाते हजाराँ हैँ ॥
पुखत[4] हैँ छाँह धूपोँ के । लदे दो दो सँदूकोँ के ॥
उसी संदूक मेँ अंडे । वजन भारी चले ठंडे ॥
उन्हीँ अंडोँ के अंदर मैँ । मिहीँ आकार अंडा है ॥
कहूँ उनमान क्या उसका । अगर दाना जो खसखस का ॥
उसी दाने में है रसता । अँदर उसके सहर बसता ॥
करे कोइ ख्याल फहमोदे[5] । जिगर अंदर खुलैँ दीदे ॥
अगर आदम कोई इक था । हकीकत सुन खड़ा हँसता ॥
दिलोँ मेँ ना हुई हाजम[6] । जिकर सुनना नहीँ लाजिम ॥
सिया सुन्नी[7] न था मालुम । बिगर ईमान का आलिम ॥
उसे सुन के हुआ ताजुब । कही उन बात बेवाजिब ॥
कुफर बेफहम[8] फरमाई । नहीँ आकीन[9] मेँ आई ॥

---

(१) बुज़ुर्ग=बड़े, पूज्य । (२) अर्श=सहस दल कवल । (३) कीमिया, रसायन । (४) पक्के । (५) समझदार । (६) हाज़मा । (७) मुकलमानोँ की दो विरुद्ध तड़ शीआ और सुन्नी हैँ । (८) नादान । (९) यक़ीन ।

दहरिया का मझब[1] जाना । मुकर[2] यह कहन कुफराना॥
नहीं इतबार आता है । ऊँट सुइ में समाता है॥
एक पोस्ते के दाने मैं । सहर क्योंकर समाना है॥
अगर यह बात सुनने में । तसल्ली दिल न लाता है॥
सुभा[3] सुन के समाती है । नहीं अंदर में आती है॥
सरे[4] रसते चले जाते । मारफत[5] के मँजिल माते॥
अगर उसकी सुनी बातैं । किया कायल कई भाँतैं॥
मुकर कर थे खुदा बंदे । कही दुनिया के ये गंदे॥
अकिल तरकीब ठहरावैं । सबर सोहबत खबर पावैं॥
कभी यह बात नहिं कहना । सबब सुन के समझ लेना॥
बुजुर्गों के बचन माहीं । असल को ऐन[2] ठहराई॥
उसे बूझे समझ करके । खुलैं आँखैं मुकर करके॥
जभी ईमान में आवे । अकीदा[6] ऐन में पावे॥
मिले महरम[7] उसी का जो । कहैंगे हाल ज्यों का त्यौं॥
अबे सुन ले समझ सारी । कहूँ मैं बात बिस्तारी॥
दरक्खत[8] एक है उलटा । कधी होवे नहीं सुलटा॥
अगर वह पेड़ अड़बड़ का । तले डाली अधर जड़ का॥
फूल फल भी उसे आवे । मरम महरम वही पावे॥
उसी में वह गुपत[9] रसता । सुबह से साम लौं चलता॥
वहीं सुई द्वार दिखलावे । ऊँट जाते नजर आवे॥
अंड खसखस का दाना है । कहूँ उस का बयाना है॥
पहाड़ आड़े कहे तिल के । फरक परदे खुले दिल के॥
दिखे दुरबीन में रसता । मुकर अंदर सहर बसता॥

---

(१) नास्तिक का मज़हब। (२) आईना, ऐनक, अंतर दृष्टि। (३) शुबहा। (४) ऊपर, सीधे। (५) ज्ञान। (६) विश्वास। (७) भेदी। (८) पेड़। (९) गुप्त, छिपा हुआ।

अगर कोइ तलब[1] को चावे। तिलोँ का खोज कर पावे॥
वहीँ खसखस का दाना है। तिलोँ के मेँ समाना है॥
पेड़ इतना बड़ा बड़ का। उसी बीजे मेँ से कढ़ता॥
डार और पात जड़ छिकला। मिहीँ दाने मेँ से निकला॥
अगर सुन के खबर खोजे। ऐन के भेद मेँ चोजे[2]॥
कहैँ तुलसी रसीला है। अजब कुदरत की लीला है॥

॥ ग़ज़ल ॥

खसखस के दाने के अंदर सहर खुदा का बसता है।
करुद करे ऐनोँ के तिल मेँ वही तो उस का रसता है॥
रूह रकाने मेँ ठहरावे सोई मुकर मेँ धसता है।
सैल करे दाने के भीतर सो मुरसिद अलमसता है॥
कहे मझब[3] मासूक की बातेँ डगर दिलोँ के बसता[4] है।
बड़ा माल जोरावर घर का किया खरीदी ससता है॥
बाँके बड़े खड़े लड़ने को सोई कमर को कसता है।
बिना मेहर महरम की सोहबत योँ क्योँ नाहक पचता है॥

॥ चौपाई ॥

बिन मुरसिद सब पचि पचि हारे। मुरसिद ने सब काज सुधारे
सिध सिद्धी बहु किये अनेका। पुनि पाया मुरसिद से ठेका॥
मुरसिद मुकर जाल से फेरा। मेहर नजर करि मुझ पर हेरा॥
जब देखा यह खेल बिलासा। छूटी यहि जहान की आसा॥
अब दिल रहा मझब के माहीँ। झूठ जहान खिलकत की राही॥
सब सरियत[5] ने राह बिगारा। मियाँ मारफत किये दिदारा[6]॥
जो सरियत को सच करि जाने। बिना मूल सब भूलि हिराने॥
यह जहान की उलटी बातेँ। मारैँ मुकर फिरिसते लातेँ॥

(१) जिज्ञासा। (२) बिलास। (३) मज़हब। (४) बस्त = मध्य। (५) कर्म-कांड। (६) दर्शन।

॥ सोरठा ॥

खिलकत जहान मुकाम का, झूँठा है सब काम ।
मुरसिद महरम मझब से, देखि मुकर को माँज ॥

॥ चौपाई ॥

कहे तुलसी हिरदे सुनु बानी । सिध ऐनक दुरबीन पिछानी ॥
ऐनक औ दुरबीन लगाई । रमक[1] रेखते माहिँ सुनाई ॥
सिध सिद्धी संसार भुलाना । महरम भया मझब जब जाना ॥
जब हिरदे पूछा अहो स्वामी । ऐनक का कहो भेद बखानी ॥
ऐनक कौन कहो समझाई । भाखो आप परख नहिँ पाई ॥

(तुलसीदास बाच)

सब संतन ने भाखि सुनाई । सब्दन माहिँ दीन्ह दरसाई ॥
ऐनक आँखि ताकि कर देखा । जब कछु सूझा बूझ बिबेका ॥
हिये नैन दुरबीन दिखावे । जब आगे को सुधि बुधि पावे ॥
बहुत नजीक दूर बहु भाई । जाने मँजिल राह जिन पाई ॥

॥ दोहा ॥

यह ऐनक है अलख की, खलक पार के पार ।
जिन निहार अंदर लखे, भखे सो भेद अपार ॥

॥ चौपाई ॥

जब सतगुरु की किरपा पावे । तब यह बात समझ मेँ आवे ॥
बिन सतसंग न पावे चीन्हा । सतसँग से लखि आइ यकीना ॥
सो सतसँग सब्दन के माहीँ । संत सब्द में दीन्ह दिखाई ॥
जो कोइ बिरही जिव अनुरागी । परमारथी पीर[2] के रागी ॥
सो सज्जन मारग कछु पावे । पचि पचि मरैँ हाथ नहिँ आवे ॥
जब कहुँ उनकी मेहर मझावे[3] । दया करैँ वहि जीव छुटावे ॥

---

(१) ज़रा सी । (२) गुरू । (३) खोजे ।

बिरह बिना नहिँ दया समावे। दयाधरन को जगह न पावे॥
कहो कैसे उपकारी लेई। सुने समझ नहिँ हिरदे जेई॥

॥ दोहा ॥

सुनि समझे सत सजन की, मन दौड़ावे आप।
कहो खाप[1] कैसे लगे, ले ले लंबी नाप॥

॥ चौपाई ॥

मन से भर्म निकरि नहिँ पावे। कहो कैसे सतसंग समावे॥
आसा अंग भंग करि देई। यौँ भीतर रस जाय न जेही॥
यह मलीन मन चोर न पावे। जासे खोज खतम होइ जावे॥
अपनी आसा बुझे न भाई। सतगुरु को दे दोष लगाई॥
मारग यह संतन का झीना। बिन सतसँग नहिँ आय यकीना॥
मेहर धरन को बरतन चावे। सो तो नेक समझ नहिँ आवे॥
बिरह होय तो भर्म उड़ावे। जग की रीति नेक नहिँ भावे॥
बिरह उदास आस के आगे। मन से भर्म रोग जब भागे॥

॥ दोहा ॥

को तो यौँ करनी करे, की सतगुरु बिस्वास।
बास बसे सूरति चरन, तन मन होय निरास॥

॥ चौपाई ॥

जो अपना मन मूल न माने। तो सतगुरु के चरन पिछाने॥
मन बस नाहिँ चरन नहिँ जाने। यौँ सब जग यह भाड़ भुँजाने॥
सतगुरु साखि सबै मिलि गावे। अपने हिरदे साँचि जो आवे॥
जब बिस्वास बसे मन माहीँ। कर्म करज से लेत सुरझाई॥
यह वह दोनोँ मेँ इक नाहीँ। बेबिस्वास आस के माहीँ॥
जब हिरदे बोले हे स्वामी। दो मेँ एक परख ले छानी॥

---

(१) ज़मीन की पैमाइश का एक पैमाना लकड़ी का जो कान तक ऊँचा होता है।

एक तरफ बिन फरक न होवे। फिर समझे सिर धुनि के रोवे॥
आज काज करि होय अकाजा। फिर नहिं यहि नर तन को साजा॥

॥ दोहा ॥

चेतन तन में ज्ञान है, जड़ तन में अज्ञान।
फिर भरमत भव भव फिरे, नहिं कछु लगत ठिकान॥

॥ चौपाई ॥

यह सब बात परखिया बानी। स्वामी के कहने से जानी॥

(तुलसीदास बाच)

हे हिरदे सतगुरु केहि काजें। जीव उबारन जक्त बिराजें॥
हंस होय जो करे पिछाना। उन सतगुरु की महिमा जाना॥
आदि अनादि संत गुहरावें। सतगुरु बिना पार नहिं पावे॥
सास्त्र कहे और बेद पुराना। महिमा सतगुरु बरनि बखाना॥
और महातम सब गुहरावें। सतगुरु साखि समझि सब गावें॥
कोटिन जिव यह करे उपाई। सतगुरु बिना राह नहिं पाई॥
जुग जुग भरमत भये अनेका। जिन भाखा जिन सतगुरु ठेका॥

॥ दोहा ॥

सतसँग अरु संतन कही, स्रुति पुरान गुहराय।
सास्तर सब महातम[1] कहे, सतगुरु का रे उपाय॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

स्वामी कही समझ मैं कीन्हो। बानी बचन बूझि के लीन्हो॥
जो जो बाक काढ़ि मुख भाखा। कहने मैं कछु फेर न राखा॥
कोइ मूरख जिव मन में लावे। हिये सतगुरु का बचन बसावे॥
अब वह बहुरि कहो समझाई। गुरु चेला बरतंत सुनाई॥
रमत गये पर फिर भी आये। सिद्ध कुटी पर बहुरि सिधाये॥
तुलसी हिरदे को रे सुनाये। बीत मास नौ पीछे आये॥
कुटि के माहिं जाइ के बैठे। बहुत प्रेम करि सिध से भेंटे॥

(१) महिमा ?

सिध सब पूछि कहो कुसलाता[1]। करी बहु रमत[2]
लगा कछु हाथा॥
तीरथ करे ज्ञान सुनि आये। नहिं कछु और हाथ में लाये॥
ज्ञान सुने अज्ञान न भागा। तीरथ करत फिरे बहु जागा॥
चेतन तो तुम चीन्हे नाहीं। जल में न्हात फिरे बहु ठाँई॥
चेतन तन में बास कराई। जाका खोज कीन्ह नहिं भाई॥

॥ दोहा ॥

चेतन ब्रह्म बैराट यह, आतम तन के माहँ।
तुम बाहर खोजत फिरे, जासे लगा न थाह॥

॥ चौपाई ॥

रमता में से गुरु कहे बोली। तुम कछु भेद बतावो खोली॥
सिद्धी को हम मानैं नाहीं। राह मुक्ति की कहो समझाई॥
भटकत फिरे भये हैराना। मुक्ति राह की जुक्ति न जाना॥
पैर थके कछु मरम न पाया। भरमत फिरे दुखित भइ काया॥
अब कछु जीव मुक्ति दरसावो। अब हमरी भव भटक मिटावो॥
जब सिध कहे मुक्ति कहा कीजे। जीवत जीव मुक्ति लखि लीजे
मुक्ति जुक्ति से भेद निनारा[3]। सो पावे संतन का प्यारा॥
सतसँग करे तोड़ के आपा। धनुवाँ खैंचि चढ़ावे चाँपा[4]॥

॥ दोहा ॥

सुरति चाँप धनुवाँ चढ़े, कढ़े गगन के पार।
ऐनक आँखि लगाय के, देखे बिमल बहार॥

॥ चौपाई ॥

सो ऐनक मुरसिद से पावे। मेहर करैं जब दया बसावे॥
जब ऐनक में पैने[5] भाई। मुक्ति जुक्ति की कौन बड़ाई॥
देखे सैल अपूरब आँखी। मुक्ती ज्ञान रहे सब थाकी॥

---

(१) खैरियत। (२) जात्रा। (३) न्यारा। (४) ताँत जिसे खींच कर धनुष चढ़ाते हैं। (५) धस जाय।

(रमते बाच)

सो ऐनक किरपा करि दीजे। जिव मारग को कारज कीजे॥
हमहूँ बहुत फिरे चहुँ ओरा। जीव जतन कछु किया न ठौरा॥
मुख तुम्हरे ऐनक सुनि पाई। मेहर दया सिध करो गुसाईं॥

(सिद्ध बाच)

अबआये बिसराम करैये। फजिर हुए पर फिरकछु कहिये॥

(रमते बाच)

बेनी कुटी करन असनाना। अज्ञा करो हुकुम परमामा॥

(सिद्ध बाच)

॥ दोहा ॥

सिद्धी की बेनी हती, सो तो गई बिलाय।
डोल पड़ा है कूप पर, यहि जल लेवो न्हाय॥

॥ चौपाई ॥

सिद्धकहे कछु भोजन कीजे। फल फलहार खान को लीजे॥

(रमते बाच)

जब भोजन पकवान कराये। अब कहो कहा कहा लेआये॥

(सिद्ध बाच)

वे सिद्धी से थे पकवाना। सोगया छूटि सिद्धि सरधाना[1]॥
अब ऐनक का ऐन बिचारा। या में देखि जीव निरबारा॥
रमते ने भोजन जब कीन्हा। रहे रात बिसराम जो लीन्हा॥
फजिर हुए पर पूछि पचारी। ऐनक की कहो बात बिचारी॥
कदमअली इतने में आये। हमसे मिले बहुत सुख पाये॥
कदमअली से अरजी कीन्हा। रमते पर करो मेहर यकीना॥

॥ दोहा ॥

कदमअली बोले सुनो, बिन सोहबत नहिँ हाथ।
सोहबत करि पावे सोई, नहीँ सहज की बात॥

---

(१) भाव।

॥ चौपाई ॥

जब रमते पैरौं सिर दीन्हा। मुरसिद सरन तुम्हारो लीन्हा॥
होइ दयाल ऐनक दिखलावो। मेरे तन की तपन बुझावो॥
कदमअली के दिल में आई। दे ऐनक उस को दिखलाई॥
दो ऐनक दोनों को दीन्ही। देखो परखि पड़े जो चीन्ही॥
ऐनक दोनों दीद लगाई। देखो सो कहो भाखि सुनाई॥
गुरु को तौ संसार दिखाना। खिलकत दीदे दीद जहाना॥
जितने मनुष देह तन धारे। सो दीखे पसुवत[1] सब सारे॥
मनुष देह तो दोइ दिखाई। की ये सिध अरु दूजे साईं॥

॥ दोहा ॥

गुरु ऐनक को देखि कर, भाखि कहे ये बैन।
नहिं जग में नर देह दिखे, कूकर काग बेचैन॥

॥ चौपाई ॥

जो रमते गुरुको दिखलाना। समझ पड़ा सोइ भाखि बखाना
नर चोला खिलकत में नाहीं। खोज किया ऐनक के माहीं॥
यह तो गुरु ने भाख बयाना। अब चेले का सुनो बखाना॥
सबदिस पहाड़ जले चहुँ फेरा। अगिन प्रचंड चक्र का घेरा॥
उसके मधि में जाइ घिराना। नहिं हूआँ बाट पड़े पहिचाना॥
मैं घबरायफिर्‌यौं चहुँ ओरा। नहिं भागन की बाट बहोरा॥
देखा कूप एक वहि ठाईं। उस में कूदन को मन चाही॥
उस के मधि में बैठ भुजंगा[2]। खावन चहे फाड़ि मुख अंगा॥

॥ दोहा ॥

जो भुजंग रहे कूप में, खाने को मुख फाड़।
कहा बिचार मन में करौं, ले धरि चाभे डाढ़॥

---

(१) जानवर सरीखे। (२) साँप।

॥ चौपाई ॥

यह निहार चेला कहे बानी । और कहूँ जो परख पिछानी॥
एक उपाय कीन्ह मन माहीं । कूप किनारे दूब रहाई॥
दूबै पकड़ि कूप लटकाना । बृच्छ किनारे रहे निदाना॥
वहिं पर मधु माखी का छाता । उड़िके लागि बदन को खाता॥
सहद बूँद टपके मुख माहीं । मीठा लगे और दुखदाई[1]॥
चूहे जुगल कूप के माहीं । हर दम दूब कतरि के जाई॥
जब मैं गिरा कूप के माहीं । सो बरतंत कहा समझाई॥
यह ऐनक में दिखा तमासा । सो कहूँ भाखि आप के पासा॥

॥ दोहा ॥

साईं सुनि मुसकाय के, कही बहुरि इक बात ।
दोनों गुरु चेले सुनो, समझ लिया बिख्यात ॥

॥ चौपाई ॥

गुरु चेले बोले हे साईं । यह कछु समझ माहिं नहिं आई॥
यह कहो कौन चरित्तर देखा । याका कहिये बरनि बिबेका॥

(कदमअली वाच)

ऐनक दोउ हमको दे दीजे । फिर हम कहँ बरनि सुनि लीजे॥
ऐनक दोउ दोनों ने दीन्हा । कहिये साईं भेद यकीना॥
जब साईं बोले सुनि लीजे। हम कहँ कहन माहिं चित दीजे॥
नहिं ऐनक सतगुरु पहिचाना। सो नर मरे पसू भये खाना॥
जो नर मरि नर देहि न पावे । चौरासी पसु कीट समावे॥
दो नर दिखे साईं सिध साँगी[2]।सो सतगुरु मुरसिद अनुरागी॥

॥ दोहा ॥

मुरसिद सतगुरु चरन का, आठ पहर अनुराग ।
सो भागे भवचक्र से, उनको लगा न दाग ।

---

(१) सुखदाई ? (२) संग या साथ में ?

॥ चौपाई ॥

यह मुद्दा गुरु को दरसाया। कदमअली कहि कर समझाया॥
अब चेले को समझ सुनाई। तुमहूँ समझि लेव यहि भाई॥
यह संसार पहाड़ चौफेरा। जरे अगिन जिव चहुँ दिसि घेरा॥
गृह भवकूप पड़े घबराई। काल सरप मुख खाने चाही॥
दूबि उमिर भुगते दिन राती। निस दिन चूहे कतरि यहि भाँती॥
माखी[1] महू[2] फोड़ करि खावे। सो सब जानो कुटँब कहावे॥
सहद बूँद बिष रस की मीठी। इतना सुखी यह और न डीठी
यहि चेला समझो मनमाहीं। भव रस सुख दुखभुगतै भाई॥

॥ दोहा ॥

चेले का मन भ्रमित है, सुनि फकीर की बात।
कछु जादू दिखलाय के, फेरि करै उतपात॥

॥ चौपाई ॥

चेला आय गुरू से कहिया। जादू खेल फकीर दिखइया॥
यहि गुरु के मन माहिँ समानी। दोनोँ की अक्किल भरमानी॥
मसलत[3] करि राते उठि भागे। यह फकीर के मुँह नहिँ लागे॥
बड़े फजिर भिंसारे भाई। गये रमते कहुँ खोज न पाई॥
तुलसी कहे साँचि नहिँ आई। यह हिरदे मन भरमे भाई॥
कोइ दिन संग साँचि नहिँ आवे। कहो दो दिन में कहा समावे॥
भरम रहे जुग जुग के माहीँ। तिनको साँचि कौन बिधि आई
कर्मट[4] करि सब जनम बिताया। इष्ट करा जड़ सँग लौ लाया॥

॥ दोहा ॥

सो सुधरैं नहिँ जन्म लौं, धारैं जन्म अनेक।
भेष जतन करि के मरे, टारी टरी न टेक॥

---

(१) मक्खी। (२) शहद। (३) सलाह। (४) कर्म।

॥ चौपाई ॥

इक हिरदे संदेह उठाई। भर्म भया मोरे मन माहीं॥
आगे जो संबाद सुनाये। वा में बेद पुरान उठाये॥
ह्याँ तुम थापे बेद पुराना। साखि वही को भाखि बखाना॥

(तुलसीदास वाच)

हे हिरदे तैं समझ न लाई। या का भेद कहूँ अरथाई॥
बंधन बेद जक्त को कीन्हा। भव भुगते जिव जन्म अधीना॥
जीव मुक्ति नाहिं राह बताये। तीरथ बरत इष्ट उरझाये॥
यहि कारन से खंडन कीन्हा। हिरदे हिरदे[1] बूझ यकीना॥
बेद पुरान साख ह्याँ दीन्ही। याका भेद लखो चित चीन्ही॥

॥ सोरठा ॥

संत साखि सतगुरु कहैं, बेद कहे यहि भाख।
साखि देइ सतगुरु सही, यहि मुकाम पर थाप॥

॥ चौपाई ॥

सतगुरु की जहँ साखि सुनाई। जहँ बेदन को थापे भाई॥
जग बंधन भवसागर डारा। जहँ बेदन को काढ़ि निकारा॥
यह बैठी हिरदे मन माहीं। नाहिं कहुँ और रीति समझाई॥
हिरदे कहे समझि मन माहीं। सो तो समझि समझ में आई॥
एक अचंभा अचरज माहीं। सो पूछौं कहो भाखि सुनाई॥
तीनों ऐनक आँखि चढ़ाई। सिध गुरु चेले तीनों लगाई॥
तीन भाव तीनों ने देखा। यह अचरज मन भया बिबेका॥
ऐनक में सिध बगिया देखी। गुरु ऐनक नर पसू बिबेकी॥
चेले को भवकूप दिखाना। तीनों कहैं तीन सरधाना[2]॥

॥ दोहा ॥

यह मोको कारन कहो, तीनों तीन बखान।
ऐनक में इक रस चही, यह कहो भेद बयान॥

---

(१) मन में। (२) भाव।

(तुलसीदास बाच)
॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह बरनि सुनाऊँ। यह निर्बार तोहि समझाऊँ॥
ऐनक देने की बिधि भाई। यामैं करो समझ चित लाई॥
जो सिध ऐनक आँखि लगाई। बाट चले छूटन नहिँ पाई॥
हर दम ऐनक छुटी न राही। यहि बिधि बाग दिखाना भाई॥
गुरू ज्ञान के मान समाने। उनको नर पसुवत दरसाने॥
रमत रहे अज्ञानी चेला। यह भवकूप लखा उन खेला॥
यों तीनों के तीन बिचारा। यामैं समझि लेव निर्बारा॥

(हिरदे बाच)

को गुरु ज्ञान अज्ञानी चेला। कहो स्वामी यह समझ दुहेला[1]॥

(तुलसीदास बाच)
॥ दोहा ॥

गुरू ज्ञान को समझि ले, चेला जग अज्ञान।
यह दोनों यहि बिधि कहैं, लीजे परखि पिछान॥

॥ चौपाई ॥

यहि बिधि कहे गुरू अरु चेला। नहिँ परखे वह आदि अकेला

(हिरदे बाच)

स्वामी कही सकल निर्बारी। संसय मोरी दूर बिडारी॥
आदि अंत सुनि के भ्रम भागा। बरनि कहो रहि एक न जागा॥
मैं स्वामी चरनन बलिहारी। निरनय छाने भरम निकारी॥
बड़े भाग अंकुर के मोरा। चरन चीन्ह प्रभु सरन बहोरा॥
मैं अति कुटिल अधम अन्याई। तुम्हरे दरस परस को पाई॥
संत दरस अघ पाप नसावैं। अस अस कहैं सभी मिलि गावैं॥
आदि अंत भाखा बरतंता। पावे कहा बिना को संता॥

॥ सोरठा ॥

आदि अंत की बात, पूछी सो बरनन करी।
भिन भिन कह्यो लखाव, स्वामी को कहे भेद यह॥

(१) कठिन।

॥ छंद ॥

हिरदे कहे परनाम करि, इतनी कहन तुम ने कही ।
मतिहीन मैं आधीन होय, कहुँ कोउ मरक[1] काढ़ी नहीं ॥
कोइ परखि चीन्ह प्रबीन जन, जिन पकड़ करि गाढ़ी गही ।
जग भेष टेक टेकाव जड़, मन मूढ़ नहिँ कीन्ही सही ॥
यह अगम छान बखान बरनन, कहूँ नहिँ ऐसी भई ।
तुमने कही सब भाँति भिन भिन, कोइ नहीं बाकी रही ॥
हिये में हरखि कोइ परखि पुर, धुर धाम धरि मन में लई ।
सतगुरु कृपा निज नाम नौका, निधि[2] निरखि मानो मही ॥
यह संत की बेअंत बोली, बिमल होइ बूझा चही ।
जग कर्मकांड उफान[3] उर धरि, धरम बस बाँधे दई[4] ॥
सतसंग के रँग रमक रस अस, बिमल मग बाचे सही ।
हिरदे कहे अनरूप आतम, अंग के अंदर मही[5] ॥

(तुलसीदास बाच)

॥ दोहा ॥

तुलसी हिये हुलसी लखो, हिरदे हरख बयान ।
जानि जन्म नर तन यही, कही सब संत बखान ॥
नर तन में निरनै लखे, रखे सुरति समझाय ।
चाह रखे नहिँ अंत की, सतगुरु सब्द समाय ॥
नर तन दुरलभ ना मिले, खिले कँवल रस माहिँ ।
खाय अमर फल अगम के, जो सतगुरु सरनाय ॥
रतन जतन सागर मही[5], कही जो निरनै छान ।
ब्यान बरन बिखयान सब, बूझे बचन प्रमान ॥
हिरदे से तुलसी कहे, रहे अगम के पार ।
जो निरधार संतन कही, सो सतगुरु पद सार ॥

---

(१) मड़क की बात, नुकता । (२) ख़ज़ाना । (३) उबाल यानी मैल (४) कर्म । (५) मथा ।

॥ इति ॥

संतबानी पुस्तकमाला

जीवन-चरित्र हर महात्मा के उन की बानी के आदि में दिया है

बुल्ला साहिब का शब्दसार ... ... ≈
केशवदास जी की अमीघूँट ... ... -)
धरनीदास जी की बानी ... ...
मीरा बाई की शब्दावली ... ... ।-)
सहजो बाई का सहज-प्रकाश ... ... ।-
दया बाई की बानी ... ... ≈)॥
संतबानी संग्रह, भाग १ [साखी] ... ... १)
[प्रत्येक महात्मा के संक्षिप्त जीवन-चरित्र सहित]
" " भाग २ [शब्द] ... ... १)
[ऐसे महात्माओं के संक्षिप्त जीवन-चरित्र सहित जो भाग १ में नहीं दी है]

दूसरी पुस्तकें

लोक परलोक हितकारी [जिसमें १०२ स्वदेशी और बिदेशी संतों, महात्माओं और विद्वानों और ग्रंथों के ४३५ चुने हुए बचन पहले भाग में और २३० दूसरे भाग में छपे हैं] } ऐतिहासिक सूची सहित ॥)
अहिल्याबाई का जीवन चरित्र अँग्रेज़ी पद्य में ... ≈)

नागरी सीरीज़

सिद्धि ... ... ॥)

दाम में डाक महसूल व वाल्यू-पेअबल कमिशन शामिल नहीं है वह इसके ऊपर लिया जायगा।

मनेजर, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद।